ISSN 0973-3914

RESEARCH JOURNAL OF SOCIAL AND LIFE SCIENCES

HALF YEARLY, BILINGUAL (English/Hindi)

A REGISTERED REVIEWED/REFEREED RESEARCH JOURNAL
Indexed & Listed at: Ulrich's International Periodicals Directory©,
ProQuest, U.S.A (Title Id: 715205)

अंक XXX-XXXI हिंदी संस्करण वर्ष-15 दिसंबर 2019 - मार्च 2020

PEER-REVIEWED RESEARCH JOURNAL
UGC JOURNAL NO.(OLD) 40942
IMPACT FACTOR 3.928

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802,Year-1997
www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0973–3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 40942
Impact Factor 3.928
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest,
U.S.A. Title Id : 715205

अंक-XXX-XXXI   हिन्दी संस्करण वर्ष-15   दिसम्बर 2019- मार्च 2020

प्रधान सम्पादक

प्रोफेसर ब्रजगोपाल
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड से सम्मानित
profbrajgopal@gmail.com

ऑनरेरी सम्पादक

डॉ. अखिलेश शुक्ल
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा की मुख्य शोध पत्रिका
म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत
पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1. डॉ. अरविंद जोशी (आचार्य) बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी।
   arvindvns@outlook.com
2. डॉ. रामशंकर (आचार्य) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर।
   rs_dubey@yahoo.com
3. डॉ. डी. एस. राजपूत (आचार्य) डॉक्टर हरीसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय सागर।
   drdiwakarrajeut@rediffmail.com
4. डॉ. बी. के. सिंह (आचार्य) महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी।
   imdrbrajesh.kv@gmail.com
5. डॉ. अंजली श्रीवास्तव (आचार्य) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा।
   anjali_apsu@rediffmail.com
6. डॉ. बी. पी. बडोला (सेवानिवृत्त (आचार्य)) कांगड़ा हिमाचंल प्रदेश।
   bpbadola@gmail.com
7. डॉ. आभा सक्सेना (सह प्राध्यापक) अग्रसेन कन्या स्वशासी महाविद्यालय वाराणसी।
   drabhasaxena7@gmail.com
8. डॉ. प्रज्ञा मिश्रा (आचार्य) महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट।
   pragyamishramgcgv@gmail.com
9. डॉ. आशीष सक्सेना (आचार्य) इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद उत्तर प्रदेश।
   ashish.ju@gmail.com
10. डॉ. ज्योति उपाध्याय (आचार्य) विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन मध्य प्रदेश।
    drjyotiupadhyay11@gmail.com
11. डॉ. प्रमिला पुनिया (सह प्राध्यापक इतिहास) राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर राजस्थान।
    pramilapoonia@rediffmail.com
12. डॉ. रामलला शुक्ल (प्राध्यापक) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान रीवा। ramlalashukla666@gmail.com
13. डॉ. मृदुल जोशी (आचार्य) गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार।
    dr_mriduljoshi@yahoo.com
14. डॉ. के. के. शर्मा (प्राध्यापक) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान रीवा। sharmakktrs@gmail.com
15. डॉ. शैलजा दुबे (प्राध्यापक) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय भोपाल। shailjadubey70@yahho.in
16. डॉ. प्रमिला श्रीवास्तव (आचार्य) शासकीय कला महाविद्यालय कोटा राजस्थान।
    dr21pramila@gmail.com
17. डॉ. जयशंकर शाही (आचार्य) अलवर राजस्थान।
    jayshankarshahi@gmail.com
18. डॉ.एन. पी. त्रिपाठी (सेवानिवृत्त (आचार्य)) रीवा मध्य प्रदेश।
19. डॉ. राजेश भट्ट, एच एन बी केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखंड।
    rajeshbhatt11@gmail.com

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract,Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन-

- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेज (ISSN-0973-3914) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है, जो मानव संसाधन मंत्रालय तथा पंजीयक समाचार पत्र एवं पत्रिका, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा पंजीकृत हैं।
- शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री, प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग–अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष मार्च, जून, सितंबर तथा दिसंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है। शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक, मोबाइल नं., ई–मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50–100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट– पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010 (फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए–4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

- **researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com**
- शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई–मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00

-सदस्यता शुल्क -		
अवधि	**व्यक्तिगत सदस्यता**	**संस्थागत सदस्यता**
एक वर्ष	2000.00	2500.00
दो वर्ष	2500.00	4000.00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच–रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय नगद जमा की स्थिति में 75 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

लेजर कम्पोजिंग: अरविन्द कुमार व्यास
रीवा (म.प्र.)

संपादकीय कार्यालय

186/1 विन्ध्य विहार कालोनी, रीवा- 486001 (म.प्र.)
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

*कोरोना वायरस से पैदा हुई महामारी ने संपूर्ण विश्व और प्रशासन को झकझोर कर रख दिया है, इससे हमारी प्रशासनिक कमजोरियां एवं स्वास्थ्य संबंधी कमजोरियां भी दृष्टिगोचर हुई हैं। इन कमजोरियों ने भविष्य में होने वाले वैश्विक संकट से हम को सचेत भी किया और अब वैश्विक समुदाय इस संकट से जूझ कर कर आगे आने वाली समस्याओं से निपटने की तैयारी कर रहा है। कोरोना वायरस विश्वमारी (2019–20) की शुरुआत एक नए किस्म के कोरोना वायरस (*Covid-19*) के संक्रमण के रूप में मध्य चीन के वुहान शहर में 2019 के मध्य दिसंबर में हुई। बहुत से लोगों को बिना किसी कारण निमोनिया होने लगा और यह देखा गया की पीड़ित लोगों में से अधिकतर लोग वुहान सी फूड मार्केट में मछलियाँ बेचते हैं तथा जीवित पशुओं का भी व्यापर करते हैं। चीनी वैज्ञानिकों ने बाद में कोरोना वायरस की एक नई नस्ल की पहचान की जिसे* Covid-19 *प्रारंभिक पदनाम दिया गया। इस नए वायरस में कम से कम 70 प्रतिशत वही जीनोम अनुक्रम पाए गए जो सार्स–कोरोनावायरस में पाए जाते हैं।*

अब यह प्रश्न उठने लगा है कि क्या आने वाले भविष्य में ग्लोबलाइजेशन यानी वैश्वीकरण की परिभाषा बदलने जा रही है ? क्या वैश्वीकरण का वर्तमान स्वरूप भविष्य में अपने मूल स्वरुप को खो देगा ? क्या विभिन्न वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं के बीच में जारी समन्वय, कोरोना के फैलने से पहले की ही तरह मौजूद रहेगा ? क्या संभव है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था में चीन को लेकर एक नई रणनीति और चर्चा देखी जा सकती है ? कोविड–19 के गंभीर संकट ने विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) और यूनाइटेड नेशन सिक्योरिटी काउंसिल (यूएनएससी) जैसी वैश्विक संस्थाओं की भूमिका पर भी सवाल उठाएं है। हाल ही में डब्ल्यूएचओ ने ताइवान को वैश्विक स्तर पर सुझाव देने के क्रम में एक राष्ट्र के रूप में जिस तरीके से नजरअंदाज किया है, यह डब्ल्यूएचओ को चीन के दबाव में आने का प्रत्यक्ष उदाहरण बन चुका है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के बयानों और कार्यों से ऐसा प्रतीत होने लगा है कि सन 1948 में बना यह बहुप्रतिष्ठित संगठन आज कहीं न कहीं चीन को दुनिया के सामने बेनकाब होने से बचाने की कोशिश कर रहा है। अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप ने तो आगे बढ़ते हुए यहां तक कह दिया कि डब्ल्यूएचओ के अध्यक्ष टेड्रोस अधानोम चीन के हाथों खेल रहे हैं। ऐसी घटनाओं को तब और बल मिला जब चीन ने कोविड–19 जैसी वैश्विक महामारी पर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में चर्चा पर रोक लगा दी है, जिससे इस प्रतिष्ठित वैश्विक संस्था की गंभीरता पर प्रश्न उठ रहे है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में अपने वीटो पावर के दम पर भारत के फैसलों में दखलअंदाजी करने वाला चीन आज कोविड–19 पर वैश्विक चर्चा के लिए तैयार नहीं है। यह संयुक्तराष्ट्र की भी एक विफलता ही है कि जिस महामारी के चलते पूरे विश्व में लाखों लोगों की जान खतरे में है। ऐसे गंभीर मुद्दे पर अपने नियमों के चलते आज मानव कल्याण के नाम पर बनी यह संस्था चर्चा तक नहीं करा पा रही हैं।

इस वायरस ने दुनिया और समाज के नजरिए को ही बदल दिया है। सरकारी विभाग के अधिकारियों और कर्मचारियों को लाकडाउन के दरमियान शत– प्रतिशत वेतन भत्ता मिलता रहा है, कुछ अंतरराष्ट्रीय कंपनियों ने अपने कर्मचारियों को 80 फीसदी तक वेतन दिया, कुछ ने 50 फीसदी तक वेतन दिया और जो रोज का काम करने वाले मजदूर और श्रमिक थे, उनको कंपनियों ने लाकडाउन के दरमियान काम से बाहर कर दिया। 1500 से 2000 तक किलोमीटर की यात्रा कर पैदल यहं श्रमिक अपने घर की तरफ चल पड़े।

प्रश्न यह है की भविष्य का समाज कैसा होगा ? सरकारें और समाज कोरोना जैसी महामारी से किस तरीके से संभलेंगे ? वैश्विक राष्ट्रीय प्रादेशिक और लघु एवं कुटीर उद्योगों को इस महामारी ने बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाया है। इस नुकसान के बावजूद आज आवश्यकता इस बात की है कि सरकार मानवीय अर्थव्यवस्था की तरफ भी कदम बढ़ाये।

ऐसी महामारी को नियंत्रित करने में जन सामान्य की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। वायरस को रोकने के लिए जो दिशा निर्देश समय–समय पर जारी किए जाते हैं, उनका हमें शत–प्रतिशत पालन करना चाहिए। क्योंकि हमें स्वयं की सुरक्षा, अपने परिवार की सुरक्षा और समाज की सुरक्षा की चिंता होनी चाहिए। यदि लोगों का आपसी संपर्क कम होगा तो निश्चित रूप से सरकारों को भी इस महामारी को नियंत्रित करने में सहायता प्राप्त होगी। सरकारों को लाकडाउन खोलना मजबूरी है। क्योंकि यदि लाकडाउन नहीं खोला गया तो आर्थिक गतिविधियां ठप पड़ जाएगी और उत्पादन नहीं हो सकेगा, तो चीजें बिकेंगी नहीं और नौकरियों में गिरावट आएगी। हमें एक एंटीवायरस इकोनामी की आवश्यकता है। थ्यह इकोनामी ऐसी हो कि अर्थव्यवस्था पर भी बहुत बुरा प्रभाव ना पड़े और जनसामान्य के ऊपर भी बहुत बुरा प्रभाव ना पड़े। हम उन चीजों का उत्पादन प्रारंभ करें जो हमारे लिए अति आवश्यक है और जिन्हें हम अपने देश में तैयार कर सकते हैं। इससे हमारा उद्योग जगत आगे बढ़ेगा। इसका एक लाभ पर्यावरण को सुरक्षित करने में भी हुआ है, हेल्थ केयर सेक्टर के उत्पादन पर हमें अति ध्यान देने की आवश्यकता है और इसे हमें अर्थव्यवस्था का एक अंग भी बनाना चाहिए। कोरोना वायरस ने हमें सिखा दिया कि हमारे लिए क्या आवश्यक है और हमें क्या करना चाहिए। इस दिशा में प्रत्येक व्यक्ति समाज और सरकार को सोचना अति आवश्यक है।

(प्रोफेसर ब्रजगोपाल)
प्रधान संपादक

डॉ. अखिलेश शुक्ल
सम्पादक

अनुक्रमणिका

1. ग्रामीण नेतृत्व के उभरते नवीन प्रतिमान (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) 09
अखिलेश शुक्ल

2. बुन्देलखण्ड का जल संकट, कारण एवं समाधान (चन्देल कालीन जल संग्रहण व्यवस्था के विशेष सन्दर्भ में) 19
चन्द्रमौलि शुक्ल

3. मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन (दुर्ग एवं भिलाई शहर के मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों के संदर्भ में) 25
शबनम, के.पद्मावती

4. गुप्तोत्तरकालीन भारत में आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ : एक विमर्श 31
अमोल कुमार

5. भारत में प्रतिलिप्याधिकार के दृष्टिगत विभिन्न आयामों का विश्लेषणात्मक अध्ययन (भारतीय विधि के विशेष संदर्भ में) 36
एस.पी. सिंह
आनन्द कुमार द्विवेदी

6. रीवा जिला की भूमि पोषण वहन क्षमता 43
आलोक कुमार राय
संदीप कुमार पटेल

7. स्वच्छता एवं महिला सशक्तिकरण (जांजगीर शहर के संदर्भ में) 47
मंजुलता कश्यप

8. भारत में प्रतिलिप्याधिकार के प्रवर्तन की चुनौती एवं उनका समाधान (साक्षात्कार आधारित विधिक अध्ययन) 57
एस.पी. सिंह
आनन्द कुमार द्विवेदी

9. दुर्ग नगर पालिका निगम में कार्यरत नियमित एवं अनियमित चतुर्थ वर्गीय महिला कर्मचारियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन 68
शैमीना परवीन, अमरकांत पाण्डेय

10. वृद्धों की समस्यायें: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण 73
गजानन मिश्र

11. मुरिया जनजाति की शुरूआती सांस्कृतिक अवस्था (बस्तर जिले के विशेष संदर्भ में) 80
रूपिन्दर जीत कौर, किरण

12. महिलाओं के विकास में महिला एवं बाल विकास विभाग की प्रमुख योजनाओं के उपलब्धियों का अध्ययन (छत्तीसगढ़ धमतरी जिले के कुरूद ब्लॉक के विशेष संदर्भ में) 87
वेणु साहू, के. पद्मावती

13. समाज में वैधानिक परिवर्तन–डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का दृष्टिकोण 92
विमला सिंह, सुषमा श्रीवास्तव

14. वैकल्पिक न्याय परिदान व्यवस्था के अंतर्गत लोक अदालत की भूमिकाः एक विश्लेषात्मक अध्ययन 97
एस.पी. सिंह, सविता मिश्रा

15. मऊगंज विकासखण्ड : भूमि उपयुक्तता वर्गीकरण 105
आलोक कुमार राय
संदीप कुमार पटेल

16. गुप्तकाल संस्कृत साहित्य का स्वर्णयुग : एक ऐतिहासिक विश्लेषण 110
अमोल कुमार

17. युवाओं में नशे की समस्या (रीवा नगर के विशेष संदर्भ में) 116
महेश शुक्ला
मंजुल मयंक त्रिपाठी

18. स्वच्छता अभियान में सामाजिक संगठनों की भूमिकाः समाजशास्त्रीय अध्ययन (रीवा शहर के विशेष सन्दर्भ में) 124
अखिलेश शुक्ल
शिवबिहारी कुशवाहा

19. गाँधी जी और उनकी अहिंसात्मक दृष्टि 130
रिचा मिश्रा

20. रीवा जिले में लोक अदालतों की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 134
एस.पी. सिंह
सविता मिश्रा

21. गुप्त युग की वेशभूषा 140
चन्द्रमौलि शुक्ल

22. भारतीय चिंतन परम्परा में कबीर की वैचारिकी 145
नरेन्द्र कुमार बौद्ध

23. अज्ञेय द्वारा लिखित 'गैंग्रीन' कहानी की सम्यक आलोचना 152
मधुकर राठोड

24. संस्कृतसाहित्ये स्वात्मव्यवस्थायाः विवेचनम् 158
प्राची आर्या

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

ग्रामीण नेतृत्व के उभरते नवीन प्रतिमान
(रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

* अखिलेश शुक्ल

सारांश- *ग्रामीण अंचलों में सामन्तवादी और सवर्णवादी नेतृत्व का जो ढ़ांचा परम्परागत रूप से विद्यमान था, वह स्वतंत्रता के पश्चात परिवर्तित हुआ है और पंचायत राज संस्थाओं के विकास के साथ अब वह समाप्त हो गया है। अब न जन्मजात प्रभुत्व वर्ग का वर्चस्व है और न वर्णगत नेतृत्व है, बल्कि अब राज्य निर्वाचन आयोग की निगरानी एवं निर्देशन में निष्पक्ष निर्वाचन हो रहे हैं। अब जन प्रतिनिधि वह होता है, जो चुनाव में विजयी होता है। नेता के नाम पर वह ग्रामीण समाज का शासक नहीं बल्कि जनता का सेवक बनता है। उसे ग्रामीण-समाज के उत्थान के लिये कार्य करना होता है। उसे सामान्य व्यक्ति से कहीं अधिक कार्य करना पड़ता है। जन सामान्य की समस्याओं के निराकरण के लिए उसे सरकार के समक्ष समस्यायें रखनी पड़ती है, संघर्ष करना पड़ता है और उसे अपने कार्यों से यह प्रमाणित करना होता है कि वह वगैर किसी भेदभाव के सम्पूर्ण ग्रामीण-समाज की उन्नति के लिये कार्य कर रहा है। उसे स्वयं को जनता का सेवक प्रमाणित करना होता है। यह तथ्य ही उसे ग्रामीण-समाज का नेतृत्व प्रदान करता है। इस अध्ययन में साक्षात्कार अनुसूची, सहभागी-अवलोकन, केन्द्रित साक्षात्कार की अध्ययन प्रविधि का उपयोग किया गया है। इसके अलावा शोध से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करने के लिये अवलोकन पद्धति को भी अपनाया गया है। इस अध्ययन में 200 ग्रामीण जनप्रतिनिधियों- पंच, सरपंच, उप-सरपंच तथा जनपद तथा जिला पंचायत के सदस्यों का साक्षात्कार लिया जाकर तथ्य संग्रहित किये गये हैं। इनके अलावा इस शोध में जनता के विभिन्न वर्गों से 200 ग्रामीणजनों का साक्षात्कार भी ग्रामीण नेतृत्व से उनकी अपेक्षाओं के संदर्भ में लिया गया है। साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी, अभिलेखों एवं अन्य स्रोतों से प्राप्त तथ्यों पर यह शोध कार्य पूर्ण किया गया है। द्वैतीयक स्रोत के रूप में प्रकाशित शोध सामग्रियों, समाचार पत्रों, पुस्तकों, सरकारी सांख्यिकीय सूचनाओं और अन्य प्रकाशित तथा अप्रकाशित माध्यमों से संकलित किये गये हैं।*

मुख्य शब्द- पंचायत, विकेन्द्रित शासन व्यवस्था, त्रिस्तरीय पंचायत

आधुनिक प्रजातांत्रिक व्यवस्था में पंचायत की भूमिका को महत्वपूर्ण माना गया है। अत्यधिक केन्द्रीयकरण की स्थिति में होने वाले शक्ति के दुरूपयोग को रोकने के लिये विकेन्द्रित शासन व्यवस्था आवश्यक है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने आजाद भारत

* प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

में पंचायतों के जरिये ग्राम स्वराज्य लाने की कल्पना की थी।[1] उन्होंने कहा था, हर एक गांव में लोगों की हुकूमत या पंचायत का राज होगा, उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। राष्ट्रपिता की इसी कल्पना को साकार रूप देने के लिये संविधान में 73वाँ संशोधन कर त्रिस्तरीय पंचायतों के गठन की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया गया है। इस संशोधन अधिनियम की मूल भावना यह है कि एक बार जनता अपने निर्वाचक मण्डलों से प्रतिनिधियों को चुन ले तो राज्यों की राजधानियों या देश की राजधानी की जगह शक्ति का स्रोत पंचायत घर बन जायेगा। इस 73वें संविधान संशोधन के पश्चात पूरे देश में मध्यप्रदेश ऐसा प्रथम राज्य है, जहाँ पंचायत राज अधिनियम 1993 को लागू किया जाकर, उसी के अनुसार एक स्वतंत्र राज्य निर्वाचन आयोग के माध्यम से चुनाव कराकर त्रि-स्तरीय पंचायतों की स्थापना की गयी है। प्रदेश सरकार पंचायतों को अधिकार सौंपकर उन्हें सत्ता का वास्तविक केन्द्र बनाने के लिये संकल्पित हैं। विगत वर्षों में पंचायतों को अनेक अधिकार प्रदान किये गये हैं। वास्तव में भारतीय लोकतंत्र की बुनियादी अवधारणा इस बात पर आधारित है कि, शासन व्यवस्था के प्रत्येक स्तर पर जनता की अधिक से अधिक भागीदार हो। इस हेतु हमारे संविधान निर्माताओं ने प्रारंभ से ही इस तरह की व्यवस्था रखी है कि शासन व्यवस्था में आम जनता की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष भागीदारी बनी रहे।[2] व्यवस्था में अतिरेक न आये इस हेतु हर पाँच वर्ष बाद आम चुनावों की व्यवस्था की गई है। संघीय लोकतांत्रिक व्यवस्था के तहत् संचालित भारतीय शासन व्यवस्था की सबसे निचली इकाई ग्राम पंचायत और सबसे बड़ी इकाई संसद है। इस तरह भारतीय लोकतंत्र का मूल आधार ग्राम पंचायत है, जिस पर लोकतांत्रिक ढांचे का समूचा स्वरूप स्थापित है।

अध्ययन क्षेत्र- इस शोध का अध्ययन क्षेत्र रीवा जिला है। भारत के मध्य में स्थिति रीवा जिला स्वतंत्रता पूर्व रीवा रियासत का मुख्य भाग था, जहाँ राज्य की राजधानी थी।[3] स्वतंत्रता के बाद नवगठित विंध्यप्रदेश में भी इस जिले की यही स्थिति रही। रीवा जिले में 827 ग्राम पंचायतें हैं।[4]

ग्राम पंचायतों के कार्य- ग्राम पंचायत द्वारा पंचायत क्षेत्र के आर्थिक, सामाजिक विकास एवं ग्रामीण विकास के लिए ग्राम पंचायत निधि में गुंजाईश के अनुसार अधिनियम के अध्याय 6 की धारा 49 में उल्लेखित कार्य करती हैं। इसके अतिरिक्त ग्राम पंचायत द्वारा क्षेत्र के आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय के लिए वार्षिक योजना तैयार करना और उसे जनपद पंचायत की योजना में सम्मिलित करने हेतु प्रस्तुत करना भी उनका कर्तव्य है। आधारभूत नागरिक सुविधाओं की योजना की तैयारी एवं उनका प्रबंधन करना, ग्रामसभा के अनुमोदन से विभिन्न कार्यक्रमों के अधीन हिताधिकारियों को चुनना, ग्राम पंचायत के भीतर विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करना, निष्पादित करना एवं उनका पर्यवेक्षण करना भी ग्राम पंचायत के कार्य होंगे।[5] ग्राम पंचायतें किसी विधि द्वारा ग्राम पंचायत को सौंपे गए कार्यक्रमों, कार्य एवं परियोजनाओं के निष्पादन को सुनिश्चित करती है। इसके अतिरिक्त हिताधिकारियों के लिए बनायी गई योजनाओं एवं कार्यक्रमों का नियंत्रण एवं निरीक्षण, जनसाधारण के बीच सामान्य चेतना की अभिवृद्धि करना, सामुदायिक कार्यो के लिए स्वैच्छिक श्रम तथा योगदान का आयोजन करना और सामुदायिक स्वामित्व की धारणा की अभिवृद्धि करना एवं विभिन्न कार्यक्रमों में वार्ड सीमा की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना भी ग्राम पंचायतों के कार्य होंगे।

शोध से ज्ञात तथ्य- जिला पंचायत रीवा के संदर्भ में उभरते हुए ग्रामीण नेतृत्व के स्वरूप का

विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य उभरकर सामने आते हैं।

1. सामाजिक प्रस्थिति–

* **आयु–** रीवा जिला की त्रिस्तरीय पंचायतों में 200 ग्रामीण जनप्रतिनिधियों का साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से लिया गया है। इस साक्षात्कार के माध्यम से ग्रामीण नेतृत्व सम्बन्धी जो तथ्य उभरकर सामने आये हैं, उनका विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। ग्रामीण नेतृत्व में आयु एक महत्वपूर्ण कारक है। इस शोध परियोजना में आयु सम्बंधी प्राप्त तथ्यों को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

आयु समूह

आयु समूह	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
18–30 वर्ष	56	28
31–45 वर्ष	92	46
45 वर्ष से ऊपर	52	26
योग	**200**	**100**

उक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि 31-45 वर्ष आयु समूह के सर्वाधिक जनप्रतिनिधि (46 प्रतिशत) हैं। 18-30 वर्ष आयु समूह के युवा जन प्रतिनिधि 28 प्रतिशत पाये गये हैं, जबकि 45 वर्ष से ऊपर के प्रतिनिधियों का प्रतिशत 26 रहा है। इस तरह यह स्पष्ट होता है ग्रामीण नेतृत्व में तरुणों एवं युवाओं का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। प्राचीन काल में भारतीय समाज में बुजुर्ग लोगों की प्रधानता पंचायतों में रहती थी। उक्त स्थिति नीचे पाई डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है।

* **जाति/वर्ग–** वर्तमान समय जाति के लिये राजनीति और राजनीति के लिये जाति अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गयी है। रजनी कोठारी जैसे प्रख्यात समाजवैज्ञानिक तो यहाँ तक कहा है कि अब जाति का राजनीतिकरण हो गया है।1 73वें संविधान संशोधन के द्वारा त्रि-स्तरीय ग्राम पंचायतों में आरक्षण के प्रावधान रखे गये हैं। इस लघु शोध परियोजना में अध्ययन किये गये जातिगत निष्कर्ष निम्नवत आये हैं।

जाति/वर्ग

जाति	महिला	पुरुष	योग	प्रतिशत
सामान्य	24	44	68	34
पिछड़ा वर्ग	22	42	64	32
अनु. जाति	12	24	36	18
अनु.जनजाति	12	20	32	16
योग	**80**	**120**	**200**	**100**

इस अध्ययन में निदर्शित जनप्रतिनिधियों में सामान्य वर्ग की 24, पिछड़ावर्ग की 22, अनु.जाति की 12 तथा अनु.जनजाति की 12 महिलायें रही हैं। पुरुषों की संख्या सामान्य वर्ग की 44, पिछड़ावर्ग की 42, अनु.जाति की 24 तथा अनु.जनजाति की 20 रही है। इस तरह इस अध्ययन में सामान्य वर्ग के 34 प्रतिशत, पिछड़ावर्ग के 32 प्रतिशत, अनु.जाति के 18 प्रतिशत तथा अनु.जनजाति के 16 प्रतिशत उत्तरदाता रहे हैं। उक्त स्थिति को नीचे पाई डायग्राम द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है।

उक्त तथ्य से यह उपकल्पना स्थित होती है कि पंचायत राज संस्थाओं में अब सभी वर्गों को प्रतिनिधित्व प्राप्त हो रहा है।

(2) शैक्षणिक एवं आर्थिक प्रस्थिति–

* **शैक्षणिक स्तर**- ग्रामीण नेतृत्व में निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के शिक्षा का स्तर जानने का प्रयास इस लघुशोध परियोजना में किया गया है। शिक्षा के स्तर का आंकलन नेतृत्व के दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण आयाम है। इस अध्ययन में रीवा जिले के ग्रामीण नेतृत्व की शैक्षणिक स्थिति निम्नवत पायी गयी है।

शैक्षणिक स्थिति

शिक्षा का स्तर	महिला	प्रतिशत	पुरुष	प्रतिशत	योग	प्रतिशत
प्राथमिक	44	55	32	26.6	76	38
माध्यमिक	12	15	12	10.0	24	12
उच्च. माध्यमिक	08	10	40	33.4	48	24
स्नातक	12	15	16	13.3	28	14
स्नातकोत्तर या इससे ऊपर	04	05	20	16.7	24	12
योग	**80**		**120**		**200**	**100**

उक्त तालिका से निम्न तथ्य दृष्टिगोचर होते हैं-

- रीवा जिले के ग्रामीण प्रतिनिधियों में महिला प्रतिनिधियों की शिक्षा प्राथमिक स्तर तक 55 प्रतिशत, माध्यमिक स्तर तक 15 प्रतिशत, उच्चत्तर माध्यमिक 10 प्रतिशत, स्नातक स्तर 15 प्रतिशत तथा स्नातकोत्तर तथा इससे ऊपर 5 प्रतिशत पाई गई है।
- पुरुष प्रतिनिधियों में शिक्षा का स्तर प्राथमिक स्तर तक 26.6 प्रतिशत माध्यमिक 10 प्रतिशत, उच्चतर माध्यमिक 33.4 प्रतिशत, स्नातक 13.3 प्रतिशत, स्नातकोत्तर तथा उससे ऊपर 16.7 प्रतिशत पाया गया है।
- समेकित रूप में 38 प्रतिशत प्रतिनिधि प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त है, जबकि माध्यमिक स्तर तक 12 प्रतिशत तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर की शिक्षा 24 प्रतिशत प्रतिनिधियों की है। उल्लेखनीय है कि इनमें 14 प्रतिशत स्नातक तथा 12 प्रतिशत स्नातकोत्तर या उससे ऊपर की उपाधि प्राप्त है।
- उस स्थिति से यह स्पष्ट हो जाता है कि नवीन ग्रामीण नेतृत्व पूर्व की स्थिति में अब अधिक शिक्षा प्राप्त है।

उक्त तथ्यों से यह उपकल्पना सिद्ध होती है कि नवीन ग्रामीण नेतृत्व में शिक्षा का स्तर बढ़ता जा रहा है।

* **आर्थिक स्थिति**– रीवा जिले की पंचायत राज संस्थाओं में कार्यरत जनप्रतिनिधियों की आर्थिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करने के प्रमुख तीन आधार- कृषि योग्य भूमि, मुख्य व्यवसाय तथा वार्षिक आय इस शोध अध्ययन में निश्चित किये गये।

- **कृषि योग्य भूमि**– कृषि योग्य भूमि के सम्बंध में जनप्रतिनिधियों से प्राप्त तथ्यों को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

कुल भूमि (एकड़ में)	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
01–04	70	35.0
05–10	45	22.5
11–15	65	32.5
15 से अधिक	20	10.0
योग	**200**	**100**

इस तरह 35 प्रतिशत प्रतिनिधि 1 से 4 एकड़ तक, 22.5 प्रतिशत 5 से 10 एकड़, 32.5 प्रतिशत 11 से 15 एकड़ तथा 10 प्रतिशत जनप्रतिनिधि 15 एकड़ से अधिक कृषि योग्य भूमि के स्वामी पाये गये हैं।

मुख्य व्यवसाय– जनप्रतिनिधियों के व्यवसाय के सम्बंध में इस अध्ययन के दौरान साक्षात्कार के माध्यम से जो तथ्य सामने हैं, उन्हें निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

मुख्य व्यवसाय

मुख्य व्यवसाय	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
कृषि	104	52
ठेकेदारी/व्यापार	60	30
कामगार	30	15
अन्य	06	03
योग	**200**	**100**

उक्त तालिका में यह स्पष्ट होता है कि 52 प्रतिशत जनप्रतिनिधियों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। 30 प्रतिशत जनप्रतिनिधियों का व्यवसाय ठेकेदारी एवं व्यापार पाया गया है। 15 प्रतिशत कामगार तथा 03 प्रतिशत अन्य व्यवसायों में संलग्न पाये गये हैं।

वार्षिक आय– जन प्रतिनिधियों की वार्षिक आय उनके द्वारा प्रदत्त जानकारी के अनुसार निम्नवत पायी गयी है।

वार्षिक आय

वार्षिक आय	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
100000 तक	20	10
100001 से 200000 तक	70	35
2000001 से 300000 तक	90	45
300001 से ऊपर	20	10
योग	**200**	**100**

10 प्रतिशत प्रतिनिधियों की वार्षिक आय 100000 रुपये तक, 35 प्रतिशत की आय 100000 से 200000 रु. के बीच, 45 प्रतिशत की 2000001 से 300000 रु. के बीच तथा 10 प्रतिशत की 300001 रु. से अधिक वार्षिक आय रही है। उक्त स्थिति को नीचे डायग्राम द्वारा प्रदर्शित किया जा रहा है।

इस तरह जिला रीवा की पंचायतों के जनप्रतिनिधियों की आर्थिक स्थिति का समग्र आंकलन करते हुये हम यह पाते हैं कि अधिकांश जनप्रतिनिधियों का मुख्य व्यवसाय कृषि है तथा उनकी वार्षिक आय एक लाख रु. से तीन लाख रुपये के बीच पायी गयी है।

(3) राजनीतिक पृष्ठभूमि–

पारम्परिक राजनैतिक पृष्ठ भूमि– भारत में लोकसभा एवं विधानसभा में कार्यरत निर्वाचित

जनप्रतिनिधियों अधिकांशतः कई दशकों से राजनीति से संलग्न रहे व्यक्ति हैं। कुछ तो आनुवांशिक रूप से कई पीढ़ियों से यह दायित्व निभा रहे हैं। पंचायतराज संस्थाओं में आरक्षण के कारण महिलाओं एवं पुरुषों के एक ऐसे वर्ग को राजनीति में आने का मौका मिला है, जो परम्परा से हटकर है। अर्थात् पहली बार जनप्रतिनिधि के रूप में निर्वाचित हुये हैं। इस लघुशोध परियोजना के अंतर्गत किये गये अध्ययन में रीवा जिला की पंचायतों में निर्वाचित जनप्रतिनिधियों से इस सम्बद्ध में जो जानकारी प्राप्त हुई उसे निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

पारम्परिक राजनैतिक पृष्ठभूमि

पारम्परिक राजनैतिक पृष्ठभूमि	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
हाँ	90	45
नहीं	110	55
योग	**200**	**100**

उक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 45 प्रतिशत जनप्रतिनिधि पारम्परिक राजनैतिक पृष्ठभूमि से युक्त हैं, जबकि 55 प्रतिशत जन प्रतिनिधियों के चेहरे नये हैं। इस तरह ग्रामीण अंचलों में एक नया नेतृत्व उभरकर सामने आ रहा है। उक्त स्थिति को पाई डायग्राम से नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

उक्त विश्लेषण से यह उपकल्पना साबित होती है कि अधिकांश ग्रामीण जनप्रतिनिधि पारम्परिक राजनैतिक पृष्ठभूमि से हटकर है।

जन प्रतिनिधि बनने की प्रेरणा– पंचायत राज संस्थाओं में चुनाव लड़ने की प्रेरणा उन्हें किससे प्राप्त हुई? इस प्रश्न के उत्तर में जो तथ्य सामने आये हैं उन्हें निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

जनप्रतिनिधि बनने की प्रेरणा

जन प्रतिनिधि बनने की प्रेरणा	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
स्वयं	90	45
परिवार	50	25
जाति	22	11
धार्मिक समुदाय	18	09
बुद्धिजीवी	20	10
योग	**200**	**100**

उक्त तालिका से निम्न तथ्य सामने आये हैं–

* 45 प्रतिशत प्रतिनिधि स्वयं की प्रेरणा से पंचायत निर्वाचन में चुनाव लड़ने का निर्णय लिया है। उनमें अधिकांश यह मानते हैं कि सांसद और विधायक चुनाव में सीमित व्यक्ति ही प्रत्याशी बन सकते हैं। अपने गांव के आसपास के लोगों पर अपने प्रभाव को देखते हुए उन्होंने पंचायत निर्वाचन में प्रत्याशी बनने का निर्णय लिया और उसमें उन्हें सफलता प्राप्त हुई।
* 25 प्रतिशत प्रतिनिधि परिवार और 11 प्रतिशत जातीय प्रमुख व्यक्तियों के कहने पर निर्वाचन में प्रत्याशी बने और विजयी हुए।
* 9 प्रतिशत धार्मिक सम्प्रदाय के प्रमुखों एवं 10 प्रतिशत पढ़े-लिखे व्यक्तियों (बुद्धिजीवियों) से

प्रेरित होकर निर्वाचन के प्रत्याशी बने और विजयी हुये। इन तथ्यों को हम निम्न डायग्राम में प्रस्तुत कर रहे हैं।

पंचायत राज संस्थाओं में कमजोर वर्ग के प्रतिनिधित्व का औचित्य–

इस शोध अध्ययन के दौरान समाज के कमजोर वर्ग अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए किये गये आरक्षण के सम्बन्ध में जन प्रतिनिधियों का अभिमत प्राप्त किया गया। प्राप्त उत्तरों को समेकित रूप में निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

कमजोर वर्ग के प्रतिनिधित्व का औचित्य

कमजोर वर्ग के प्रतिनिधित्व का औचित्य	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
उचित	170	85
अनुचित	30	15
योग	**200**	**100**

समाज में अब यह धारणा पुष्ट हो चुकी है कि कमजोर वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था उचित है। उक्त तालिका से यह बात पुष्ट होती है। 85 प्रतिशत जनप्रतिनिधि इस व्यवस्था को उचित और 15 प्रतिशत किसी न किसी कारण से इसे अनुचित मानते हैं। नकारात्मक विचार रखने वाले लोगों की संस्ख्या शिक्षा के विकास के साथ ही साथ कम होती जा रही है। उक्त विचारों को हम निम्न पाई डायग्राम से भी समझ सकते हैं।

उक्त विश्लेषणों से यह उपकल्पना सिद्ध होती है कि समाज के कमजोर वर्ग के प्रतिनिधित्व ने ग्रामीण शक्ति संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है।

महिलाओं के प्रतिनिधित्व सम्बंधी अभिमत– प्रारम्भ से ही रीवा जिला राजनीति का केन्द्र बिन्दु रहा है। रीवा जिला का मुख्यालय, रीवा तत्कालीन रीवा राज्य तथा विन्ध्य प्रदेश की राजधानी रहा है। विगत 50 से भी अधिक वर्षों से यह संभाग का मुख्यालय है। शिक्षा का केन्द्र है। स्वाभाविक रूप से यहाँ के निवासी राजनीतिक जागरूकता के क्षेत्र में आगे हैं। इस अध्ययन में जब यह जानने का प्रयास किया गया कि पंचायत संस्थाओं में एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित किये गये हैं, क्या यह उचित है? इस प्रश्न के उत्तर को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

महिलाओं में प्रतिनिधित्व सम्बन्धी अभिमत

महिलाओं में प्रतिनिधित्व सम्बंधी अभिमत	निदर्शित जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
उचित	162	81
अनुचित	38	19
योग	**200**	**100**

उक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि 81 प्रतिशत जनप्रतिनिधि इस व्यवस्था को उचित और 19 प्रतिशत इसे अनुचित मानते हैं।

महिला प्रतिनिधियों के लिए आरक्षण को अनुचित मानने वाले 19 प्रतिशत जनप्रतिनिधि परम्परागत रूढ़िवादी संस्कारों से युक्त पाये गये हैं। संभावना यह है कि महिला प्रतिनिधियाँ स्वयं अपने कार्यों से ऐसे लोगों की भ्रांतियों को दूर कर सकने में सफल होंगी।

महिलाओं जन प्रतिनिधियों का राजनीति में प्रवेश के लिये प्रेरक तत्व– सामान्य रूप से यह धारणा है कि म0प्र0 में त्रि–स्तरीय पंचायतों में महिलाओं के लिए

एक तिहाई पद आरक्षित किये गये हैं इसलिए महिलायें ग्रामीण नेतृत्व के क्षेत्र में आ रही हैं किन्तु इस अध्ययन के दौरान यह पाया गया है कि महिलाओं के राजनीति में प्रवेश करने के लिये अनेक प्रेरक तत्व जैसे आत्मनिर्भर होने की आकांक्षा, खाली समय का सदुपयोग, सामाजिक कल्याण की भावना, अनुभव प्राप्त करने की ललक, सामाजिक प्रतिष्ठा अर्जित करने की भावना रहे हैं। अध्ययन के दौरान प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

महिलाओं में प्रतिनिधित्व सम्बन्धी अभिमत

प्रेरक तत्व	निदर्शित महिला जनप्रतिनिधियों की संख्या	हाँ	प्रतिशत
आत्मनिर्भर होने की आकांक्षा	80	60	75.0
खाली समय का सदुपयोग	80	45	56.3
सामाजिक कल्याण की भावना	80	37	46.2
अनुभव की ललक	80	35	43.7
सामाजिक प्रतिष्ठा का अर्जन	80	48	60.0
पारिवारिक राजनैतिक सम्बद्धता	80	36	45.0
नेतृत्व की भावना	80	40	50.0

उक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि पंचायत राज संस्थाओं में आने के लिये महिलाओं में अनेक कारक उत्तरदायी पाये गये हैं। 75 प्रतिशत महिलायें आत्मनिर्भर होने की आकांक्षा से 56.3 प्रतिशत खाली समय का सदुपयोग करने की भावना से 46.2 प्रतिशत अनुभव प्राप्त करने की ललक से, 60 प्रतिशत सामाजिक प्रतिष्ठा का अर्जन करने के लिए, 45 प्रतिशत पारिवारिक राजनैतिक सम्बद्धता होने के कारण तथा 50 प्रतिशत नेतृत्व की भावना से पंचायत राज संस्थाओं में निर्वाचित होने के लिए प्रेरित होकर निर्वाचन में भाग ली हैं।

पंचायत संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी से लाभ– पंचायत राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी से क्या लाभ प्राप्त हो रहा है? इस सम्बन्ध में जन प्रतिनिधियों के विभिन्न विचार है। इन विचारों को समेकित रूप से निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

पंचायत संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी से लाभ

विचार	निदर्शित महिला जनप्रतिनिधियों की संख्या	प्रतिशत
सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन	106	53
ग्रामीण विकास में सहायक	52	26
सामाजिक कल्याण में सहायक	22	11
स्वतंत्र निर्णय लेने में असमर्थ	20	10
योग	**200**	**100**

उक्त तालिका से निम्न तथ्य प्रकट होते हैं। इन तथ्यों को हम रेखाचित्र के माध्यम से भी स्पष्ट कर रहे हैं।

- 53 प्रतिशत जन प्रतिनिधि यह मानते हैं कि महिलाओं की भागीदारी से सामाजिक परिप्रेक्ष्य में अनेक परिवर्तन आ रहे हैं। महिलाओं को नई सामाजिक प्रस्थिति प्राप्त रही है तथा उनके विचारों से सामाजिक भेदभाव समाप्त होते जा रहे हैं। अनेक सामाजिक कुरीतियाँ समाप्त हो रही हैं।
- 26 प्रतिशत जन प्रतिनिधि महिलाओं की भागीदारी को ग्रामीण विकास के क्षेत्र में सहायक मानते हैं।
- 11 प्रतिशत प्रतिनिधि इसे सामाजिक कल्याण में सहायक मानते हैं।
- 10 प्रतिशत प्रतिनिधि यह मानते हैं कि महिला प्रतिनिधि स्वतंत्र निर्णय नहीं ले

पाती हैं। उनके ऊपर परिवार और समाज का दबाव रहता है।
इस तरह उक्त विश्लेषण से यह उपकल्पना सिद्ध होती है कि पंचायत राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी से लाभ हो रहा है।

निष्कर्ष–

साक्षात्कार के माध्यम से जिला पंचायत रीवा के संदर्भ में ग्रामीण नेतृत्व के उभरते नवीन प्रतिमान का विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य उभरकर सामने आये हैं।

* ग्रामीण नेतृत्व में आयु एक महत्वपूर्ण कारक है। 31-45 वर्ष आयु समूह के सर्वाधिक जनप्रतिनिधि 46 प्रतिशत हैं। 18-30 वर्ष आयु समूह के युवा जन प्रतिनिधि 28 प्रतिशत पाये गये हैं, जबकि 45 वर्ष से ऊपर के प्रतिनिधियों का प्रतिशत 26 पाया गया है। इस तरह यह स्पष्ट होता है ग्रामीण नेतृत्व में तरुणों एवं युवाओं का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है।
* इस अध्ययन में निदर्शित जनप्रतिनिधियों में सामान्य वर्ग के 34 प्रतिशत, पिछड़ावर्ग के 32 प्रतिशत, अनु.जाति के 18 प्रतिशत तथा अनु.जनजाति के 16 प्रतिशत उत्तरदाता रहे हैं।
* शिक्षा के स्तर का आंकलन नेतृत्व के दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण आयाम है। रीवा जिले के ग्रामीण प्रतिनिधियों में महिला प्रतिनिधियों की शिक्षा प्राथमिक स्तर तक 55 प्रतिशत, माध्यमिक स्तर तक 15 प्रतिशत, उच्चत्तर माध्यमिक 10 प्रतिशत, स्नातक स्तर 15 प्रतिशत तथा स्नातकोत्तर तथा इससे ऊपर 5 प्रतिशत पाई गई है।
* पुरुष प्रतिनिधियों में शिक्षा का स्तर प्राथमिक स्तर तक 26.6 प्रतिशत, माध्यमिक 10 प्रतिशत, उच्चतर माध्यमिक 33.4 प्रतिशत, स्नातक 13.3 प्रतिशत, स्नातकोत्तर तथा उससे ऊपर 16.7 प्रतिशत पाया गया है।
* समेकित रूप में 38 प्रतिशत प्रतिनिधि प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त है, जबकि माध्यमिक स्तर तक 12 प्रतिशत तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर की शिखा 24 प्रतिशत प्रतिनिधियों की है। उल्लेखनीय है कि इनमें 14 प्रतिशत स्नातक तथा 12 प्रतिशत स्नातकोत्तर या उससे ऊपर की उपाधि प्राप्त है। इस स्थिति से यह स्पष्ट हो जाता है कि नवीन ग्रामीण नेतृत्व अब अधिक शिक्षा प्राप्त है।
* जिला रीवा की पंचायतों के जनप्रतिनिधियों की आर्थिक स्थिति का समग्र आंकलन करते हुये यह पाया गया है कि अधिकांश जनप्रतिनिधियों का मुख्य व्यवसाय कृषि है तथा उनकी वार्षिक आय एक लाख रु. से तीन लाख रुपये के बीच पायी गयी है।
* भारत में लोकसभा एवं विधानसभा में कार्यरत निर्वाचित जनप्रतिनिधियों अधिकांशतः कई दशकों से राजनीति से संलग्न रहे व्यक्ति हैं। कुछ तो आनुवांशिक रूप से कई पीढ़ियों से यह दायित्व निभा रहे हैं। पंचायतराज संस्थाओं में आरक्षण के कारण महिलाओं एवं पुरुषों के एक ऐसे वर्ग को राजनीति में आने का मौका मिला है, जो परम्परा से हटकर है अर्थात् पहली बार जनप्रतिनिधि के रूप में निर्वाचित हुये हैं। 45 प्रतिशत जनप्रतिनिधि पारम्परिक राजनैतिक पृष्ठभूमि से युक्त हैं, जबकि 55 प्रतिशत जन प्रतिनिधियों के चेहरे नये हैं। इस तरह ग्रामीण अंचलों में एक नया नेतृत्व उभरकर सामने आ रहा है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. दुबे डॉ. रमेश (2005) भारत में लोक प्रशासन कालेज बुक डिपो, जयपुर।
2. दत्त विजय (1997), पंचायती राज, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।
3. अखिलेश, डॉ. एस (2006) रीवा राज्य का इतिहास, गायत्री पब्लिकेशन्स, रीवा
4. अखिलेश, डॉ. एस (200) रीवा दर्शन, गायत्री पब्लिकेशन्स, रीवा
5. दुबे डॉ. रमेश (2005) भारत में लोक प्रशासन कालेज बुक डिपो, जयपुर।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

बुन्देलखण्ड का जल संकट, कारण एवं समाधान
(चन्देल कालीन जल संग्रहण व्यवस्था के विशेष सन्दर्भ में)

* चन्द्रमौलि शुक्ल

सारांश– *बुन्देलखण्ड क्षेत्र विशेषकर दक्षिणी पश्चिमी बुन्देलखण्ड की भूमि पठारी, पहाड़ी, ढालू, ऊँची–नीची, पथरीली, ककरीली, राकड़, शुष्क वनों से भरपूर है। यह ऐसी भूमि है जिसमें बरसाती जल ठहर नहीं पाता जिसके कारण बुन्देलखण्ड में जल का निरंतर अभाव रहा है। इस क्षेत्र में जल बरसात मौसम में ही भरपूर रहता है। बरसात के बाद शीत ऋतु में जल कम होना शुरु हो जाता है और ग्रीष्म ऋतु तक आते आते अधिकांश स्थानों पर जल संकट उत्पन्न हो जाता है इसके कारण बुन्देलखण्ड की जनसंख्या का बड़ा भाग रोजी रोटी और जल की तलाश में प्रतिवर्ष पलायन करता है। इस क्षेत्र की जल आवश्यकता को पहली बार चंदेलों ने समझा और उन्होंने अपने राज्य के दक्षिणी मध्य एवं पूर्वी क्षेत्र की पहाड़ी पठारी, जंगली, पथरीली, ढालू एवं राकड़ भूमि की विकास की योजना तैयार कर बरसात के जल को संग्रहीत करने का निर्णय किया। उन्होंने तालाबों, कुंओं तथा बावड़ियों का निर्माण कर बुन्देलखण्ड के जल संकट को दूर किया। यह तालाब, कुंओं, लम्बे समय इस क्षेत्र के लोगों की जल आवश्यकता को पूरा करते रहे है लेकिन वर्तमान में इनकी स्थिति दयनीय है जिससे बुन्देलखण्ड जल संकट पुनः विकराल रूप धारण कर चुका है। इनका जीर्णोद्धार/पुर्ननिर्माण करके जल संकट से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है।*

मुख्य शब्द– भूमि, शुष्क, जल, जनसंख्या

बुन्देलखण्ड क्षेत्र विशेषकर दक्षिणी पश्चिमी बुंदेलखण्ड की भूमि पठारी, पहाड़ी, ढालू, ऊँची-नीचं, पथरीली, ककरीली, राकड़, शुष्क वनों से भरपूर है। यह ऐसी भूमि है जिसमें बरसाती जल ठहर नहीं पाता। दीवान प्रतिपाल सिंह लिखते है ''नदियाँ और नालों का बहाव पहाड़ों में बहुत तेज है और जगह जगह उनकी धाराऐं ऊँची-ऊँचीं चट्टानों से कूदती फांदती उतरकर मैदानों में पहुँचती है।''[1]

वर्षा का जल नालों में बहुत दिन तक नहीं रहा पाता दीवान प्रतिपाल सिंह लिखते है ''प्रत्यक्ष में बड़े-बड़े चौडे गहरे नाले भी पानी बरस चुकने के बाद कुछ ही घंटों में उतर जाते है''[2] इस क्षेत्र में जल बरसात के मौसम में ही भरपूर रहता है, बरसात के बाद शीत ऋतु में जल कम होना शुरू हो जाता है और ग्रीष्म ऋतु तक आते आते अधिकांश स्थानों पर जल संकट उत्पन्न हो जाता है, इसके कारण बुन्देलखण्ड की जनसंख्या का बड़ा भाग रोजी रोटी एवं जल की तलाश में प्रतिवर्ष पलायन करता है, इस क्षेत्र की

* प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय महाराजा महाविद्यालय-छतरपुर

जल आवश्यकता को पहली बार चन्देलों ने समझा और उन्होंने राज्य के दक्षिणी मध्य एवं पूर्वी क्षेत्र की पहाड़ी, पठारी, पथरीली , ढालू एवं राकड़ भूमि की विकास योजना तैयार कर बरसात के जल को संग्रहीत करने का निर्णय किया।

चन्देलों ने बरसात का जल संग्रहीत करने के लिए समतल ढालू भूमि पर पहाड़ों, टौरियों के किनारों पर खंदकों, खदियों के दर्रों में विशाल तालाबों का निर्माण करवाया, इन तालाबों के कारण बन्देलखण्ड का जल संकट न केवल दूर हुआ व अपितु भरपूर जल उपलब्ध होने लगा। चंदेलों ने तालाबों के साथ-साथ बड़ी संख्या में कुओं तथा बावड़ियों का भी निर्माण करवाया था। यह कुंए तथा बावड़ी भी जल संग्रहण के महत्वपूर्ण स्त्रोत थे। इनमें से अनेक कुओं तथा बावडियों के जल का उपयोग वर्तमान में भी लोग करते है। लगभग 1000 वर्षो से भी अधिक समय से पहले निर्मित यह तालाब, कुंआ तथा बावडियाँ स्थानीय जल आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ हद तक जल उपलब्ध कराने का कार्य करती है। लेकिन वर्तमान में बुन्देलखण्ड में वर्षा कम हो रही है लगभग हर दो वर्ष बाद यहाॅ सूखा पड़ जाता है। जिससे कृषि कार्य तो हो ही नहीं पाता मनुष्यों तथा जानवरों के लिए पीने के जल का भी अभाव हो जाता है ऐसी स्थिति में जनसंख्या का बड़ा भाग घोर अभाव का जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होता है। चंदेल कालीन बुन्देलखण्ड में जल संग्रहण व्यवस्था का अध्ययन करते हुए मैंने यह पाया कि वर्तमान में जल संकट का सबसे बड़ा कारण मानव स्वयं है यहाॅ स्थित लोगों ने ही जल स्त्रोतों को सुरक्षित करने पर ध्यान नहीं दिया और न ही उस तरह के जल संग्रहण के साधन तैयार किए इसके विपरीत जल संग्रहण के साधनों को नष्ट करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

चंदेल शासकों ने जिस तकनीक से तालाबों, बावड़ियों, कुंओं, गुफा, जल कुण्डों का निर्माण किया था, वह आज भी उपयोगी है। तालाबों की बधानों को पाषाण खण्डों एवं मिट्टी से इस तरह से बनाया गया था कि उनमें जल संरक्षण अधिक हो तथा बरसात में बधानों को कोई हानि न हो। डॉ. अयोध्या प्रसाद पाण्डेय के अनुसार ''बुन्देलखण्ड एक पहाड़ी क्षेत्र है और वहां तालाब के निर्माण के सभी साधन सुलभ हैं''[3] यदि तालाबों में क्षमता से अधिक जल भरता था तो उसको बाहर निकालने की भी व्यवस्था की गई थी। तालाबों की बधानों के दोनों छोरों की ओर पाखियों का निर्माण कर अतिरिक्त जल बाहर किया जाता था। बधान से सटी पहाडी भूमि को भी काटकर अतिरिक्त जल बाहर निकाला जाता था और इस तरह से तालाबों का अतिरिक्त जल बधानों को बिना नुकसान पहुंचाए कृषि योग्य समतल भूमि में चला जाता था। अतिरिक्त जल के निकास के लिए जहाॅ पाखियाँ निर्मित की जाती थी उसके समीप ही वर्ष के अधिकांश दिनों में हरियाली बनी रहती थी कुछ समय के लिए जल भी उपलब्ध रहता था इससे जानवरों को न केवल जल प्राप्त होता था अपितु समीप ही पेड़ तथा झाडियाँ उगने से उन्हें शीतल छाया तथा सुरक्षा भी प्राप्त होती थी। तालाबों में संग्रहीत जल जन उपयोग के साथ-साथ कृषि के उपयोग में भी आता था। कुंए, बावड़ियाँ, तालाबों के अतिरिक्त कुण्ड भी बड़ी संख्या में निर्मित किए गये थे। यह जल के महत्वपूर्ण स्त्रोत है। चंदेलों ने पहाड़ों में बडी संख्या में गुफा मंदिरों का निर्माण करवाया था और इन्हीं के पास जल कुण्ड निर्मित किए गए ऐसे जल कुण्डों में पहाड़ों का जल धीरे-धीरे निरंतर झरता हुआ भरता है। कालिंजर के किले में ऐसे ही गुफा मंदिर तथा जल कुण्ड निर्मित है। इन जल कुण्डों की विशेषता है कि इनका जल कभी

समाप्त नहीं होता सूखे तथा गर्मियों के मौसम में भी यह कुण्ड जल उपलब्ध कराते है। तालाबों की तकनीक इस तरह की थी कि तालाबों से जल पाखियों के माध्यम से ही बाहर निकल सकता था, इसलिए लोग उपयोग के अतिरिक्त अधिक जल का अपव्यय नहीं कर पाते थे और मनुष्यों, जानवरों तथा वन्य प्राणियों को गर्मी के मौसम में भी जल मिलता रहता था। डॉ. अयोध्या प्रसाद पाण्डेय के अनुसार 'मैदान तथा पहाड़ियों में समान रूप से बुन्देलखण्ड भर में तालाब पाये जाते है।'[4]

वर्तमान में अध्ययन के दौरान मैने पाया कि चंदेल कालीन ही नहीं गोड़ों, बुन्देलों तथा ब्रिटिश काल के भी जल संग्रहण के साधनों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। चंदेलों ने बड़ी संख्या में जिन तालाबों, बावड़ियों, कुओं तथा गुफा जल कुण्डों का निर्माण करवाया था उनमें से अधिकांश क्षतिग्रस्त हो चुके है उनमें गाद, मिट्टी, पत्थर, कचरा तथा कीचड़ का भराव हो चुका है कुएं, बावडियाँ तथा तालाबों में लोग कचड़ा फैंकने लगे है। साथ ही कुछ विशाल तालाबों की भूमि का अतिक्रमण कर लोग अपने कृषि मकानों तथा व्यावसायिक उपयोग के लिए कर रहे है जिससे तालाबों का भराव क्षेत्र न केवल कम हो रहा है अपितु जिन मार्गो से होकर जल तालाबों तक पहुंचता था वे भी बंद हो रहे है, इससे जल संग्रहण की क्षमता निरंतर कम होती जा रही है। अधिकांश तालाबों के जल भराव क्षेत्र में खेती की जाने लगी है और बधानों को स्थान-स्थान पर काट दिया गया है। इससे उनमें बरसात का जल जितना भरता था वह नहीं भर पाता बड़े-बड़े तालाब अपना मूल अस्तित्व खोकर छोटी-छोटी तलैयों में बदल रहे है। जिन जल संग्रहण के संसाधनों पर सम्पूर्ण ग्राम, नगर में लोगों के साथ-साथ वन्य जीव तथा पालतू जानवर निर्भर रहते थे वे निरंतर नष्ट हो रहे है और अधिकांश का जल भी गन्दा हो रहा है।

जल संग्रहण के संसाधनों की शुद्धता, पवित्रता तथा सुरक्षा का नैतिक दायित्व लोग भूलते जा रहे है वह यह नैतिक दायित्व ही नहीं समझते कि उनको शुद्ध रखना, इनकी सुरक्षा करना, हमारा परम कर्तव्य होने के साथ-साथ नैतिक दायित्व भी है। यह हमारे पूर्वजों की हमारे पास अमानत है। इसे हमें अगली पीढ़ी तक पहुंचाना भी है। सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड क्षेत्र में चंदेलों की इस अमूल्य धरोहर के प्रति जनता अपने नैतिक दायित्व को भूल ही गई है और तालाबों की भूमि का अतिक्रमण कर बचे हुए भराव क्षेत्रों को कचरा घरों में बदल दिया है तालाब, कुएं , बावड़ियाँ तथा गुफा कुण्ड जल के ऐसे स्त्रोत थे जो कभी सूखते नहीं थे उसे वर्तमान में नागरिक न केवल सुखा रहे है अपितु उसे नष्ट भी कर रहे है।

सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड में जो भी जल संग्रहण के साधन है उनकी सुरक्षा, रखरखाव, मरम्मत का दायित्व उसके आस-पास रहने वाली सामान्य जनता का ही होता है। इसके लिए जनता का दायित्व पहले है सरकार तथा प्रशासन का उत्तरदायित्व उसके बाद होता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि जनता, प्रशासन तथा सरकार मिलकर उनकी सुरक्षा, मरम्मत तथा संरक्षण का कार्य करें। चंदेल काल में जब तालाब निर्मित करवाएं गए थे तब इस बात का ध्यान रखा गया था कि भराव क्षेत्र के ऊपरी भाग में न तो कृषि की जाए और न ही मकानों का निर्माण करवाया जाए। ऐसा होने से खेतों की मिट्टी तालाबों में नहीं आ पाती थी और बरसात का जल भी बिना किसी रूकावट के तालाबों में भरता रहता था। तालाबों के भराव क्षेत्र के ऊपरी क्षेत्र में कृषि कार्य तो होते ही नहीं थे। वहाँ पेड़, पौधे लगाये जाते थे जिससे ऊपरी भाग में भूमि का कटाव न हो सके वह भूमि वास्तव में चरोखर क्षेत्र होता था जहाँ जानवर चरते थे और दोपहर में तालाबों में जल पीकर वापस चरोखर में स्थित पेड़ों के नीचे बैठकर आराम करते थे। लेकिन वर्तमान में जल भराव क्षेत्र

के ऊपरी भागों में खेती की जाने लगी है। जिससे जुते हुए खेतों की मिट्टी बहकर तालाबों में आकर जमा होती है और तालाब की गहराई कम हो रही है साथ ही अधिकांश तालाब उथले हो गये है। जिससे तालाबों की जल संग्रहण की क्षमता निरंतर कम हो गई है। जल संग्रहण की क्षमता कम होने से जल जल्दी सूख जाता है और ग्रीष्म ऋतु तक आते आते इनमें से अधिकांश तालाब पूरी तरह से सूख जाते है। कुओं तथा बावड़ियों में भी कीचड़ तथा कचड़े के अधिक जमा होने के कारण इनके जल संग्रहण की क्षमता कम हो जाती है और उनका जल भी सूख जाता है।

अधिकांश तालाबों की बधानों पर बड़े-बड़े पेड़ तथा झाड़ियाँ उग आये है। पेड़ों की जड़े बधानों के पत्थरों तथा मिट्टी में प्रवेश कर बधानों को कमजोर कर रही है साथ ही बधानों में दरारें आ गई है। पत्थरों के टुकड़े मूल स्थान से हटकर आगे पीछे की ओर जड़ों के कारण खिसक जाते है। जिससे बधानों की दरारों से जल भरकर रिसता रहता है और पर्याप्त मात्रा में जल संग्रहीत नहीं हो पाता है।

चंदेल काल में बड़ी संख्या में जो तालाब कुएं तथा बावड़ियॉ नगरों, ग्रामों तथा वन क्षेत्रों में बने थे उनमें से अधिकांश अपना मूल स्वरूप खो चुके है। क्योंकि अनेक तालाबों के भराव क्षेत्र में कचरे, मिट्टी का भराव कर उसकी भूमि को समतल कर दिया गया है और इस भूमि पर मकान, पशुओं के तबेले यहां तक कि व्यावसायिक उपयोग के लिए विवाह घर तथा दुकानें भी निर्मित की जाने लगी है। जल संग्रहण के अधिकांश साधन टूट तथा मिट रहे है। कूड़ा, कचड़ा, मिट्टी, पत्थर, पत्तियाँ, तथा अन्य गंदगी जल संग्रहण के साधनों को भारी नुकसान पहुंचा रहे है।

चंदेल कालीन तालाब, कुएं बावड़ियों तथा गुफा कुण्ड बुन्देलखण्ड की प्यास को लम्बे समय तक बुझाते रहे है लेकिन वर्तमान में न तो कृषि के लिए पर्याप्त जल है न ही दैनिक उपयोग के लिए आवश्यकता इस बात की है कि इन जल संग्रहण के साधनों की ओर सरकार समाज तथा सामान्य जन सभी ध्यान दें ताकि उनको पूर्ववत स्थिति में लाया जा सके। वनों की जो अंधाधुन्ध कटाई हो रही है उस पर रोक लगे, विकास की आंधी में बड़े-बड़े पहाड़ों को नष्ट किया जा रहा है इन पर रोक लगे। पेड़ भूमि क्षरण को रोकते है तालाबों के भराव क्षेत्र के ऊपरी भाग में पेड़ न होने तथा कृषि कार्य होने से मिट्टी बहकर तालाबों में जम रही है, इससे तालाब उथले हो रहे है और उनकी जल संग्रहण की क्षमता भी कम हो रही है। पहाड़ों से बहकर भी जल तालाबों में भरता था वर्तमान में बुन्देलखण्ड में पहाड़ों को व्यावसायिक उपयोगिता के कारण नष्ट किया जा रहा है। इसलिए भी तालाबों में जितना जल भरना चाहिए नहीं भर पाता। इसलिए वनों की कटाई तथा पहाडों को नष्ट होने से रोका जाए।

प्राचीन काल में स्थानीय लोग भी जलाशयों को सुरक्षित स्वच्छ तथा पवित्र बनाये रखना अपना कर्तव्य मानते थे। वे जल को शुद्ध बनाए रखते थे उनमें गंदगी नहीं डालते थे। वर्तमान में भी आवश्यकता इस बात की है कि लोग अपने दायित्वों को समझे, जलाशयों को पवित्र स्वच्छ तथा सुरक्षित बनाए रखने में अपनी भूमिका का निर्वाह करे। सरकार, समाज तथा लोग अपने दायित्व को समझे इन जल संग्रहण के स्त्रोतों की मरम्मत करें। इनका जीर्णोद्धार किया जाए। तालाबों की बंधानों में जो पेड़ झाड़ियाँ उग आये है। उनको वहॉ से हटाया जाए। पेड़ों की जडों से बधानों को जो नुकसान पहुंच रहा है उसको ठीक किया जाए। तालाबों के तल से गाद, कीचड़, कचड़ा निकाल कर उनका गहरीकरण किया जाए। जब तालाबों, कुओं तथा बावड़ियों का गहरीकरण होगा तो इनके जल संग्रहण की क्षमता बढ़ेगी।

गहरीकरण के साथ ही साथ जलाशयों की साफ सफाई, मरम्मत, रिसनबंदी, बंधान में लगे पाषाण खण्डों की भराई पेड़ों, झाड़ियों की कटाई प्रतिवर्ष नियमित रूप से होती रहनी चाहिए। तालाबों, कुंओं तथा बावड़ियों को अतिक्रमण करके बड़ी संख्या में लोग बधानों को तोड़ कर भराव क्षेत्र में खेती करते है। यह दबंग अतिक्रमणकारी लोग तालाब के भराव क्षेत्र में जल के भराव को रोकने के लिए तरह तरह के उपाय करते है।

नगरों एवं गांवों का गन्दा जल नालियों के माध्यम से तालाबों में डाला जाता है, इससे तालाबों का जल निरंतर गंदा होता जा रहा है साथ ही नालियों सं गंदे जल के साथ बहकर आया कचड़ा भराव क्षेत्र में जमता जाता है परिणामतः तालाब का भराव क्षेत्र कम होने के साथ-साथ यह गन्दी नालियों के द्वारा बहाकर लाये गये गन्दे जल के क्षेत्र बनकर रह गये है।

चंदेल काल में निर्मित इन तालाबों के जल का उपयोग दैनिक कार्यो तथा पशुओं की आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद ही कृषि कार्य में किया जाता था लेकिन वर्तमान में लोग अपने नैतिक दायित्व को भूल कर तालाबों में डीजल पम्प,विद्युत पम्प इत्यादि रखकर इनका जल कृषि के लिए पाईपों के माध्यम से अपने खेतों में ले जाते है इससे इन तालाबों का जल कम होने लगता है और ग्रीष्म ऋतु आते आते यह सूख जाते है। बुन्देलखण्ड के ग्राम तथा नगरों में चंदेलों ने एक-एक करके तालाबों का निर्माण करवाया था हर तालाब के बाद आगे दूसरा उसके बाद तीसरा फिर क्रमशः आगे की ओर इसी तरह के तालाबों का निर्माण करवाया था। कुछ गांव तथा कस्बों में एक दूसरे से लगे हुए सात तक तालाब है इन तालाबों की एक विशेषता यह थी कि जब प्रथम तालाब भर जाता था तब उसका अतिरिक्त जल पाखी के माध्यम से दूसरे में पहुंच जाता था और इस तरह से यह क्रम बढ़ता रहता था। वर्तमान में अधिकांश तालाबों में जल भरने का यह क्रम टूट गया है। अधिकांश बधानों के क्षतिग्रस्त हो जाने तथा पाखियों के टूट-फूट जाने से जल अगले तालाबों में नहीं पहुंच पाता। तालाबों, कुओं तथा बावड़ियों की वर्तमान दुर्दशा के लिए बहुत हद तक स्थानीय लोग उत्तरदायी है वे अधिकारों की तो बात करते है लेकिन अपने कर्तव्यों को भूल गये है। इनकी सुरक्षा तो दूर की बात है अधिकांश लोग इनकी दुर्दशा करने में कोई कसर नहीं रखते जबकि जल संग्रहण संस्थानों की साथ-सफाई अतिक्रमण से मुक्ति तथा सुरक्षा पर ध्यान देने का उत्तरदायित्व सर्वाधिक स्थानीय लोगों का ही होता है। तालाबों कुंओं तथा बावड़ियों के जल का दुरूपयोग भी बहुत अधिक होता है। पूर्व की तुलना में वर्तमान में जल की आवश्यकता भी अधिक बढ गई। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार तथा समाज कठोरता से इन अतिक्रमणों को हटाने में अपनी भूमिका का निर्वाह करे। तालाबों के भराव क्षेत्र में जो भी अतिक्रमण है उसे हटा करके उन्हें सुरक्षित रखना सबका दायित्व है। अतिक्रमण समाज के ही लोग करते है। उन्हें एक तरफ ऐसा करने से होने वाले नुकसान को बताया जाए और साथ ही बिना किसी भय तथा पक्षपात के अतिक्रमण अनिवार्य रूप से हटाया जाए और तालाबों की सीमा में न तो किसी प्रकार का निर्माण हो और न ही वहाँ कचड़ा डाला जाए गन्दे जल को तालाबों में जाने से रोका जाए। तालाबों की हद बंदी कर उनका गहरीकरण हो, बधानों की नियमित रूप से मरम्मत हो। तालाबों का जो जल विद्युत अथवा डीजल पम्प द्वारा सिंचाई के लिए उपयोग में लाया जाता है इस पर भी रोक लगनी चाहिए।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. दीवान प्रतिपाल सिंह–''बुन्देलखण्ड का इतिहास'' प्रथम भाग पृष्ठ–16
2. दीवान प्रतिपाल सिंह–''बुन्देलखण्ड का इतिहास'' प्रथम भाग पृष्ठ–16
3. डॉ. अयोध्या प्रसाद पाण्डेय–''चन्देलकालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास'' पृष्ठ–211
4. डॉ. अयोध्या प्रसाद पाण्डेय–''चन्देलकालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास'' पृष्ठ–211
5. स्वयं का सर्वेक्षण।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन
(दुर्ग एवं भिलाई शहर के मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों के संदर्भ में)

* शबनम
** के.पद्मावती

सारांश– *प्रस्तुत शोध पत्र मुस्लिम जाति की महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का विश्लेषण, दुर्ग एवं भिलाई शहर के मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों के सन्दर्भ मे किया गया है। भारतीय मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि प्राचीनकाल से ही मुस्लिम महिलाओं की स्थिति दयनीय है। सदियों से सभ्यता और संस्कृति के नाम पर महिलाओं की इच्छाओं और महत्वाकांक्षाओ को बांधा गया है, इसी वजह से मुस्लिम महिलाओं में शिक्षा का स्तर कम है तथा अधिकतर महिलाएं शिक्षा से वंचित भी रही हैं।*

मुख्य शब्द– महिला, स्थिति, सम्यता, संस्कृति

प्रस्तावना– भारत मे मुस्लिम धर्मावलम्बियों की संख्या लगभग 17 करोड़ 22 लाख़ है जो कि भारत की कुल आबादी का 14.23 प्रतिशत है, जो विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक राष्ट्र है। विश्व के देशो में सबसे ज्यादा मुस्लिम आबादी इण्डोनेशिया में है। इण्डोनेशिया और भारत के अलावा पाकिस्तान, बांग्लादेश, इजिप्ट, नाइजीरिया, ईरान आदि देश मुस्लिम बाहुल्य आबादी वाले देश है।

भारत के राज्यो और केन्द्र शासित प्रदेशों में सबसे ज्यादा मुस्लिम आबादी का प्रतिशत जम्मू एवं काश्मीर में 68 प्रतिशत और लक्ष्यद्वीप में 96 प्रतिशत है। भारत विश्व का सबसे बड़ा मुस्लिम अल्पसंख्यक आबादी वाला देश है। अल्पसंख्यक मुस्लिम समुदाय की अपनी ही कई समस्याएँ हैं। जैसे आर्थिक रूप से पिछड़े होने के साथ-साथ सामाजिक तथा राजनीतिक रूप से पिछड़ापन भी इस वर्ग मे विद्यमान है, शिक्षा के अभाव के कारण येवर्ग अपनी राष्ट्रीय पहचान को लेकर संघर्षरत् है। आजादी के इतने दशक बीत जाने के बाद भी यह वर्ग राजनीतिक, चिकित्सा तथा शिक्षा आदि क्षेत्रों मे अपर्याप्त प्रतिनिधित्व रखता है इस अल्पसंख्यक समुदाय की महिलाओं की स्थिति अन्य अल्पसंख्यक समुदाय की महिलाओं से निम्न है तथा विचारणीय तथ्य यह है कि इस पर अब तक

* शोधार्थी, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, प. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
** सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, शासकीय विश्वनाथ तामस्कर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

चिन्तन और मनन पूरी तरह से नही हुआ है। मुस्लिम महिलाओं को मुस्लिम समाज ने अनेक अधिकारो से वंचित किया गया है तथा समाजिक, आर्थिक क्षेत्र में भी मुस्लिम महिलाए पिछड़ी है उनकी स्थिति असंतोषजनक है। जिसके वजह से राष्ट्र के अनेक स्थानों पर गंभीर समस्याऐं उत्पन्न हो रही है, जो किसी भी समाज तथा राज्य दोनो के लिए घातक है।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक स्थिति को ज्ञात करना।
2. मुस्लिम महिलाओं की आर्थिक स्थिति को ज्ञात करना।

अध्ययन पद्धति- प्रस्तावित अध्ययन के लिए दुर्ग एंव भिलाई क्षेत्रों का चुनाव किया गया है।

उत्तरदाताओं का चुनाव- अध्ययन हेतु 110 मुस्लिम महिलाओं का चयन दैव निदर्शन पद्धति से किया गया है तथा अध्ययन के द्वारा उनकी सामाजिक एंव आर्थिक स्थिति का पता लगाया गया है।

तथ्यों का संकलन हेतु प्रयुक्त उपकरण एंव प्रविधि- अध्ययन के लिए तथ्यों का संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची उपकरण एंव अवलोकन प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण एंव प्रस्तुतिकरण-

अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण सारणीयन, विश्लेषण एंव प्रस्तुतिकरण, किया गया है। उत्तरदाताओं की सामाजिक स्थिति किसी भी व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का मूल्यांकन निम्न आधार पर आंका जाता है।

1. **पड़ोसी से संबंध-** वर्तमान स्थिति मे शहरों मे निवासरत् सामाजिक परिवेश मे पडोसियों का अध्ययन अत्यन्त जरूरी है, क्योंकि पड़ोसी ही वह पहला रिश्तेदार होता है। जो व्यक्ति के सुख-दुःख मे सबसे पहले सहभागी होता है। एक पड़ोसी का दूसरे पडोसी से संबंध कैसा है। यह एक-दूसरे के व्यवहार एवं संबंधो पर निर्भर करता है। ऐसा कहा जाता है कि जब जरूरत होती है रिश्तेदार से ज्यादा पड़ोसी पहले काम मे आते है परन्तु इसके लिए जरूरी है कि आपके पड़ोसी अच्छे हो, अध्ययन किये गये समूह मे पड़ोसियों के संबंध को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है।

2. **कठिनाइयों मे पड़ोसियों द्वारा मदद-** किसी भी व्यक्ति के लिए उनका परिवार पड़ोसी और उनके मित्रों की बहुत अहमियत होती है। ये सभी कारक व्यक्ति को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से भावनात्मक सहायता प्रदान करती है। इन सभी कारकों के बिना किसी भी व्यक्ति का जीना दूर्भर हो जाता है। पड़ोस या आस-पास रहने वाले लोग एक-दूसरे के सहायक होते है। खुशी का अवसर हो या दुख का अवसर हो पड़ोसी जितने काम आते है उतने दूर रहने वाले रिश्तेदार व सगे-सम्बन्धी नही। हमे पड़ोसीयों के साथ अच्छे व मधुर संबंध व व्यवहार रखना चाहिए तथा आवश्यकता पड़ने पर पड़ोसियो को एक-दूसरे की मदद के लिए हमेशा आगे आना चाहिए। उत्तरदाताओ द्वारा यह जानने का प्रयत्न किया गया है कि कठिनाइयों और परेशानी मे पड़ोसियों द्वारा मदद मिलती है या नही।

3. **सामाजिक कार्यक्रमों में सहभागिता-** हर मनुष्य एक सामाजिक-सांस्कृतिक प्राणी होता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक वह समाज मे ही रहता है सामाजिक कार्यक्रम या समारोह के माध्यम से ही हर मनुष्य एक-दूसरे से मिलकर अपनी समस्त आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है सामाजिक

कार्यक्रमों के माध्यम से किसी भी स्त्री की मिलनसार प्रवृत्ति तथा उसकी समाजिक स्वतंत्रता को प्रदर्शित करता है। भारतीय महिलाओं की स्थिति एक समान नही रही है, इसमे समय के अनुसार महिलाओं की स्थिति मे भी परिवर्तन हुआ है। समाज मे महिलाओं की स्थिति, सम्मान एवं उनको बराबरी का हक प्राप्त हुआ है। उत्तरदाताओ द्वारा उनकी सामाजिक कार्यक्रमो मे सहभागिता को जानने का प्रयत्न किया गया है।

4. सामाजिक बैठको में हिस्सा लेना– सामान्यतः यह देखा गया है कि शहरो में रहने वाली महिलाएं सामाजिक बैठको में पुरूषों के साथ हिस्सा लेकर अपनी सहभागिता दर्ज कराती है तथा सामाजिक निर्णयों पर अपने विचारों को खुलकर भी रखती है इन सभी विचारों पर ही समाज का मुखिया अपने निर्णय पर पहुँच पाता है तथा अपने निर्णय से समाज को प्रभावित कर पाता है। उत्तरदाताओ द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया है कि उनकी सामाजिक बैठको मे हिस्सेदारी है या नहीं

5. शैक्षणिक स्थिति का विश्लेषण– शिक्षा मानव को एक अच्छा इंसान बनाती है। शिक्षा से उचित आचरण, कौशल, तकनीकी दक्षता, नैतिकता तथा मानसिक रूप से मजबूती प्रदान करती है। शिक्षा प्रत्येक मनुष्य का पहला और सबसे आवश्यक अधिकार है। शिक्षा व्यक्ति के जीवन में एक लक्ष्य निर्धारित करने और आगें बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। शिक्षा किसी भी व्यक्ति के ज्ञान, कुशलता, आत्मविश्वास और व्यक्तित्व में सुधार करता है तथा सामाजिक विकास, आर्थिक वृद्धि और तकनीकी उन्नति का रास्ता प्रशस्त करती है।

तथ्यों का विश्लेषण–

तालिका क्रमांक – 1
पड़ोसियो के साथ संबंध का विवरण

क्र.	पड़ोसी से संबंध	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	मधुर संबंध	104	94.'55
2.	तनावपूर्ण संबंध	06	5.45
योग		110	100

तालिका क्रमांक – 2
पड़ोसी द्वारा मदद का विवरण

क्र.	पड़ोसी द्वारा मदद	आवृति	प्रतिशत
1.	हॉ	97	88.18
2.	न्ही	13	11.82
योग		110	100

तालिका क्रमांक – 3
सामाजिक बैठको मे हिस्सा लेने के विषय मे विवरण

क्र.	समाजिक बैठको मे हिस्सा लेना	आवृति	प्रतिशत
1.	हॉ	17	15.45
2.	नही	91	84.55
योग		110	100

तलिका क्रमांक– 4
समाजिक कार्यक्रमो मे हिस्सा लेने का स्वरूप का विवरण

क्र.	समाजिक कार्यक्रमों मे हिस्सा लेने का स्वरूप	आवृति	प्रतिशत
1.	अध्यक्ष	2	11.76
2.	आम नागरीक	15	88.24
योग		17	100

तालिका क्रमांक – 5
शिक्षा संबंधी विवरण

क्र.	शिक्षा संबंधी विवरण	आवृति	प्रतिशत
1	शिक्षित	48	43.64
2	अशिक्षित	62	56.36
योग		110	100

तलिका क्रमांक 1 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उत्तरदाताओं का 94.55 प्रतिशत पड़ोसियो का संबंध अच्छा और मधुर है। तथा 5.45 प्रतिशत उत्तरदाताओ का संबंध पड़ोसियों से तनावपूर्ण है। अतः यह कहा जा सकता है जिन उत्तरदाताओं का अपने पड़ोसियो से झगड़ा हुआ है उन उत्तरदाताओ का पड़ोसियो से संबंध खराब तथा जिन उत्तरदाताओ का संबंध अच्छा है उनका सामाजिक स्थिति अच्छी है

तलिका क्रमांक 2 के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि 88.18 प्रतिशत उत्तरदाताओ का पड़ोसियो द्वारा कठिनाइयो मे मदद प्राप्त होती है तथा 11.82 प्रतिशत उत्तरदाताओ को जिनकी पड़ोसियो से किसी भी बात पर तनाव है या किसी भी प्रकार से मदद प्राप्त नही होती है।

तलिका क्रमांक 3 के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक बैठको में हिस्सा लेने से संबंधित अधिकतर 84.55 प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक बैठको मे हिस्सा नही लेती तथा 15.45 प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक बैठको में हिस्सा लेती है। अर्थात् अधिकतम मुस्लिम महिलाए सामाजिक बैठको में हिस्सा नहीं लेती है जिससे उनके समाज मे होने वाले किसी भी गतिविधियों अथवा सामाजिक व सरकारी योजनाओं का भी फायदा नही ले पाती है।

तालिका क्रमांक 4 के अध्ययन के अनुसार यह स्पष्ट है की 11.76 प्रतिशत मुस्लिम महिलाए सामाजिक कार्यक्रमों मे अध्यक्ष पद के रूप मे हिस्सा लेती है तथा अधिकतम 88.24 प्रतिशत मुस्लिम महिलाएं सामाजिक कार्यक्रमों मे आम नागरीक के रूप मे हिस्सा ली है। अतः यह कहा जा सकता है की मुस्लिम महिलाएं चार दिवारी से बाहर निकलकर सामाजिक कार्यक्रमों मे आम नागरिक के रूप मे हिस्सा ले रही है।

तालिका क्रमांक 5 के अध्ययन के अनुसार यह स्पष्ट होता है की 56.36 प्रतिशत अधिकतम मुस्लिम महिलाएं अशिक्षित है तथा 43.63 प्रतिशत मुस्लिम महिलाएं ही शिक्षित है। अर्थात अधिकतम मुस्लिम महिलाएं अशिक्षित है जिससे वे सामाजिक व आर्थिक दोनो रूप से पिछड़ी हुई है। अशिक्षा ही उनके सोचने समझने व आगे बढ़ने से रोकती है।

उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति का विवरण– आर्थिक स्थिति का

मूल्यांकन निम्न आधारों पर किया जा सकता है।

1. **मकान**– किसी भी मकान का मुख्यतः दो प्रकार के हो सकते है। पहला किराये का और दूसरा स्वयं का मकान। आवास एक मनुष्य की मौलिक आवश्यकताओं मे से एक है जिसका प्रभाव स्वास्थ्य, शांति कुशलता तथा जीवन के सभी प्रहलुओं पर पड़ता है।

2. **मकान का स्वरूप**– मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों मे घनत्व तथा स्थानात्मक भिन्नता है। प्रत्येक मनुष्य अपनी आय तथा आवश्यकता के आधार पर है इसलिए उनके मकान के स्वरूप की जानाकरी ली गई है।

3. **आय का स्त्रोत**– महिलाओं में आर्थिक आत्मनिर्भरता स्वंतत्रता समानता ही यह निर्धारित करती है किवह कितने सशक्त है जब परिवार व समाज की सहयोग तथा असहयोग की स्थिति में होते है। ऐसे समय मे मुस्लिम महिलाए को चाहिए की अपनी अस्मिता एंव स्वयत्तता की रक्षा कर सके तथा कार्यशील होना भी स्वालम्बन की एक दिशा है। उत्तरदाताओ की आर्थिक स्थिति ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित तालिका प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रमांक 6

उत्तरदाताओं का मकान का विवरण

क्र.	उत्तरदाताओ का मकान	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	स्वयं का मकान	47	42.73
2.	किराये का मकान	63	57.27
	योग	110	100

तालिका क्रमांक 7

उत्तरदाताओं के मकान का स्वरूप का विवरण

क्र.	उत्तरदाताओं के मकान का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	कच्चा मकान	67	60.91
2.	पक्का मकान	12	10.91
3.	अर्धपक्का मकान	31	28.18
	योग	110	100

तालिका क्रमांक 8

उत्तरदाताओं के कार्य संबधी विवरण

क्र.	कार्य संबंधी विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	कार्यरत्	52	47.27
2.	अकार्यरत्	58	52.73
योग		110	100

तालिका क्रमांक 9

कार्य का स्वरूप/आय का स्त्रोत संबंधी विवरण

क्र.	कार्य का स्वरूप/आय का स्त्रोत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	सिलाई कढ़ाई	24	46.15
2.	काम वाली बाई	15	28.85
3.	नौकरी	2	3.85
4.	व्यवसाय	4	7.69
5.	मजदूरी	7	13.46
	योग	52	100

प्रस्तुत की गई तालिका क्रमांक 6 के अध्ययन से उत्तरदाताओ के आवास सम्बंधी

जानकारी प्राप्त की गई है कुल उत्तरदाताओ के अध्ययन से यह पाया गया है कि 57.27 प्रतिशत किराये के आवास मे निवासरत् है तथा 42.73 प्रतिशत उत्तरदाताओ के पास आज भी उनका स्वमं का मकान नही है। जो उनके कमजोर आर्थिक स्थिति को बताता है।

तालिका क्रमांक 7 के अध्ययनगत समूह के सभी उत्तरदाताओ के मकान के स्वरूप का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि अधिकांश 60.91 प्रतिशत उत्तरदाता कच्चे मकानो मे निवासरत है तथा 28.18 प्रतिशत उत्तरदाता अधपक्के मकानो मे निवासरत् है तथा 10.91 प्रतिशत ही उत्तरदाताओ के पास पक्के मकान की सुविधा है। अर्थात् मुस्लिम महिलाओ के पास निवास के लिए पक्के मकान की उपलब्धता भी नही है जो उनको आर्थिक रूप से कमजोर करती है। अतः कहा जा सकता है कि आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण अधिकांश कच्चे आवासो मे निवासरत है।

तालिका क्रमांक 8 के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि अध्ययनगत समुह की अधिकांश महिलाएं अकार्यश्त् है अर्थात 52.73 प्रतिशत महिला उत्तरदाता कार्यरत है अतः यह कहा जा सकता है कि इस समुह मे बेरोजगारी विद्यमान है जो उनकी आर्थिक स्थिति के लिए धातक है।

तालिका क्रमांक 9 से स्पष्ट होता की मुस्लिम महिला उत्तरदाता जो कार्यरत् है उनकी कार्य की प्रकृति किस प्रकार की है। तालिका से स्पष्ट होता है 46.15 प्रतिशत उत्तरदाता धर बैठे कार्य करती है। 28.85 प्रतिशत उत्तरदाता दूसरो के घरो मे काम करती अर्थात् कामवाली बाई के रूप मे कार्यरत है, जो उनके कमजोर आर्थिक स्थिति की जानकारी देता है। 3.85 प्रतिशत नौकरी, 7.69 प्रतिशत व्यवसाय तथा 13.46 प्रतिशत मजदूर अर्थात् अधिकतर महिलाओ का आय का स्त्रोत उनका धर बैठे काम जैसे सिलाई, कढाई का कार्य करके अपना जीवनयापन करती है अतः यह कहा जा सकता है कि मुस्लिम महिलाएं आर्थिक रूप से कमजोर है।

निष्कर्ष–

दुर्ग-भिलाई शहर के मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों मे इन महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं पाई गई। शिक्षा के स्तर में कमी इसका एक प्रमुख कारण रहा। मुस्लिम समाज की संस्कृति एवं सभ्यता उन्हे समाज में आगे आने से रोकती है। इन महिलाओं को समाज मे अनेक अधिकारों से वंचित रखा गया जिसकी वजह से इन महिलाओं में असंतोष की भावना है तथा शिक्षा की कमी ने आगे बढ़ने की इच्छा खत्म कर रही है। जो कि समाज व राष्ट्र दोनो के लिए सही नही है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. Shodhganga.ifnflibnet.ac.in-13_chapter9.pdf
2. Janghade, sunita 2017,An International registered & referred monthly journal. ISSN-0973-1628, page no. 55-57.
3. https://hi.m.wikipedia.org
4. https://www.samparkfoundation.org

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

गुप्तोत्तरकालीन भारत में आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ : एक विमर्श

* अमोल कुमार

सारांश– *गुप्तकाल को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग कहा जाता है। मौर्य शासन के पतन के पश्चात् नष्ट हुई, भारत की राजनीतिक एकता को गुप्त शासकों ने पुनः अर्जित किया। लगभग सम्पूर्ण भारत को एक राजनीतिक छत्र के अधीन कर शक्तिशाली 'विदेशी आक्रान्ताओं का सफलतापूर्वक सामना कर भारत की स्वतंत्रता को अक्षुण्ण रखा। इस युग में भारत ने राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं कला के क्षेत्र में अपार उन्नति की। विदेशी लेखकों द्वारा भी प्रशंसित, सुखी एवं समृद्ध समाज की स्थापना, वृहत्तर भारत की अवधारणा की क्रियान्विति, गुणग्राहकता, धर्म–सहिष्णुता, इस युग की प्रमुख देन थी। सांस्कृतिक उन्नति होने के इस युग के विषय में जानने के लिए विभिन्न स्त्रोत एवं अभिलेख उपलब्ध हैं।*

मुख्य शब्द– स्वर्ण युग, पतन, अभिलेख, सांस्कृतिक उन्नति

गुप्तकाल में तथा उसके पश्चात् अनेक विदेशी यात्रियों ने भारत की यात्रा की जिन्होंने अपने वृत्तान्तों में गुप्तकाल संबंधी अनेक तथ्यों का उल्लेख किया है। इन विदेशी यात्रियों में फाह्यान सुंग-युन ह्वेनसांग, इत्सिंग तथा अलबरूनी मुख्य रूप से उल्लेखनीय है। फाह्यान चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन काल में भारत आया था। उसके वर्णन से तत्कालीन सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति के विषय में पता चलता है। सुंग-युन ने विशेष तौर पर हूण-आक्रमण के विषय में प्रकाश डाला है। ह्वेनसांग यद्यपि हर्षवर्धन के शासनकाल में भारत आया था, परन्तु गुप्तकाल के विषय में भी उसके वर्णन से जानकारी मिलती है। इत्सिंग सतवीं शताब्दी में भारत आया। उसके वर्णन से गुप्तों के मूल-निवास-स्थान के विषय में महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है। इसी प्रकार अलबरूनी ग्यारहवीं शताब्दी के इस मुसलमान यात्री के वर्णन से गुप्त सम्वत् की तिथि को निर्धारित करने में सहायता मिलती है।

गुप्तवंश के इतिहास के निर्माण में, उत्तर भारत के विभिन्न स्थानों से प्राप्त अभिलेखों से महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। ये गुप्त अभिलेख शिलाओं, स्तम्भों एवं ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण हैं। इन अभिलेखों की भाषा संस्कृत हैं। इन अभिलेखों में शासकों की वंशावलियाँ शासक तथा प्रशस्तिकारों के नाम उत्कीर्ण है। इसलिए गुप्त अभिलेख

* प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर।

सर्वाधिक प्रामाणिक स्त्रोत माने जाते हैं। अभिलेखों के प्राप्ति-स्थल के आधार पर साम्राज्य की सीमाओं का निर्धारण करने में सहायता मिलती है। ऐतिहासिक दृष्टि से प्रमुख गुप्त-अभिलेख समुद्रगुप्त के प्रयाग एवं ऐरण अभिलेख, चन्द्रगुप्त के महरौली एवं उदयगिरि गुहा अभिलेख, कुमारगुप्त के मिलसद, गढवा, मन्दसौर अभिलेख एवं स्कन्दगुप्त के भीतरी तथा कहौम अभिलेख है।

गुप्तकालीन मुद्राओं से तत्कालीन स्थिति पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। गुप्तयुग से भारतीय मुद्रा के इतिहास में नवीन युग का प्रारंभ होना माना जाता है। गुप्त काल में स्वर्ण, चाँदी एवं ताँबे की मुद्राओं का निर्माण हुआ था। मुद्राओं पर उत्कीर्ण चित्र से सम्राटों की शारीरिक बनावट एवं व्यक्तित्व के विषय से पता चलता है। कुछ मुद्राओं पर गुप्त-शासक को सिंह का शिकार करते हुए दिखाया गया है जिससे उसकी शक्ति एवं रूचि का पता चलता है। चन्द्रगुप्त प्रथम की मुद्राओं पर उसकी पत्नी कुमारदेवी का भी चित्र उत्कीर्ण होने से चन्द्रगुप्त का लिच्छवियों से संबंध के विषय में जानकारी मिलती है। गुप्तकालीन अनेक मुहरें वैशाली से प्राप्त हुई हैं, जिनसे तत्कालीन प्रान्तीय तथा स्थानीय व्यवस्था के बारे में जानकारी मिलती है।

गुप्तकालीन स्मारक एवं कला कृतियों से भी उनके बारे में महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त होती है। गुप्तकाल के अनेक स्मारक एवं कलाकृतियाँ प्राप्त हुई हैं जिनसे तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति पर विशेष रूप से प्रकाश पड़ता है। इन स्मारकों से गुप्तकाल में भारत की सांस्कृतिक उन्नति तथा राजा और प्रजा की धार्मिक भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। गुप्तकालीन कलाकृत्तियों से गुप्त शासकों के धर्मसहिष्णु होने के विषय में भी पता चलता है। गुप्तकालीन स्मारकों में 'भूमरा' का शिवमंदिर, तिगवा का विष्णु मंदिर, नचना का पार्वती मंदिर, भीतरगाँव का लाड़खान मंदिर है जिनसे गुप्तकाल से प्रारंभ हुई शिखर बनाने की परम्परा के विषय में पता चलता है। मन्दिरों के अतिरिक्त गुप्तकालीन अन्य प्रमुख स्मारक स्कन्दगुप्त का भीतरी-स्तम्भ बुधगुप्त का गरूण-चन्द्रगुप्त का महरौली लौह-स्तम्भ तथा शिवजी, विष्णु एवं बुद्ध के अतिरिक्त दुर्गा गंगा और यमुना आदि की मूत्तियाँ हैं। चित्रकला की दृष्टि से अजन्ता एवं बाघ की गुफाओं के चित्र अनुपम हैं।

गुप्तकाल का महत्वपूर्ण पक्ष सामन्तिक लक्षण का उभार है। पुरोहितों और प्रशासकों को क्षेत्र-विशेष में कर-ग्रहण और शासन करने की रियायत का दिया जाना, जिसे ग्रामदान कहते हैं। इस प्रथा का आरंभ ढक्कन में सातवाहनों ने किया, और गुप्त काल में खासकर मध्य प्रदेश में, तो यह सामान्य परिपाटी बन गई थी। धर्माचायों को कर-मुक्त भूमि दान में दी जाती थी और उन्हें वैसे सभी कर उगाहने का अधिकार भी दे दिया जाता, जो कर अन्यथा राजकोष में जाते। जो ग्राम दे दिए जाते थे, उनमें राजा के अधिकारियों और अमलो को प्रवेश करने का हक नहीं रहता था। हिताधिकारी वहीं के अपराधकर्मियों को सजा भी दे सकता था। गुप्तकाल में अधिकारियों को वेतन का भुगतान करने की प्रक्रिया एवं आधार क्या था? यह स्पष्ट नहीं है। जमीन देकर वेतन भुगतान करने के बारे मे स्पष्ट रूप से कोई चर्चा नहीं किया गया है। स्वर्ण मुद्रा की बहुतायत से यह लक्षित होता है कि ऊँचे अधिकारियों को नगद वेतन देने की परिपाटी चलती रही, किन्तु उनमें कुछ-न-कुछ अधिकारी अपना परवना भूमि के जरिए भी प्राप्त करते थे।

चूँकि साम्राज्य के प्रशासन सम्बन्धी बहुत सारे काम सामन्तों और हिताधिकारियों के हाथों ही सम्पन्न

हो जाते थे, इसलिए मौर्यो की भाँति गुप्तों को अधिक अधिकारी वर्ग रखने का आवश्यकता नहीं रही थी। बहुत अधिक अधिकारी रखना इसलिए भी अनावश्यक हो गया होगा, क्योंकि मौर्य राज्य की भाँति गुप्त राज्य बड़े पैमाने पर आर्थिक कार्यकलाप में संलग्न नहीं था। ग्राम और नगर के प्रशासन में शिल्पियों वाजिकों, श्रेष्ठियों आदि के भाग लेने से अधिकारियों की अधिक संख्या की आवश्यकता नहीं रह गयी थी। गुप्तों का मौयों की भाँति न लम्बा-चौड़ा प्रशासन तंत्र था और न उन्हें उसकी आवश्यकता ही थी। इस कारण कई संदर्भो में गुप्तों के राजनीतिक प्रणाली एवं सामाजिक क्षेत्रों में सामन्ती व्यवस्था का हस्तक्षेप व्यापक रूप से परिलक्षित होता है।1

गुप्तकाल में ब्राह्मणों को बड़े पैमाने पर ग्राम दिया जाता था। जो इस बात का द्योतक है कि ब्राह्मणों की श्रेष्ठता एवं महत्व गुप्तकाल में भी रही थी। ब्राह्मण गुप्त-वंशियों को क्षत्रिय मानने लगे जबकि वे मूलतः वैश्य थे। ब्राह्मणों ने गुप्त राजाओं को देवताओं के गुणों से अलंकृत रूप में चित्रित किया। इससे गुप्त राजाओं की हैसियत धर्मशास्त्र सम्मत की गई और वे ब्राह्मण प्रधान वर्ण व्यवस्था के परम प्रतिपालक हो गए। भारी संख्या में प्राप्त ग्राम-दानों के फलस्वरूप ब्राह्मणों ने खूब धन-संचय किया। इस प्रकार ब्राह्मणों ने उस समय बहुत सारे विशेषाधिकार प्राप्त किये जिसकी चर्चा लगभग पांचवी सदी में रचित नारद स्मृत्ति में गिनाए गए है।[2]

वर्ण विभिन्न प्रकार के जातियों एवं उपजातियों में बंटे हुए थे। इसके दो कारण थे भारी संख्या में विदेशों से आए लोग भारतीय समाज में घुल-मिल गए और उन विदेशियों का समूह एक-एक खास हिन्दू जाति समझा जाने लगा। चूँकि विदेशी लोग विजेता के रूप में आए इसलिए समाज में उन्हें क्षत्रिय का स्थान मिला। हम लोग जो पांचवी सदी का अंत होते-होते आए। अन्ततः राजपूतों के छत्तीस कुलों में से एक कुल के मान लिए गए। आज भी कुछ राजपूत इस उपाधि धारण किए हुए है। जातियों की संख्या बढ़ने का दूसरा कारण था ग्राम दान की प्रक्रिया में बहुत से कबायली लोगों का हिन्दू समाज में समा जाना। कबायली सरदार लोग उच्च कुल के माने गए। किन्तु उनके सामान्य स्वजनों को नीच कुल का माना गया, और हर कबीला अपने नए जीवन में एक-नए जाति के रूप में अवतीर्ण हुआ। यह प्रक्रिया किसी-किसी रूप में आज तक चालू है।

इस काल में शूद्रों की स्थिति सुधरने लगी थी। अब उन्हें रामायण, महाभारत और पुराण सुनने का अधिकार मिल गया था। वे अब कृष्ण नामक एक नए देवता की पूजा भी कर सकते थे। उन्हें कुछ गृह्य संस्कारों या घरेलू अनुष्ठनों का भी अधिकार मिला। इन कर्मो में अवश्य ही पुरोहितों को दक्षिणा प्राप्त होती थी। ये सभी शूद्रों की आर्थिक स्थिति में हुए सुधार के परिणाम थे। सातवीं सदी से लेकर उनकी पहचान मुख्य रूप से कृषक के रूप में होने लगी थी, जबकि पूर्व काल में उनका दर्शन अपने ऊपर के तीनों वर्णो के वास्ते खटनेवाले सेवक, दास और कृषि-मजदूर के रूप में ही होता है।

परन्तु आलोच्य काल में अछूतों की संख्या में वृद्धि हुई, विशेषरूप से चाण्डालों की संख्या में चाण्डाल समाज में बहुत ही पहले ईसा पूर्व पाँचवी सदी से ही दिखाई देते हैं। ईसा की पाँचवी सदी में आकर उनकी संख्या इतनी बढ़ गई और उनके अछूत होने की भावना इतनी प्रखर हो गई कि उनकी ओर चीनी यात्री फाहियान की दृष्टि बरबस खिच गई जिसने लिखा है कि गाँव के बाहर ही वे बसते थे और मांस का व्यवसाय करते थे, जब कभी वे नगर में प्रवेश करते, उच्च वर्ण के लोग उनसे दूर ही रहते क्योंकि ऐसा माना जाता था कि उनके स्पर्श से सड़के अपवित्र हो जाती है। गुप्त काल में शूद्रों की भाँति स्त्रियों को भी रामायण, महाभारत और पुराण सुनने का अधिकार प्राप्त हुआ और उनके लिए कृष्ण का पूजन ही निहित किया गया। लेकिन गुप्त पूर्व काल और गुप्त काल में भी उच्च वर्णो की स्त्रियों में अपना

स्वतंत्र जीवन-निर्वाह का जरिया रखने की अनुमति नहीं थी। निचले दो वर्णों की स्त्रियाँ अपने जीवन-निर्वाह के लिए अर्जन कर सकती थी। इतने से ही उन्हें बहुत हद तक स्वतंत्रता का एहसास होने लगा था, परन्तु उच्च वर्गों की स्त्रियाँ अभी भी इस स्वतंत्रता से वंचित थी। इसके पीछे मुख्य रूप से यह व्याख्या थी कि चूँकि वैश्य और शूद्र स्त्रियाँ खेती का काम और घरेलू काम करती हैं इसलिए उन्हें पति की पराधीनता नहीं रहती है। गुप्त काल के विपरीत इस काल में उच्च वर्णों के लोग अधिक से अधिक जमीन अर्जित करते गए। जिससे उनमें एक से ज्यादा शादी करने एवं अधिक-से-अधिक सम्पत्ति जमा करने की प्रवृत्ति का विकास हुआ। पितृतंत्रात्मक व्यवस्था में वे पत्नी को निजी सम्पत्ति समझने लगे। यहाँ तक की पत्नी से मृत्यु में भी साथ देने की आशा करने लगे। उस समय आत्मदाह की प्रवृत्ति बढ़ी जब पति के मरने पर उसकी पत्नी का पति की चिता में आत्मदाह करने का पहला उदाहरण गुप्तकाल में ही 510 ई. में मिलता है। फिर भी, गुप्तोत्तर काल की कुछ स्मृतियों में कहा गया है कि यदि पति खो जाए मर जाए, नपुंसक हो जाए संन्यास ले ले या जाति से बहिष्कृत हो जाए तो स्त्री पुनर्विवाह कर सकती है।[3]

उच्च वर्णों की स्त्रियों की पराधीनता का मुख्य कारण यह था कि वे अपने जीवन-निर्वाह के लिए पूर्णतः अपने-अपने पतियों पर आश्रित रहती थीं। उन्हें स्वामित्वधिकार नहीं था। लेकिन सबसे पुरानी स्मृतियों में भी यह कहा गया है कि विवाह के समय वधू को भेंट के रूप में माँ-बाप द्वारा दिए गए आभूषण अलंकरण, वस्त्र आदि सामान स्त्रीधन होते हैं। गुप्तकाल और गुप्तोत्तर काल की स्मृत्तियों में तो इन भेंटों का दायरा काफी बढ़ाया गया है। उनके अनुसार, विवाह आदि के समय न केवल वधु के माता-पिता से बल्कि सास-ससुर से भी वधू को जो कुछ उपहार मिलता है, वह स्त्रीधन होता है। छठी सदी के एक स्मृतिकार 'कात्यायन' के अनुसार स्त्री, अपने स्त्रीधन के साथ अपनी अचल सम्पत्ति को भी बेच सकती है और गिरवी रख सकती है। इससे यह बिल्कुल स्पष्ट होता है कि कात्यायन के अनुसार जमीन में स्त्रियों को हिस्सा मिलता था, परन्तु भारत के पितृतंत्रात्मक समाज में बेटी को अचल सम्पत्ति का उत्तराधिकारी सामान्यतः नहीं मिलता है। इस तरह हम देखते हैं कि पूरा-का-पूरा समाज अपने विभिन्न स्वरूपों, जातियों, सामाजिक दायरों तथा उस समय स्थापित सामाजिक मान्यताओं पर निर्भर होते हुए कई प्रकार के वर्णों में विभाजित था। गुप्तकालीन सामाजिक व्यवस्था भी इस तरह की मान्यताओं पर ही निर्भर था। गुप्तकालीन समाज में भी पूर्ण रूप से वर्ण व्यवस्था कायम थी। वर्ण व्यवस्था के तहत् समाज चार भागों के विभाजित था और इस विभाजन का आधार कर्म था न कि जन्म। कालान्तर में वर्ण व्यवस्था के संरचना के तहत् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आ गये। आगे चलकर इन वर्णों से अनेक शाखाएँ और उपशाखाएँ प्रस्फुटित हुईं, जिन्हें धर्मशास्त्रों में जातियों, उपजातियों के नाम से पुकारा। कालान्तर में वर्ण और जाति का प्रयोग एक ही अर्थ में होने लगा और इस प्रकार यह सारी व्यवस्था विकृत होकर आज की जाति व्यवस्था में परिवर्त्तित हो गई, जो आज की सबसे बड़ी चुनौती है।

गुप्तकालीन समाज का मुख्य आधार वर्ण-व्यवस्था बन चुकी थी। वर्ण-व्यवस्था के तहत समाज चार भागों में विभाजित था- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। यह काल ब्राह्मण धर्म के 'पुनरुजीवन का काल था' समाज उसके प्रभाव से अछूता नहीं रह सका। इस काल के धर्मशास्त्रकारों ने पिछले युग में निर्धारित वर्ण व्यवस्था को तत्कालीन परिस्थितियों में अनुकूल परिवर्तन करके स्वीकार कर लिया। उस समय जाति संरचना उतनी जटिल नहीं हो पायी थी, क्योंकि विदेशी भी हिन्दुओं से घुलमिल रहे थे। इस युग में उद्योग एवं व्यवसाय जाति व्यवस्था के कुप्रभाव से बहुत हद तक वंचित थे।[4] इस शोध का मुख्य लक्ष्य गुप्तकालीन सामाजिक व्यवस्था में नवीन वर्णों के उदय एवं उसके विकास के सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन करना है।

सारतः कहा जा सकता है कि गुप्त युग में वैश्य वर्ण के पतन के कारणों एवं उसके पतन की प्रक्रिया क्रमिक रूप से हुई है। जैसा कि हम जानते है वैश्यों के व्यवसाय कृषि कार्य और वाणिज्य थे। वे सामाजिक संगठन के गत्यात्मक तत्त्व थे। विदेशी व्यापार तथा वाणिज्य की आवश्यकताओं के फलस्वरूप वे भारतीय और अभारतीय दोनों प्रकार के सामान्य जनों के निकट संपर्क में आते थे। वैश्य केवल सजातीय रूप में नहीं थे, उनमें कुछ कृषक, पशुपालक व्यापार, लोहार, बढ़ई, बुनकर तथा तेली थे। समस्त वैश्य जाति की अपेक्षा वे अपनी उपजातियों के प्रति अधिक जागरूक थे। वैश्य लोग अपनी दानशीलता के लिए भी प्रसिद्ध थे। उन्होंने पुण्यशालाएँ, चिकित्सालयों आदि खुलवायें जहाँ मुत भोजन तथा चिकित्सा का प्रबंध था। मन्दिर, मठों आदि की भी उन्होंने स्थापना की। इस तरह गुप्तकाल में वैश्य समुदाय अपने प्रगति के चरम शीर्ष पर था जहाँ वे आर्थिक रूप से काफी समृद्ध थे। लेकिन धीरे-धीरे इस वर्ग का प्रभाव आरंभ हो चुका था। प्रभाव की प्रक्रिया काफी लम्बी थी।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. सक्सेना एवं दत्ता, गुप्तकालीन भारत, पृष्ठ-199
2. उपरोक्त, पृष्ठ -200
3. प्राचीन भारत का राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास- नालन्दा खुला विश्वविद्यालय, पृष्ठ -180
4. उपरोक्त, पृ.181
5. भारत का स्वर्ण युग, पृष्ठ-68

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

भारत में प्रतिलिप्याधिकार के दृष्टिगत विभिन्न आयामों का विश्लेषणात्मक अध्ययन (भारतीय विधि के विशेष संदर्भ में)

* एस.पी. सिंह
** आनन्द कुमार द्विवेदी

सारांश– *बौद्धिक सम्पदा अधिकार विधियों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रतिलिप्याधिकार सम्बंधी विधि है। यह भारत में ब्रिटिश काल में सन् 1911 से लागू किया गया। सन् 1957 में प्रथम भारतीय प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम बनाया गया और 1958 से लागू किया गया। ये ऐसे अधिकार हैं जो कानून द्वारा साहित्यिक और कलात्मक कार्यो (जैसे पुस्तक और अन्य लेखन, संगीत संकलन, चित्रकारी, मूर्तिकला, कम्प्यूटर प्रोग्राम और फिल्म) के लेखकों के अधिकारों को प्रतिलिप्याधिकार द्वारा संरक्षित है। यह अधिकारों का एक समूह है जिसमें अन्य बातों के साथ–साथ, पुनरुत्पांदन, जनसमूह को सूचित करने, कार्य का अनुकूलीकरण और अनुवाद के अधिकार शामिल हैं। कापीराइट का विस्तार अभिव्यक्तियों के लिए किया जाएगा न कि विचारों प्रक्रियाओं, प्रचालन की विधियों या गणितीय अभिकल्प नाओं के लिए किया जाएगा। यह अधिनियम मानव संसाधन विकास मंत्रालय में उच्चं शिक्षा विभाग द्वारा प्रशासित किया जाता है। इसके अन्तर्गत साहित्य संबंधी कार्य, नाटकीय कार्य, संगीत संबंधी कार्य, कलात्मक कार्य, सिनेमेटोग्राफिक फिल्म, ध्वनि रिकार्डिंग आदि से संबंधित कार्य संरक्षित किये गये हैं।*

मुख्य शब्द– प्रतिलिप्याधिकार व मौलिक साहित्य, बौद्धिक सम्पदा, साहित्यिक चोरी

प्रस्तावना–

वे समस्त वस्तुएँ जो मानव ज्ञान से निःसरित होती हैं, चाहे वह विचार, आविष्कार, शब्द (कृति या उपन्यास), संगीत, नाट्य अथवा कला हों, चाहे वह ग्रन्थ के रूप में हों पदार्थ या वस्तु हों चाहे वह इन्टरनेट पर व्यक्ति का कोई भी भाग या अंश डाटाबेस के रूप में हों, कम्प्यूटर सश्वटवेअर हों चाहे हार्डवेयर की छोटी-छोटी इकाइयां इसमें समाहित हों जाती हैं। प्रतिलिप्याधिकार किसी साहित्यिक, संगीतात्मक अथवा कलात्मक कृति अथवा उसके रूप को प्रकाशित तथा बेचने के लिए एकमात्र वैधानिक रूप से सुरक्षिततता प्रदान करता है। यह एक वैधानिक विधि है जिससे लेखक, साहित्यिक, संगीत और कलात्मक कृति के निर्माता, रचयिता या उत्पादक को रक्षा प्रदान करता है। यह किसी और को कृतिकार की अनुमति बिना प्रसारित और पुनरुत्पादित करने से रोकता है।

* प्राध्यापक, विधि, शासकीय विधि महाविद्यालय रीवा, मध्यप्रदेश
** शोध छात्र, विधि, अवधेश प्रताप सिंह महाविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश

कोलीन को बुल्ड इंग्लिश लैंग्वेज डिक्शनरी के अनुसार प्रतिलिप्याधिकार ग्रंथ पर संगीत का कोई अंश आदि पर इसके लेखक का कानूनी अधिकार है। संगीतकार अथवा प्रकाशक ऐसे व्यक्ति हो सकते हैं, जिन्हें पुनरुत्पादन के लिए इसकी अनुमति प्राप्त होती है।1 लेखन, संगीत आदि के बारे में व्यक्ति अथवा संस्था का स्वामित्व होता है, जो उसे प्रकाशित, प्रसारित, संचारित कर सकते हैं। इसका प्रत्यक्ष अर्थ है जो व्यक्ति अपने ज्ञान, कौशल से जो कुछ रचित या सूचित करता है यदि समाज के अन्य व्यक्ति उसका उपयोग करते हैं तो उन्हे उपयोग करने का प्रतिफल सृजनकर्ता को देना पड़ता है।

शोध का उद्देश्य-

1. सूचना प्रौद्योगिकी के कारण प्रतिलिप्याधिकार संबंधी कानून ग्रंथ, कला, संगीत, रिकार्डिग, फिल्म, डेटाबेस, सश्वटवेयर, छायाचित्र आदि के स्वरूप में आने वाले परिवर्तनों एवं इससे संबंधित विधियों में सुधारात्मक सुझावों का अध्ययन करना।
2. प्रतिलिप्यधिकार कानून ग्रंथ, कला, संगीत, रिकार्डिग, फिल्म, डेटाबेस, सश्वटवेयर, छायाचित्र आदि को संरक्षण किस तरह प्रदान करता है का अध्ययन करना।
3. संप्रेषण तकनीकी, सूचना प्रौद्योगिकी के विकास की वृद्धि से यह कानून पर्याप्त मात्रा में संरक्षण देने में किस तरह सफल है आदि का अध्ययन करना।

शोध का क्षेत्र एवं प्रविधि-

प्रस्तुत अध्ययन भारत में लागू प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम, 1957 के नये आयामों से सम्बंधित है जिसकी पूर्णता क्षेत्रीय सर्वेक्षण से प्राप्त न्यायिक एवं सामाजिक आंकड़ों द्वारा संभव हुआ है। अध्ययन में आवश्यकतानुसार द्वितीयक आंकड़ों का भी उपयोग किया गया है जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नल और विभिन्न न्यायालयों के निर्णय को समाहित किया गया है। यथा स्थान अग्र निर्णय व न्यायिक निर्णय को समाहित करते हुए कार्य को पूर्ण किया गया है।

व्याख्या एवं विश्लेषण-

प्रतिलिप्यधिकार अधिनियम,1957, के अनुसार प्रतिलिप्यधिकार' से अभिप्रेत किसी 'कार्य' को करने अथवा उसे अथवा उसके किसी महत्वपूर्ण भाग को करने के लिए प्राधिकृत करने के विशिष्ट अधिकार से है। यहाँ प्रयुक्त 'कार्य' शब्द से अभिप्राय है-

1. साहित्य-संबंधी कार्य- इसके कम्प्यूटर कार्यक्रम, तालिकाएं, समेकन एवं कम्प्यूटर डाटाबेस शामिल हैं।[2]
2. नाटकीय कार्य- इसके वाचन का कोई अंश, कोरियोग्राफिक कार्य अथवा मूक शो में मनोरंजन, दृश्य संबंधी प्रबंध अथवा अभिनय, जिसका रूप लिखित अथवा अन्य ढंग से निर्धारित है, शामिल है।[3]
3. संगीतमय कार्य- इसके संगीत कार्य, ऐसे कार्य की कोई लेखा-चित्रीय चित्रलिपि शामिल है परंतु इसमें गाए, बोले अथवा संगीत के साथ किए जाने वाले कोई शब्द अथवा कार्य शाममलि नहीं है।[4]
4. कलात्मक कार्य- इसका अर्थ है कि पेंटिंग, मूर्तिकल्प, ड्राइंग (रेखाचित्र, नक्शा, चार्ट अथवा योजना सहित), नक्काशी अथवा फोटोग्राफ चाहे उनके कलात्मक गुण हों अथवा नहीं। इसमें वास्तुशिल्प का कार्य तथा कलात्मक शिल्पकारी का कोई अन्य कार्य शामिल है।[5]

5. सिनेमेटोग्राफिक फिल्म :-इसका अर्थ है किसी माध्यम पर दृश्य रिकॉर्डिंग का कोई कार्य जो उस प्रक्रिया के माध्यम से तैयार किया जाता है जिससे किसी तरीके से चल तस्वीर तैयार की जा सके।[6]

6. ध्वनि रिकश्वर्डिंग- इसका अर्थ ध्वनियों की रिकॉर्डिंग से है जिससे ध्वनियाँ उत्पन्न की जा सकें। इसमें माध्यम पर ध्यान नहीं दिया जाता जिसके द्वारा ध्वनि उत्पन्न की जाती है।[7] संबंधित अधिकार' निष्पादकों के अधिकार है जैसे अभिनेता, गायक एवं संगीतकार, फोनोग्राफ एवं संचार संगठनों के प्रोड्यूसर।

प्रतिलिप्याधिकार कानून ग्रंथ, कला, संगीत, रिकार्डिंग, फिल्म, डेटाबेस, सश्वटवेअर, छायाचित्र आदि को संरक्षण प्रदान करता है। संप्रेषण तकनीकी, सूचना प्रौद्योगिकी के विकास की वृद्धि से यह कानून पर्याप्त मात्रा में संरक्षण देने में सफल नहीं हो पाता नजर आता है। कम्प्यूटर तकनीकी द्वारा इन सभी कृतियों का निजी स्वार्थ हेतु पुनर्निर्माण हो सकता है। इलेक्ट्र्श्वनिक माध्यमों से या इंटरनेट द्वारा इन सभी सृजनात्मक कृतियों का सहजता से हस्तान्तरण हो सकता है। यह सब होते हुए भी बडी मात्रा में यह कानून स्वामी को अपनी कृति के निर्माण, उत्पाद, प्रसारण, पुन:प्रसारण में संरक्षण देता है।

प्रतिलिप्याधिकार के विभिन्न आयाम-

1. पुन:प्रसारण के अधिकार .कृति का स्वामी अन्य किसी को उसकी प्रतिलिपि करने से रोक सकता है।[8]
2. क्रियान्वयन के अधिकार- सार्वजनिक प्रसारण के लिए कश्वपीराइट स्वामी की अनुमति लेनी होती है। फिल्म धारावाहिक, टेलिफिल्म आदि।[9]
3. रिकार्डिंग अधिकार- ध्वनि रिकश्वर्डिंग की प्रतिलिपि करने के लिए उसके स्वामी की अनुमति लेनी होगी। जैसे कम्पायलर, निर्माता आदि।[10]
4. चलचित्र अधिकार- छायांकन अधिकार के अधीन चलचित्र संरक्षित है।[11]
5. प्रसारण अधिकार- टेलिकम्यूनिकेशन, बिनतारी संदेश आदि से प्रसारित होने वाली कृति को भी प्रसारित करने के लिए कॉपीराइट स्वामी की अनुमति लेनी चाहिए।[12]
6. अनुवाद अधिकार- अनुवाद के लिए भी कृति के स्वामी की अनुमति लेनी पड़ती है।[13]
7. नैतिक अधिकार- बर्न और युनिवर्सल समझौते के अंतर्गत आनेवाले देशों से कॉपीराइट का पालन करने की अपेक्षा की जाती है। कश्वपीराइट समाप्त होने पर वह कृति सार्वजनिक उपयोग के लिए खुली हो जाती है। भले ही इंटरनेट द्वारा प्रकाशित क्यों न हुई हों।[14]
8. प्रतिलिप्याधिकार का अधिकार- साहित्यिक और कलात्मक कार्य के लेखक को दिया गया अधिकार और फोनोग्राम तथा प्रसारण संगठन के परफार्म, प्रोड्यूसर का अधिकार।
9. औद्योगिक संपदा अधिकार-विशिष्ट चिन्ह (जैसे ट्रेडमार्क), नई पहल, डिजाइन तथा प्रौद्योगिकी उत्प्रेरित करने के लिए संरक्षित औद्योगिक संपदा।

निम्न प्रकार की कृतियों पर प्रतिलिप्याधिकार-

1. मौलिक साहित्यिक, रंगमंचीय अथवा कलात्मक कृति पर प्रतिलिप्याधिकार[15]

2. फिल्म पर प्रतिलिप्याधिकार[16]
3. कंप्यूटर प्रोग्राम पर प्रतिलिप्याधिकार[17]
4. गीत-संगीत तथा अन्य रिकार्ड पर प्रतिलिप्याधिकार[18]

प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम,1957 के अनुसार-

1. कृति के रचनाकार का कविता, फोटोग्राफ, पेंटिंग आदि पर प्रतिलिप्याधिकार होगा।[19]
2. अगर किसी पत्र-पत्रिका में रोजगार के दौरान कृति रची गयी है तो पत्र-पत्रिका के प्रकाशक को अपनी किसी पत्र-पत्रिका में रचना प्रकाशित करवाने का अधिकार है। शेष सभी अधिकार लेखक के होंगे।[20]
3. अगर कोई फोटोग्राफ पेंटिंग/नक्काशी किसी व्यक्ति के भुगतान पर बनाई गयी हो तो भुगतान करने वाले को प्रतिलिप्याधिकार प्राप्त होगा।[21]
4. सरकार के अंतर्गत किए गये किसी रचनात्मक कार्य का प्रतिलिप्याधिकार सरकार का होगा। अगर कृति किसी सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थान ने बनाई या प्रकाशित की हो या किसी सरकारी प्रतिष्ठान के निर्देश पर तैयार की गयी है, तो प्रतिलिप्याधिकार उस संस्थान का माना जायेगा।[22]

प्रतिलिप्याधिकार का हस्तांतरण[23]

1. प्रतिलिप्याधिकार का मालिक प्रतिलिप्याधिकार के अधिकार को पूरी तरह या आंशिक रुप से किसी अन्य व्यक्ति को सौंप सकता है।
2. किसी भावी कृति का भी प्रतिलिप्याधिकार किसी को दिया जा सकता है। यह लाइसेंस लिखित या हस्तांतरित होना चाहिए।

प्रतिलिप्याधिकार का उल्लंघन नहीं-

1. निजी इस्तेमाल के लिए प्रतियां बनाना, इसमें किसी कंप्यूटर प्रोग्राम की बैकअप कापी बनाना भी शामिल है।[24]
2. किसी पत्र -पत्रिका/ फिल्म /फोटो प्रसारण के जरिए ताजा घटनाक्रम की खबर देने के लिए किसी रचनात्मक कृति की आलोचना अथवा समीक्षा करना प्रतिलिप्याधिकार का उल्लंघन नहीं है।[25]
3. न्यायिक अथवा संसदीय कार्यवाही की रिपोर्टिंग करना। मौलिक साहित्य, फिल्म प्रसारण फोटोग्राफ के छोटे अंश का विज्ञापन के रुप में प्रकाशन करना।
4. कृति के छोटे-छोटे उदाहरणों का सार्वजनिक पाठ करना।
5. कानूनी अधिकारियों के द्वारा मांगे जाने पर कृति की प्रमाणित प्रतियां प्रस्तुत करना।
6. किसी को पढ़ाने, समझाने या परीक्षा के दौरान कृति के किसी अंश का इस्तेमाल करना।
7. किसी शैक्षणिक संस्था की गतिविधियों के अंतर्गत साहित्यिक , रंगमंचीय अथवा संगीतिक कार्यक्रम में कृति अथवा उसके अंशों की प्रस्तुति।
8. किसी क्लब अथवा धार्मिक संस्था में कृति अथवा उसके अंशों की प्रस्तुति।
9. स्थापत्य या भवन निर्माण से जुड़ी कलात्मक कृति की पेंटिंग, ड्राइंग या फोटोग्राफ बनाना अथवा प्रकाशित करना।

प्रतिलिप्याधिकार संबंधी न्यायिक कसौटी–

1. इस्टर्न बुक कम्पनी बनाम नवीन जे. देसाई एवं अन्य- के वाद मे।यह निर्धारित कियागया कि वाद विधि के रिपोर्टो में मुख्य टिप्पणियॉ सम्पादिक टिप्पणियों आदी में प्रतिलिप्याधिकार निहित होता है।[26]
2. रघुनाथन बनाम आल इण्डिया रिपोर्ट[27] तथा योगेश चन्द चौधरी बनाम महीम चन्द राय[28] के वाद मे।यह निर्धारित किया गया कि वाद विधि के रिपोर्टो में रिपोर्ट बनानें वाले का प्रतिलिप्याधिकार सिर्फ मुख्य टिप्पणी तक ही सीमित होता है।
3. इन्फोसिस सल्यूशन एवं अन्य बनाम केरल ला टाइम्स[29] एवं अन्य के वाद में यह अभिनिर्धारित किया गया कि रिपोर्टर का प्रतिलिप्याधिकार निर्णय के पूरी रिपोर्ट पर होता है। न्यायमूर्ति ने ऐसी रिपोर्ट को भारतीय प्रतिलिप्याधिकार के भाग 13(1)(ए) के साहित्यिक कृति माना है।
4. इस्टर्न बुक कम्पनी बनाम डी.जी. मोदक एवं अन्य[30] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि जहाँ तक निर्णय की रिपोर्ट प्रकाशित करने का अर्थ है इसमें कोई प्रतिलिप्याधिकार नही हो सकता है।
5. एक्सप्रेस न्यूज पेपर बनाम लिवर पूल डेली पोस्ट, में, जहाँ वादी में कोर्ट ऑफ अपील ने वादी के इस दावे को नकार दिया कि Exxon शब्द पर उसका प्रतिलिप्याधिकार है क्योंकि अदालत की दृष्टि में यह ''सिर्फ वर्णमाला के चार अक्षरों का एक कृत्रिम संचय है जिससे किसी उद्देश्य की पूर्ति तभी हो सकती है जब उसे अंग्रेजी के अन्य शब्दों के साथ मिलाकर इस्तेमाल किया जाय, ताकि उससे वादी के समूह की एक या अन्य कम्पनियों को पहचाना जा सके।''

निष्कर्ष–

भारतीय प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम में व्यक्ति की मौलिक कृति पर उसके अधिकार को बनाए रखने के लिए पर्याप्त प्रावधान किए गए हैं। प्रतिलिप्याधिकार केवल मौलिक कृति पर ही लागू होता है। कृति के पुनर्मुद्रण और संशोधित संस्करणों पर भी प्रतिलिप्याधिकार जारी रहता है, अप्रकाशित कृतियों पर भी प्रतिलिप्याधिकार होता है, कोई कृति साहित्यिक है या नहीं, इसका फैसला न्यायालय विवेक पर निर्भर है। अपंजीकृत कृतियों पर प्रतिलिप्याधिकार होता है, कृति का स्वामी कृति में प्रतिलिप्याधिकार का प्रथम स्वामी होता है। मौलिक कृति (चित्रों को छोड़कर) पर रचयिता की मृत्यु के 50 वर्षों बाद तक प्रतिलिप्याधिकार कानून बना रहता है, यदि रचयिता एकाधिक हों तो जिस रचयिता की मृत्यु सबसे बाद में है, उसके 50 सालों बाद तक कृति पर प्रतिलिप्याधिकार बना रहता है। चित्र के मामले में प्रतिलिप्याधिकार की अवधि, चित्र बनाने के समय से 50 साल बाद तक होती है। यदि किसी कृति की प्रतियों को सार्वजनिक रूप से निःशुल्क वितरित किया जाता है, तो भी उसे प्रकाशित माना जाता है। प्रतिलिप्याधिकार पूर्ण कृति पर ही नहीं, बल्कि इसके भाषान्तर या अनुकूलन के पर्याप्त भाग के सम्बन्ध में यह सब कार्य किए जाने पर भी लागू होता है। कृति के स्वामी को उसका भाषान्तर तैयार करने और प्रकाशित करने का अनन्य अधिकार होता है। भाषान्तर कृति पर भी रचयिता को मूल कृति की भाँति प्रतिलिप्याधिकार हासिल होता है। प्रतिलिप्याधिकार का उल्लंघन होने पर सिविल और आपराधिक, दोनों प्रकार के

मामले बनते हैं। प्रतिलिप्याधिकार कानून का उल्लंघन करने पर एक वर्ष तक का कारावास या जुर्माना या दोनों ही दण्ड दिए जा सकते हैं। अनुसन्धान, निजी अध्ययन, समालोचना या समीक्षा के लिए कृति का प्रयोग किया जा सकता है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. Acharya, N-K- (2001)A Text book on Intellectual property rights- Hyderabad,Asia Law House.
2. M/S- Phonographic Performance --- vs Hotel Gold Regency & Ors- on 3 November] 2008 Delhi High Court
3. The Federation Of Hotels & --- vs Union Of India & Ors- on 7April] 2011 Delhi High Court
4. Lahari Recording Company Private --- vs Sourabh MarketingAndAgencies --- on 8 February] 2000 Karnataka High Court
5. Aamir Raza HusainAndAnr- vs Cinevistaas LimitedAnd Ors- on 18 September] 2002 Bombay High Court
6. Music Choice India Private --- vs Phonographic Performance --- on 22 January] 2009 Bombay High Court
7. Garapati Prasada Rao vs Parnandi SarojaAnd Others on 12April] 1991Andhra High Court
8. R-GAnand vs M/S- DeluÛ Films & Ors on 18August] 1978 Supreme Court of India
9. Indian Performing Right Society --- vs Eastern India Motion Pictures --- on 14 March] 1977 Supreme Court of India
10. Barbara Taylor Bradford vs Sahara Media Entertainment Ltd- on 16 July] 2003 Calcutta High Court
11. Phonographic Performance --- vs Cri Events Private Limited & Ors on 28 July] 2011 Delhi High Court
12. Mylan Laboratories Limited vs Union Of India & Ors on 8 July] 2019 Delhi High Court
13. Eastern Book Company & Ors vs D-B- Modak &Anr on 12 December] 2007 Supreme Court of India
14. Collins Cobuild English Language Dictionary- (1987) London, Collins
15. Eastern Book Company & Others vs Navin J- Desai &Another] D-B- --- on 17 January] 2001 Delhi High Court
16. Super Cassettes Industries --- vs Mr Chintamani Rao & Ors- on 11 November] 2011 Delhi High Court
17. Jagdish Prasad Gupta vs Parmeshwar Prasad SinghAnd Ors- on 30 March, 1965 Patna High Court
18. Super Cassettes Industries Ltd- vs Hamar Television Network Pvt- --- on 24 May, 2010 Delhi High
19. ShriAnand PatwardhA N vs The Plaintiff IsA Docume NtA Ry --- on 31 March, 2009 Bombay High Court
20. Pine Labs Pvt- Ltd- vs Gemalto Terminals India Pvt- Ltd- --- on 8 December, 2009 Delhi High Court
21. Dabur India Limited vs Shree BaidyanathAyurved Bhawan --- on 2 July, 2012 Delhi High Court
22. OriginalApplication No-96 Of --- vs Eastern Indian Motion Picture --- on 5

June,2012 Madras High Court
23. Pranda Jewelry Pvt- Ltd-And 2 Ors vsAarya 24KAnd 5 Ors on 1April, 2015 Bombay High Court
24. The Indian Performing Right --- vs Entertainment Network (India) --- on 31August,2016 Bombay High Court
25. Syndicate Of The Press Of The --- vs B-D- Bhandari &Anr- on 3August, 2011 Delhi High Court
26. 2001 पी.टी.सी. (21) 243, दिल्ली
27. ए.आई.आर. 1971 बम्बई, 481
28. ए.आई.आर. 1915 कलकत्ता, 112
29. 2007 (34) पी.टी.सी. 231 केरल
30. 2008 (36) पी.टी.सी. (231) एस.सी.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

रीवा जिला की भूमि पोषण वहन क्षमता

* आलोक कुमार राय
** संदीप कुमार पटेल

सारांश– *भूमि भार वहन क्षमता का विचार सर्वप्रथम एल.डी. 1956 स्टैम्प ने रियोडिजनेरो में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय भौगोलिक संघ के अध्यक्षात्मक भाषण में प्रस्तुत किया। भारत में इस विधि के प्रयोग में प्रो. सफी (1967) तथा प्रो. जसवीर सिंह (1972–74) का स्थान प्रमुख है। भूमि भार वहन क्षमता किसी क्षेत्र कि कृषि उत्पादकता ज्ञात करने की ही एक विधि है। भूमि भार वहन क्षमता सही निर्धारण उन्ही क्षेत्रों में किया जा सकता है जिन क्षेत्रों के कृषित भूमि का सर्वाधिक भाग खाद्यान फसलों के अन्तर्गत आता है। रीवा जिला की कृषित भूमि की पोषण वहन क्षमता 367.87 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। यहाँ की कृषित भूमि पर जनसंख्या के पोषण का भार 410.71 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। परम्परागत कृषि के स्थान पर आधुनिक तथा संतुलित कृषि तकनीकों को अपनाकर उत्पादकता को बढ़या जा सकता है।*

मुख्य शब्द– भूमि, वहन क्षमता, कृषि, खाद्यान्न

प्रस्तावना–भूमि पोषण क्षमता अर्थात भूमि भार वहन क्षमता का किसी क्षेत्र के कृषि विकास तथा नियोजन में विशेष महत्व है। किसी क्षेत्र में निवास करने वाली जनसंख्या के पोषण स्तर को बनाये रखने के लिये यह देखना होता है कि उस क्षेत्र की कृषि भूमि की वास्तविक भार वहन क्षमता कितनी है अर्थात उस क्षेत्र की कृषि भूमि से प्राप्त उपज कितनें व्यक्तियों का पोषण करनें में सक्षम है। भूमि भार वहन क्षमता का विचार सर्व प्रथम एल.डी. 1956 स्टैम्प ने रियोडिजनेरो में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय भौगोलिक संघ के अध्यक्षात्मक भाषण में प्रस्तुत किया। इस विचार का मूलकारण भूमि पर जनसंख्या का निरन्तर बढ़ता हुआ दबाव था। भारत में इस विधि के प्रयोग में प्रो. सफी (1967) तथा प्रो. जसवीर सिंह (1972–74) का स्थान प्रमुख है। इनके अलावा विजयराम सिंह, हरिहर गिरि, हुसैन, जोशी आदि विद्वानों के योगदान उल्लेखनीय है।

किसी क्षेत्र में जनसंख्या के सन्दर्भ में भूमि की ईष्टतम वहन क्षमता का निर्धारण निम्न चरणों में किया जाता है-(1) क्षेत्र में उत्पादित समस्त खद्यान्नों को कैलोरी में परिवर्तित करना। कैलोरी की गणना करते समय सम्पूर्ण उत्पादन में से 1/6 भाग घटाकर भोजन के लिये शुद्ध उत्पादन को ही सम्मिलित किया जाता है, क्योंकि ऐसा अनुमान है

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष भूगोल, शासकीय शहीद केदारनाथ महाविद्यालय मऊगंज जिला–रीवा (म0प्र0)

** अतिथि विद्वान भूगोल, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म0प्र0)

कि रख-रखाव आदि में सम्पूर्ण उत्पादन का छठवाँ भाग विनष्ट हो जाता है। (2) क्षेत्र के आवश्यक मानक पोषण इकाई का निर्धारण करना। प्रति व्यक्ति, प्रतिदिन या प्रतिवर्ष आवश्यक कैलोरी की आवश्यकता में अन्तर पाया जाता है। इसलिये किसी भी क्षेत्र की वहन क्षमता के निर्धारण के लिये वहाँ निवास करने वाले कृषकों के शारीरिक गठन, कार्य क्षमता आदि के आधार पर मानव पोषण इकाई (एस.एन.यू) निर्धारित की जाती है। अधिकांश भारतीय विद्वानों ने मानक पोषण इकाई प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष 772138 कैलोरी माना है। (3) सम्पूर्ण उपलब्ध कैलोरी से विभक्त कर प्रति इकाई उपलब्ध कैलोरी की मात्रा निर्धारण करना (4) प्रति इकाई उपलब्ध कैलोरी की मात्रा से प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष आवश्यक मानक पोषण इकाई को विभक्त कर भूमि की पोषण क्षमता ज्ञात करना।

शोध क्षेत्र–

प्रस्तुत शोध का क्षेत्र रीवा जिला है। रीवा मध्य प्रदेश के उत्तर-पूर्व में $24^{o}18'$-$25^{o}12'$ उत्तरी अक्षांश तथा $81^{o}2'$ से $82^{o}18'$ के मध्य स्थित है। इसकी उत्तरी तथा पूर्वी सीमा उत्तर प्रदेश से दक्षिण सीमा सीधी जिला से तथा पश्चिमी सीमा सतना जिला से लगी हुई है। रीवा जिले का कुल क्षेत्रफल 6240 कि.मी. है । भौतिक संरचना की दृष्टि से विन्ध्य पठार के अन्तर्गत आता है। प्रशासनिक दृष्टि से रीवा जिले को 9 तहसीलों में बांटा गया है। 2011 में यहाँ की कुल जनसंख्या 21363744 थी और यहाँ की जनसंख्या का प्रमुख व्यवसाय कृषि है।

शोध प्रविधि–

प्रस्तुत शोध पत्र में सर्व प्रथम रीवा जिला में समस्त फसलों के सम्पूर्ण उत्पादन को म.प्र. के कृषि विभाग की वेवसाइट से लिया गया है। इसके बाद सम्पूर्ण उत्पादन में से विनष्ट होने वाले अनुमानित छठवें भाग (16.8 प्रतिशत) को घटाकर प्रत्येक फसल के कैलोरी की गणना की गई है। प्रत्येक खाद्य पदार्थ में प्रति इकाई उपलब्ध कैलोरी की मात्रा "आहार एवं पोषाहार, आर्य सत्यदेव (1985,) राजस्थान ग्रंथ अकादमी, जयपुर" तथा Nutritionix कि वेबसाइट से लिया गया है। भूमिपोषण क्षमता के निर्धारण के लिये विभिन्न विद्वानों द्वारा अपनाये गये निम्नलिखित सूत्र के माध्यम से किया गया है-

सूत्र –

$$(1)\ CO = \frac{\text{क्षेत्र में कुल उत्पादन (कैलोरी में)}}{\text{बोया गया क्षेत्र}}$$

जिसमें, CO = प्रति इकाई उत्पादन की उपलब्ध मात्रा (कैलोरी में)

$$(2)\ CP = \frac{CO}{SN}$$

जिसमें, CP = वहन क्षमता (जनसंख्या में)

SN = प्रति व्यक्ति आवश्यक वार्षिक प्रमाणिक पोषण

शोध का उद्देश्य–

प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य रीवा जिले के कृषित भूमि की वास्तविक पोषण क्षमता का निर्धारण कर वर्तमान में कृषित भूमि बढ़ रहे जनसंख्या भार का तुलनात्मक अध्ययन करना है।

विश्लेषण–

भूमि भार वहन क्षमता सही निर्धारण उन्ही क्षेत्रों में किया जा सकता है जिन क्षेत्रों के कृषित भूमि का सर्वाधिक भाग खाद्यान फसलों के अन्तर्गत आता है। रीवा जिला के कुल कृषित भूमि के 85 प्रतिशत से अधिक भाग पर खाद्यान फसलों को ही बोया जाता है। प्रस्तुत शोध में रीवा जिला की भूमि भार वहन क्षमता के लिये 2015-16 के आंकड़ों का उपयोग किया गया है। सर्वप्रथम समस्त खाद्यानों के सम्पूर्ण उत्पादन को सारणी बद्ध किया गया, इसके बाद सम्पूर्ण उत्पादन में से विनष्ट होने वाले अनुमानित छठवें भाग (16.8 प्रतिशत) को घटाकर प्रत्येक फसल के कैलोरी की गणना की गई है। कैलोरी की गणना के लिये यहाँ उत्पादित की जाने वाली प्रमुख खाद्यान्नों के साथ-साथ तिलहन फसलों को भी सम्मिलित किया गया है क्योंकि पोषण में इनका भी अत्यधिक महत्व होता है। अध्ययन में शामिल की गई प्रमुख फसलें चावल, गेंहूँ, मक्का, ज्वार, बाजरा, चना, अरहर, उड़द, मसूर, तिल, अलसी तथा राई-सरसों हैं। प्रति व्यक्ति, प्रतिवर्ष मानक पोषण इकाई 772188 कैलोरी मानकर भूमि भार वहन क्षमता की गणना की गई है।

रीवा जिला में प्रमुख फसलों के उत्पादन के आधार कुल उपलब्ध कैलोरी (2015-16)

क्र.	खाद्य फसलें	कुल उत्पादन (कि.ग्रा. में)	उत्पादन का 16.8 प्रतिशत घटाने पर	प्रति किलो ग्राम में कैलोरी	कुल उपलब्ध कैलारी
1.	गेंहूँ	398000000	331136000	3460	1145730560000
2.	धान	172000000	14,31,04,000 धान से चावल निकालने पर 23,08,129	3450	7963045050
3.	मक्का	3000000	24,96,000	3420	8536320000
4.	ज्वार	9000000	74,88,000	3490	26133120000
5.	बाजरा	2000000	16,64,000	3610	6007040000
6.	चना	64000000	5,32,48,000	3600	191692800000
7.	तुअर	16000000	1,33,12,000	3350	44595200000
8.	उड़द	7000000	5824000	3470	20209280000
9.	मसूर	39000000	32448000	3430	111296640000
10.	राई सरसौ	10000000	83,20,000	5080	42265600000
11.	अलसी	6000000	4992000	5300	26457600000
12.	तिल	1000000	832000	5730	4767360000
	योग	**726000000**	**464068129**		**1635654565050**

$$\text{प्रति किमी}^2 \text{ में उपलब्ध कैलोरी (CO)} = \frac{1635654565050}{5758.57}$$

$$=284038322.9$$

$$\text{भूमि भार वहन क्षमता} = \frac{284038322.9}{772138} = 367.85$$

निष्कर्ष–

उपरोक्त विधि के अनुसार गणना करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि रीवा जिला की कृषित भूमि की पोषण वहन क्षमता 367.87 प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है जबकि 2011 के जनगणना के अनुसार यहाँ की कृषित भूमि पर जनसंख्या के पोषण का भार 410.71 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है जो कि भूमि की पोषण वहन क्षमता से 42.84 व्यक्ति अधिक है।

अतः प्रस्तुत शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान में रीवा जिला में कृषित भूमि से उत्पादित कैलोरी यहाँ की जनसंख्या के पोषण हेतु आवश्यक कैलोरी की मात्रा से कम है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ-साथ कृषित भूमि पर में भी विस्तार किया जाना संभव नहीं है किन्तु परम्परागत कृषि के स्थान पर आधुनिक तथा संतुलित कृषि तकनीकों को अपनाकर उत्पादकता को बढ़या जा सकता है। पिछले कुछ वर्षो में यहाँ के सिंचित क्षेत्रों में तीव्र गति से विकास हुआ है जिसका लाभ कृषकों को मिला है किन्तु विभिन्न क्षेत्रों के सर्वेक्षण तथा कृषि विभाग से उपलब्ध आँकड़ों से यह जानकारी मिलती है कि रीवा जिला अभी भी आधुनिक तकनीकों के उपयोग में बहुत पीछे है। अतः इस क्षेत्र में खाद्यान फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए उन्नत वैज्ञानिक कृषि तकनीकों को बढ़वा दिए जाने की आवश्यकता है जिससे प्रति इकाई उत्पादकता को बढ़ाया जा सके तथा भूमि की पोषण वहन क्षमता को बढ़ाया जा सके।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. D., (1958): The Measurement of Land Resources, Geographical Review, Vol. 48: 1, pp. 1-15.
2. Singh Jasbir (1974), An Agricultural Atlas of India: A Geographical Analysis, Kurukshetra, Vishal Pub.
3. Tiwari P.D. (1988), A Geographical Analysis of the Calories Available from Different Crops in Madhya Pradesh, Trans, IIG, Vol-10.
4. Dubey, R.S. & Mishra R.P. (1984), Nutritional Availability Patterns in Madhya Pradesh, Trans.IIG, 6 No. 2, 82.
5. Husain M. (1969), Land use and Nutrition in Sarahanpur District, GRI, 31, 27-40.
6. आर्य सत्यदेव (1985), आहार एवं पोशाहार, राजस्थान ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
7. Patel V.K. (1992), Geonomic Analysis of Resource Development in Bilaspur District, Ph.D. Thesis, R.S.U. Raipur.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

स्वच्छता एवं महिला सशक्तिकरण
(जांजगीर शहर के संदर्भ में)

* मंजुलता कश्यप

सारांश– *1986 से केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के अंतर्गत निजी स्वच्छ शौचालय बनाने पर जोर दिया जा रहा है। 01 अप्रैल 1999 से ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा संपूर्ण स्वच्छता अभियान प्रारंभ किया गया। इसका उद्देश्य लोगों की स्वच्छता संबंधी आदतों एवं मानसिकता में परिवर्तन लाना है। संपूर्ण स्वच्छता अभियान का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में सामान्य जीवन स्तर में सुधार लाना है। कार्यक्रम का केन्द्र बिन्दु समाज में स्वच्छता की आदत को प्रोन्नत करना है। यह कार्यक्रम मॉग आधारित दृष्टिकोण पर आधारित है। महात्मा गांधी के अनुसार – स्वच्छता आजादी से महत्वपूर्ण है, महात्मा गांधी के स्वच्छ भारत के सपने को पूरा करने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 02 अक्टूबर 2014 को ''स्वच्छ भारत अभियान'' की शुरूआत की। 15 सितम्बर 2018 को ''स्वच्छता ही सेवा'' अभियान की शुरूआत की गई। यह जनता का आंदोलन आज महिलाओं के आंदोलन में बदल गया है। ग्रामीण महिलाएं इस आंदोलन में अग्रणी भूमिका निभा रही है। महिला की गरिमा और सम्मान के लिए निजी शौचालय की दरकार थी। महिलाएं अब इस अभियान की लाभार्थी की भूमिका से आगे बढ़कर नेतृत्व कर रही है। उदाहरण के लिए शौचालयों के निर्माण में हमेशा से पुरुषों का एकाधिकार रहा है। लेकिन कई राज्यो में हजारों ग्रामीण महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों की मदद से राजमिस्त्री की तरह प्रशिक्षित किया गया है। शौचालय निर्माण के माध्यम से महिलाएं आत्म निर्भर हो रही है। देश के कई हिस्सो में शौचालयों को इज्जत घर नाम दिया गया है। महिलाएं समाज में व्यवहार संबंधी परिवर्तन लाने का सक्रिय माध्यम बन सकती है। वे बच्चों के समाजीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। महिलाओं को संस्कृति परम्परा और इतिहास की संवाहक माना जाता है। ''स्वाभिमान''– इस परियोजना में स्वयं सहायता समूहों को सम्मिलित किया गया। इसका उद्देश्य खुले में शौच से मुक्त (ओडीएफ) बनाना और महिलाओं का सशक्तिकरण करना है। शौचालयों के नियमित प्रयोग, उपयोग की निगरानी में यह सशक्तिकरण स्पष्ट है। महिला सशक्तिकरण का सबसे व्यापक तत्व है, उन्हे सामाजिक पद प्रतिष्ठा और न्याय प्रदान करना। महिला सशक्तिकरण के प्रमुख लक्षण है– शिक्षा, सामाजिक समानता और स्थिति, बेहतर स्वास्थ्य, आर्थिक अथवा वित्तीय सुदृढ़ता और राजनीतिक सहभागिता।*

मुख्य शब्द– स्वच्छता क्रांति, स्वच्छता अभियान, महिला सशक्तिकरण, स्वच्छता प्रभाव

* सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय ठाकुर छेदीलाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय जांजगीर जिला-जांजगीर, चाम्पा (छ.ग.)

प्रस्तावना–

गॉवों में स्वच्छता का प्रावधान एक बड़ा काम है। स्वच्छ वातावरण तथा आस-पड़ोस स्वस्थ राष्ट्र की निशानी होते है। महात्मा गांधी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रम में स्वच्छता को शामिल किया था तथा इसे स्वतंत्रता आंदोलन का एक अभिन्न अंग बना दिया था। महात्मा गांधी ने एक बार कहा था - स्वच्छता आजादी से महत्वपूर्ण है। संपूर्ण स्वच्छता अभियान का गॉवो में व्यापक असर दिख रहा है। व्यक्तिगत एवं सामुदायिक शौचालयों का निर्माण हो रहा है। विद्यालयों से लेकर पंचायती राज संस्थाओ में किसी भी तरह के निर्माण से पहले शौचालय निर्माण को प्राथमिकता दी जा रही है।

स्वच्छता को प्राथमिकता देना अनेक कारणो से महत्वपूर्ण है- स्वच्छता की कमी से शिशु मृत्यु दर में वृद्धि हो रही है। महिलाओं की सुरक्षा और सम्मान के लिए जरूरी है खुले में शौच के चलन को खत्म करना बेहद अनिवार्य है। यह व्यावहारिक रूप से जनता में बदलाव लाने वाला आंदोलन है। जिलो और राज्यों में बेहतर प्रयास को साझा करने के लिए शुरू किए गए कार्यक्रम स्वच्छ संग्रह (स्वच्छ भारत मिशन का जानकारी पोर्टल) और अलग-अलग स्थानों पर सैकड़ों प्रोत्साहनकर्ताओं को प्रशिक्षण देने के लिए वर्चुअल क्लासरूम जैसे कार्यक्रम इस अभियान में प्रौद्योगिकी के व्यवस्थित एकीकरण का उदाहरण है।

2017-18 में स्वच्छता से संबंधित सभी गतिविधियों के लिए सभी मंत्रालयों द्वारा 5000 करोड़ रूपये अनुमानित रूप से तय किए गए थे। स्वच्छ भारत मिशन का एक अहम तत्व नतीजों का प्रमाणीकरण भी है। यह इस कार्यक्रम की विश्वसनीयता के लिए बेहद जरूरी है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का स्वच्छता अभियान की शुरूआत का उद्देश्य सिर्फ भारत को साफ करना ही नहीं है, बल्कि लोगों की मानसिकता में बदलाव लाना है, क्योंकि बदली हुई मानसिकता ही स्वच्छता की परम्परा को सतत् बनाए रख सकती है।

73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के अनुसार स्वच्छता को 11वीं अनुसूची में सम्मिलित किया गया है। इसके अनुसार संपूर्ण स्वच्छता अभियान के कार्यान्वयन में पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका है। शौचालयों के निर्माण एवं अपशिष्ट पदार्थो के सुरक्षित निपटान के माध्यम से वातावरण स्वच्छ रखने के संबंध में एकजुटता सुनिश्चित करने के लिए स्वैच्छिक संगठनों एवं गैर सरकारी संगठनों का भी सहयोग लिया जा रहा है। केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम 1986 में ग्रामीण क्षेत्रो में स्वच्छता सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए प्रारंभ किया गया था। 1999 में संपूर्ण स्वच्छता अभियान के गठन को प्रोत्साहन मिला। सन् 2001 में ग्रामीण स्वच्छता अभियान की पहुंच सिर्फ 22 प्रतिशत जनसंख्या तक थी लेकिन 2017 में 80 प्रतिशत से अधिक लोगों तक पहुंच गई है। 2005 से संचालित निर्मल ग्राम पुरस्कार पूर्ण स्वच्छता का लक्ष्य प्राप्त करने वाले पंचायती राज संस्थाओं को दिया जाता है।

महिला सशक्तिकरण–

11 दशक पूर्व ही स्वामी विवेकानंद ने विश्वमंच में कहा था- ''स्त्रियों की स्थिति में सुधार लाए बिना कल्याण असंभव है जैसे कि एक पंख से उड़ान भरना।'' सशक्तिकरण का अभिप्राय शक्ति प्रदान करने, मानसिक अथवा शारीरिक गतिविधियों

के संपादन की क्षमता प्रदान करने का विस्तार है। स्त्रियों का सशक्तिकरण उन्हे नए क्षितिज दिखाने का प्रयास है। जिसमें वे नयी क्षमताओं को प्राप्त कर स्वयं को नए तरीके से देखेंगी। महिला सशक्तिकरण का मुख्य पक्ष स्त्रियों के अस्तित्व का विकास और समाज द्वारा उसकी स्वीकार्यता है।

वर्तमान में देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गॉवो में निवास करते हुए प्रमुख रूप से कृषि पशुपालन व कृषि संबंधित अन्य कार्यो से जीविकोपार्जन कर रही है। इन समस्त क्रियाओं में महिलाओं की भूमिका व भागीदारी महत्वपूर्ण है। एक सर्वेक्षण के अनुसार देश में खेतिहर मजदूरो व स्वरोजगार में संलग्न व्यक्तियों में आधी संख्या महिलाओं की है अतः ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में महिलाओं का योगदान महत्वपूर्ण है अर्थात् ग्रामीण अर्थव्यवस्था की धुरी महिलाएँ है। दुनिया में ऐसा कोई भी देश नही है जहॉ महिलाओं को हाशिए पर रखकर आर्थिक विकास संभव हुआ हो। आज अनवरत् संघर्ष के बल पर देश में महिलाओं ने सत्ता के सर्वोच्च शिखर तक चढ़कर हर क्षेत्र में स्वयं को पुरूषों के समकक्ष सिद्ध किया है। जहॉ शहरों में महिलाओं ने सामाजिक बंधनो को तोड़ा है। वही ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं आत्मनिर्भरता की ओर अपने कदम बढ़ा रही है।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन–

प्रभात रंजन[1] के अनुसार- भारत सरकार की ओर से चलाये जा रहे संपूर्ण स्वच्छता अभियान से गॉवो में स्वच्छता को लेकर जागरूकता आई। 73वे संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के अनुसार स्वच्छता को 11वीं अनुसूची में सम्मिलित किया गया है। शिशिर सिन्हा[2] के अनुसार अस्वच्छ वातावरण बीमारियों को न्यौता देता है जिसका उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जो देश के आर्थिक स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। संजय श्रीवास्तव[3] के अनुसार- जन स्वास्थ्य और गरीब लोगों की आय की सुरक्षा में स्वच्छ भारत अभियान का व्यापक प्रभाव पड़ेगा। बी. श्रीनिवास[4] के अनुसार- स्वच्छ भारत मिशन एक राष्ट्रीय आंदोलन है। जिससे केन्द्रीय मंत्रालय, राज्य सरकार, स्थानीय संस्थाएं, गैर सरकारी और अर्द्ध सरकारी संस्थाएं, उद्योग जगत गैर सरकारी संगठन, धार्मिक समूह, मीडिया आदि कई हित समूह जुड़े हुए है। अरविन्द कुमार शुक्ल[5] के अनुसार- देश के संविधान में कमजोर वर्गो के लिए आयोगों के गठन का प्रावधान है। महिलाओं के लिए भी राष्ट्रीय महिला आयोग उनके हितो के संरक्षण, संवर्धन एवं कानूनी अधिकारों की रक्षा का एक संवैधानिक निकाय है। यह महिलाओं से संबंधित महत्वपूर्ण कानूनो की कार्यकुशलता में सुधार की संस्तुतियॉ करने के लिए उनकी समीक्षा करता है। जिससे महिलाओं को उत्पीड़न से बचाया जा सके। प्रतापमल देवपुरा[6] के अनुसार- शिक्षा सामाजिक सशक्तिकरण के लिए प्रथम और मूलभूत साधन है। शिक्षा ही वह उपकरण है जिससे महिला समाज में अपनी सशक्त समर्थ व उपयोगी भूमिका दर्ज करा सकती है। प्रदीप कुमार सिंह[7] के अनुसार- स्वयं सहायता समूह महिला सशक्तिकरण एवं गॉवों से गरीबी दूर करने की दिशा में एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रयास है। परन्तु सफलता के लिए यह आवश्यक है कि पूर्ण ईमानदारी एवं निष्ठा से अपने कर्त्तव्यों तथा दायित्वों का निर्वहन किया जाए। राहुल यादव[8] के अनुसार- महिला समाख्या योजना से ग्रामीण महिलाओं में आत्मनिर्भरता बढ़ी है। आर्थिक समृद्धि के साथ ही उनकी सामाजिक

भागीदारी भी बढ़ी है। सौरभ कुमार[9] के अनुसार- भारतीय महिलाओं का सशक्तिकरण तब तक संभव नहीं है जब तक कि उन्हे आर्थिक स्तर पर सशक्त नहीं किया जाए। डॉ. संतोष जैन एवं अन्य[10] के अनुसार- बालिकाओं के उचित पोषण व देखरेख के साथ-साथ उनका पूर्ण सशक्तिकरण करने में परिवार, समाज, सरकार को प्रभावकारी कदम उठाने चाहिए। इसके लिए जागरूकता के साथ-साथ दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना अति आवश्यक है।

संपूर्ण स्वच्छता अभियान के मुख्य सिद्धांत-

* ग्रामीण क्षेत्रो में रहने वाले लोगों को स्वच्छता का ज्ञान देकर उनका जीवन स्तर ऊंचा उठाना।
* विद्यालयों एवं आंगनबाड़ी केन्द्रो के माध्यम से लोगों को जागरूक करके स्वचछता संबंधी जानकारी देना।
* मैला ढोने की प्रथा को खत्म करना।
* समुदाय को स्वच्छता एवं शुद्ध पेयजल से होने वाले लाभ के बारे में बताना।
* स्वच्छता में योगदान देने के लिए जागरूक करना।

महिलाओं की सहभागिता वृद्धि के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रयास-

सरकार महिलाओं को कृषि व पशुपालन से संबंधित विविध नवीन तकनीक, अघतन सूचनाएँ, नए कौशल व दक्षता के संबंध में शीघ्रः सहज व सरल ढंग से जानकारी उपलब्ध करवा रही हैं। सरकार ने कृषि क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ करने के लिए राष्ट्रीय कृषक महिला अनुसंधान केन्द्र उड़ीसा में स्थापित किया गया है। यह केन्द्र ग्रामीण महिलाओं के कौशल व दक्ष उन्नयन, खाद्य सुरक्षा व पौष्टिक आहार के लिए समुचित प्रावधान करते हुए ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति को सुधारने हेतु कृत संकल्प है। कृषि विज्ञान केन्द्र भी महिलाओं को कृषि से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर शिक्षण-प्रशिक्षण व्यवस्था प्रदान कर रही है। राज्य कृषि विश्वविद्यालय और राज्य के कृषि विभाग भी ग्रामीण महिलाओं को अद्यतन सूचना प्रदान करते हुए ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान कर रहे है। शहरी क्षेत्रो के सन्निकट अवस्थित ग्रामीण महिलाएँ नवीन प्रौद्योगिकी व कृषि संबंधित नवीन व्यूह रचना व सूचनाओं से अधिक लाभान्वित होते हुए विकास के सोपानों पर तेजी से अग्रसर हो रही है।

''महिला स्वयं सिद्धा योजना'' (2001) के अंतर्गत स्वयं सहायता समूहो के गठन के माध्यम से विशेष तौर पर ग्रामीण महिलाओं के सामाजिक आर्थिक सशक्तिकरण को प्राथमिकता प्रदान की गई। पिछड़े वर्ग की गरीब महिलाओं के लिए ''स्वर्णिम योजना'' प्रारंभ की गई। इसके अंतर्गत अत्यंत अल्प ब्याज दर पर 50000 रू. तक का ऋण देने का प्रावधान है। इन ऋणो को 12 वर्ष तक की लंबी अवधि तक चुकाने का प्रावधान है। ''महिला डेयरी योजना'' के अंतर्गत देश में महिला दुग्ध सहकारी समितियों का गठन किया गया। यह कार्यक्रम केन्द्र सरकार के महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा संचालित किया जा रहा है। यह योजना महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बना रही है। ''राष्ट्रीय महिला कोष'' भी ग्रामीण गरीब महिलाओं को उत्पादन कार्यो हेतु ऋण तथा अल्पवित्त की सुविधा प्रदान करता है। यह सुविधा सामाजिक संगठनों, सहकारी

समितियों, महिला-विकास निगमों आदि के माध्यम से उपलब्ध करवाई जाती है। इस कोष के द्वारा विभिन्न प्रकार की योजनाएँ जैसे ऋण संवर्धन योजना, मुख्य ऋण योजना, चक्रीपन निधि योजना, गोल्ड क्रेडिट पासबुक योजना, आवासीय ऋण योजना, परिवार ऋण योजना, पुनर्वित्त पोषण योजना संचालित की जा रही है।

स्वशक्ति परियोजना का उद्देश्य स्वसहायता दलों का गठन करके इनके माध्यम से ग्रामीण महिला सशक्तिकरण हेतु उपयुक्त वातावरण निर्मित करना है। ''रोजगार सह आयोत्पादक एकक'' कार्यक्रम के अंतर्गत निर्धन ग्रामीण महिलाओ के जीवन स्तर में सुधार लाने हेतु इन महिलाओं को पारम्परिक तथा गैर पारम्परिक व्यवसायों में प्रशिक्षण प्रदान करके, उनको रोजगार प्रदान करने हेतु वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है।

महिलाएँ समाज की रचनात्मक शक्ति होती है। आने वाले कल को सुधारने के लिए हमे आज की महिला की स्थिति में सुधार करना होगा। इसके लिए हमें रूढ़िवादी दृष्टिकोण से उबरकर एक नया विकासवादी दृष्टिकोण अपनाना होगा।

अध्ययन क्षेत्र –

छत्तीसगढ़ राज्य के जिला जांजगीर चाम्पा के जांजगीर शहर के 30 उत्तरदाताओं से जानकारी प्राप्त की गई। यह अध्ययन करने का प्रयास किया गया कि स्वच्छता अभियान में उनकी क्या भूमिका है? स्वच्छता क्रांति से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई। स्वच्छता से महिला सशक्तिकरण पर क्या प्रभाव पड़ता है? इसकी जानकारी संकलित की गई।

उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी –

सारिणी क्रमांक 01

स्वच्छता अभियान की अवधारणा

क्रमांक	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	परिवेश स्वच्छता	05	17
2	व्यक्तिगत स्वच्छता	03	10
3	ये दोनों	22	73
योग		30	100

73 प्रतिशत उत्तरदाता व्यक्तिगत एवं परिवेश स्वच्छता को स्वच्छता अभियान में सम्मिलित करते है।

सारिणी क्रमांक 02

स्वच्छता

क्रमांक	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	गीला और सूखा कचरा अलग–अलग डस्टबिन में डालते है	20	67
2	एक ही डस्टबिन में डालते है	10	33
योग		30	100

67 प्रतिशत उत्तरदाता ही अलग-अलग डस्टबिन में कचरा डालते है इस पर जागरूकता की आवश्यकता है।

सारिणी क्रमांक 03

स्वच्छता का प्रभाव

क्रमांक	विवरण		आवृत्ति	प्रतिशत
1	उत्पादकता एवं आर्थिक विकास पर अनुकूल पड़ता है	हॉ	30	100
2		नहीं	–	–
योग			30	100

शत् प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते है कि स्वच्छता से उत्पादकता एवं आर्थिक विकास में वृद्धि होगी।

सारिणी क्रमांक 04

पर्याप्त जलापूर्ति/बिजली आपूर्ति

क्रमांक	विवरण		आवृत्ति	प्रतिशत
1	आपके पास पर्याप्त जल, बिजली की व्यवस्था है	हॉ	25	83
2		नहीं	05	17
योग			30	100

83 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास पर्याप्त जल, बिजली की आपूर्ति है। सरकार को इस तरफ ध्यान देना चाहिए।

सारिणी क्रमांक 05

स्वच्छता अभियान

क्रमांक	विवरण		आवृत्ति	प्रतिशत
1	क्या आप स्वच्छता अभियान के लिए चलाये जा रहे कार्यक्रमों को पर्याप्त मानते है	हॉ	28	93
2		नहीं	02	07
योग			30	100

93 प्रतिशत उत्तरदाता स्वच्छता अभियान के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रमों को पर्याप्त मानते है। 07 प्रतिशत इसमें और सुधार को मानते है।

सारिणी क्रमांक 06

स्वच्छता एवं महिला सशक्तिकरण

क्रमांक	विवरण		आवृत्ति	प्रतिशत
1	क्या आप मानते है कि स्वच्छता अभियान से महिला सशक्तिकरण को प्रोत्साहन मिलेगा	हॉ	28	93
2		नहीं	02	07
योग			30	100

93 प्रतिशत यह मानते है कि स्वच्छता से महिला सशक्तिकरण को प्रोत्साहन मिलेगा।

प्रभाव–

महिला सशक्तिकरण की दिशा में अनेक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रयास किए गए। इसमें स्कूलों, गॉवों तथा अन्य स्थानों पर महिला शौचालयों के निर्माण पर विशेष बल दिया जा रहा है। यह महिला सशक्तिकरण तथा उन्हे स्वाभिमान व सुरक्षा उपलब्ध होगी बल्कि यौन शोषण कम करने में भी मदद मिलेगी।

स्वच्छ भारत अभियान की सकारात्मक बात यह है कि इसमें स्वच्छता के प्रति

जागरूकता बढ़ी है। यह महिला अधिकार संपन्नता की दिशा में एक महत्वपूर्ण स्तंभ बन गया है। पिछले कुछ समय से देश में एक ''मौन क्रांति'' ही रही है। वह है महिलाओं को स्वच्छता के प्रति जागरूकता बनाना। उन्हे स्वच्छता के लिए अधिकार संपन्न बनाना। यह जागरूकता उन्हे अपने स्वास्थ्य के बुनियादी अधिकारों के प्रति सजग कर रही है। स्त्री शिक्षा महिला सशक्तिकरण का मजबूत आधार है। लेकिन इसके साथ यह भी जरूरी है कि महिला स्वस्थ हो। एक अनुमान के अनुसार पिछले कुछ समय से देश में माध्यमिक स्तर पर स्कूली पढ़ाई बीच में छोड़ देने वाली लड़कियों के संख्या में निरन्तर कमी आ रही है। दाखिले में 12 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की गई। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर यह वृद्धि 8 प्रतिशत दर्ज की गई, विशेषज्ञों के अनुसार स्वच्छ भारत अभियान से न केवल सफाई राष्ट्र के विकास एजेण्डा की सूची में शीर्ष पर आ गई है। बल्कि यह बालिका सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है जिससे महिला सशक्तिकरण को प्रोत्साहन मिलेगा। वर्ष 2005-06 में जहाँ लड़कियों के स्कूलो में मात्र 37 प्रतिशत ही शौचालय थे वही यह 2015 में 93 प्रतिशत तक पहुंच गई। अब न केवल विद्यालयों में दाखिले के लिए आने वाली लड़कियों की संख्या बढ़ रही है। बल्कि सफाई के प्रति जागरूकता उन्हे स्वस्थ बनाने के साथ आत्मविश्वास से परिपूर्ण नागरिक बना रही हैं वे अपने आस-पास के वातावरण को साफ-सुथरा बना रही है। विद्यालयों में शौचालय बनाने पर जोर दे रही है इस प्रकार के अभियान सामाजिक चेतना को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

2011 की जनगणना के अनुसार 53 प्रतिशत घरों में भी शौचलय नही है। ग्रामीण क्षेत्रों में 69.3 प्रतिशत घरो में शौचालय नहीं है। शौचालय न होने का बड़ा सामाजिक असर महिलाओं की सुरक्षा परभी पड़ रहा है। किशोरियों में व्यक्तित्व विकास एवं उनके जीवन में हो रहे परिवर्तनों के बीच स्वस्थ जीवन के लिए स्वच्छता एवं सफाई का अत्यधिक महत्व है। निर्मल ग्राम की परिकल्पना में गॉव में स्वच्छ पानी की उपलब्धता, कचरे का प्रबंधन एवं स्वच्छता सुविधाओं की उपलब्धता पर जोर दिया गया। मर्यादा अभियान नाम देकर मध्य प्रदेश सरकार ने स्वच्छता अभियान को महिलाओं की इज्जत के साथ जोडकर प्रचारित किया जिसका प्रभाव जनमानस पर पड़ रहा है।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी में कॉरपोरेट सेक्टर से भी अपील की है वे स्कूलों मे शौचालय बनवाने के लिए आगे आए। सुलभ स्वैच्छिक संगठन के सस्थापक बिन्देश्वर पाठक का विश्वास है कि कॉरपोरेट क्षेत्र के साथ मिलकर वे भारत के हर घर में शौचालय का ध्येय पूरा कर पायेगें। स्वच्छ भारत अभियान में लोगों की अधिक से अधिक सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए ''स्वच्छ भारत कोष'' का गठन किया गया है। सरकारी, प्राइमरी व माध्यमिक स्कूलो के साथ आंगनबाड़ी में भी शौचालय बनाने पर जोर दिया जायेगा। शौचालय न होने का प्रतिकूल प्रभाव महिलाओं की सुरक्षा व साक्षरता पर दृष्टिगोचार हो रहा है।

सभी के लिए शौचालय सुविधा सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक दृढ़ इच्छा शक्ति अब नजर आने लगी है। ''स्वच्छ भारत'' का सपना अब हकीकत होगा।

एक ओर बॉलीवुड की विद्या बालन, अमिताभ बच्चन जैसे मशहूर लोग तो दूसरी ओर शौचालय के अभाव में ससुराल से पहले दिन वापस मायके लौट आने वाली

मध्यप्रदेश के बैतूल जिले की अनिता ब्रांड अम्बेसेडर के रूप में समाज को इस बात के लिए प्रेरित कर रहे है कि वे शौचालय बनवाए एवं मर्यादापूर्वक स्वस्थ तरीके से जिए।

स्वच्छता और आर्थिक विकास के बीच प्रत्यक्ष संबंध है। अपर्याप्त स्वच्छता के प्रभाव को चार वर्गो में विभाजित किया जा सकता है प्रथम - स्वास्थ्य से संबंधित है। गंदगी से बीमारियाँ फैलती है, बीमार व्यक्ति किसी काम को ठीक ढंग से नहीं कर सकता, इसका सीधा असर उत्पादकता पर पड़ता है। अस्वस्थ लोगों से मानव संसाधन उत्पादक नहीं हो पायेगी। द्वितीय - पीने के पानी की अनुपलब्धता हो जायेगी। तृतीय - स्वच्छता की सुविधाओं के प्रयोग तक पहुंचने में लगने वाला समय है। इसका प्रभाव महिला साक्षरता पर भी पड़ता है। चतुर्थ - ग्रामीण पर्यटन पर है। अस्वच्छता के कारण पर्यटको की संख्या कम होती है। पेयजल और स्वचछता मंत्रालय द्वारा जारी आंकड़ो के अनुसार फरवरी 2019 तक देश की 98 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या स्वच्छता अभियान के अंतर्गत आ चुकी है।

भावी रणनीतियाँ–

ओ.डी.एफ (ओपन डेफिकेशन फ्री) का दर्जा पाना एक मसला है, लेकिन स्थानीय संरचनाओं के माध्यम से बनाए रखना दूसरा मसला है। मंत्रालय द्वारा राज्यों के साथ एक संपोषणीयता प्रोटोकॉल विकसित किया गया है और इसे प्रभावी रूप से क्रियान्वित करने की जरूरत है। सूचना प्रबंधन तंत्र द्वारा प्रत्येक परिवार की प्रगति की जानकारी रखी जानी चाहिए। प्रभावी ठोस एवं द्रव अपशिष्ट प्रबंधन पर ध्यान देना आवश्यक हैं ग्रामीण स्वच्छता इंडेक्स (स्वच्छता की दिशा में प्रगति का ऑकलन करता है। ओ.डी.एफ. स्तर अपशिष्ट प्रबंधन स्तर) और समान्य स्वच्छता सूचकांक किसी भी गॉव को ओ.डी.एफ. तक पहुंचने में मदद करता है।

सड़कों की सफाई के लिए हर गली के सफाईकर्मी का नाम, फोन नंबर और सफाई का समय उस गली की दीवार पर लिखा जाए। इसके बावजूद अगर सड़क पर गंदगी दिखे तो इसकी शिकायत सरपंच या नगरपालिका अध्यक्ष के मोबाईल नंबर पर की जाए। ग्रामीण क्षेत्रो में रसोई के लिए बायोगैस और रोशनी के लिए बिजली के छोटे संयंत्र आसानी से लगाए जा सकते है। शहर और जिला स्तर पर अपशिष्ट, रिसाइक्लिंग संयंत्र बनाया जाए। कचरे को जलाना इसे ऊर्जा में परिवर्तित करने का अच्छा तरीका है।जागरूकता अभियान के लिए स्कूली बच्चों और गैर सरकारी संगठनों को इसमें सम्मिलित किया जाए। साफ-सफाई के कार्य को स्कूली स्तर पर ही पाठ्यक्रम में सम्मिलित करना होगा। आज का युग प्रतियोगिता का युग है। महिलाओं को मात्र कानूनी अधिकार दिए जाने से वे समान अधिकार का उपयोग नहीं कर सकती। आवश्यकता इस बात की है कि समाज में सामाजिक परिवर्तन हो। रोजगार का सृजन करने वाले विभिन्न कार्यक्रमों और नीतियो को बनाते समय गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाली ग्रामीण भूमिहीन महिलाओं को प्राथमिकता दी जानी आवश्यक है। विधि व्यवस्था को मजबूत बनाना चाहिए ताकि महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव समाप्त किए जा सके। महिला केन्द्रित और महिला संबद्ध क्षेत्रो में वर्तमान सेवाओ, संसाधनो, बुनियादी सुविधाओं और जनशक्ति को मिलाकर महिला सशक्तिकरण के लिए एक समन्वित दृष्टिकोण अपनाया जाए। रोजगार के अतिरिक्त महिलाओं की शिक्षा एवं

स्वास्थ्य पर पूरा ध्यान देना जरूरी है।

निष्कर्ष–

उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी के आधार पर यह कहा जा सकता है कि व्यक्तिगत एवं परिवेश स्वच्छता को स्वच्छता अभियान मानते है। स्वच्छता से उत्पादकता एवं आर्थिक विकास में वृद्धि होगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आज शहरों से लेकर गॉवों में, विद्यालयों से लेकर आम आदमी तक अब यह मानने लगा है कि स्वच्छता अपनाए बिना स्वस्थ नहीं रहा जा सकता है। हमें इस बात को भी समझना होगा कि सफाई के लिए यह वातावरण इसलिए बनाना पड़ा कि अपनी लापरवाही के कारण हम दिनो दिन परेशानियों का शिकार बन रहे है। स्वच्छता से महिला सशक्तिकरण को प्रोत्साहन मिलेगा।

=================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. प्रभात रंजन -संपूर्ण स्वच्छता अभियन से बदली गॉवो की तस्वीर - कुरूक्षेत्र, जनवरी 13, पृ.क्र. 3
2. शिशिर सिन्हा - स्वच्छ गॉव, स्वस्थ गॉव, कुरूक्षेत्र, दिसम्बर 2014, पृ.क्र. 18
3. संजय श्रीवास्तव - स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत, कुरूक्षेत्र, जुलाई 2015, पृ.क्र. 37
4. बी. श्रीनिवास- स्वच्छता ही सेवा अभियान, कुरूक्षेत्र, अक्टूबर 2017, पृ.क्र. 26
5. अरविन्द कुमार शुक्ल - आधी दुनिया - विकास की राह पर, कुरूक्षेत्र, मार्च 2007, पृ.क्र. 5
6. प्रतापमल देवपुरा - महिला सशक्तिकरण में शिक्षा का महत्व, कुरूक्षेत्र मार्च 2008, पृ.क्र. 4
7. प्रदीप कुमार सिंह - संगठित महिलाएं सशक्त समाज, कुरूक्षेत्र जून 2010, पृ.क्र. 3
8. राहुल यादव - तरक्की की धुन पर थिरकती ग्रामीण महिलाएं, कुरूक्षेत्र सितम्बर 2011, पृ. क्र. 3
9. सौरभ कुमार - ''बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं'' योजना के आर्थिक मायने, कुरूक्षेत्र मार्च 2015, पृ.क्र. 8
10. डॉ. संतोष जैन पासी एवं सुरिन्द्रा जैन -बालिका सशक्तिकरण में बालिकाओं के स्वास्थ्य एवं पोषण का महत्व, कुरूक्षेत्र जनवरी 2016, पृ.क्र. 19

अ) कुरूक्षेत्र -

1. अक्टूबर 2005 - संपूर्ण ग्रामीण स्वच्छता- एक विश्लेषण -पूर्ण सिंह यादव, पृ.क्र. 52
2. अक्टूबर 2009 - ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में महिलाओं का योगदान - डॉ. अनीता मोदी, पृ.क्र.28
3. जनवरी 2013 - आम सहभागिता से पूरा होगा संपूर्ण स्वच्छता का सपना, उमर फारूकी, पृ. क्र. 8
4. दिसम्बर 2014 -भारत में ग्रामीण एवं नगरीय स्वच्छता - आर.बी. भगत, पृ.क्र. 5
5. अक्टूबर 2015 -गॉधी जी का सपना साकार करेगा स्वच्छ भारत मिशन - संजय श्रीवास्तव, पृ.क्र. 38
6. अक्टूबर 2018 - स्वच्छता अभियान से बदल रही है, जिन्दगियॉ- संजय श्रीवास्तव, पृ.क्र. 51
7. मार्च 2005 -महिला सशक्तिकरण-प्रयास और लक्ष्य, डॉ. अलका रस्तोगी, पृ.क्र. 12
8. सितम्बर 2011 -बालिका शिक्षा से ही होगा देश का विकास-चंद्रभान यादव, पृ.क्र. 21
9. अगस्त 2013 -ग्रामीण महिला सशक्तिकरण - सरकारी प्रयास एवं चुनौतियॉ, डॉ. अनिता

मोदी, पृ.क्र. 28

10. जनवरी 2016 -स्वच्छता और बालिका सशक्तिकरण - अनुपमा जैन, पृ.क्र. 32

11. जनवरी 2018 -

* स्वास्थ्य महिलाएं - देश के विकास की नींव - मनीषा वर्मा, पृ.क्र. 43

स) योजना -

1. नवम्बर 1998 - प्रदूषण को बढ़ाती प्लास्टिक थैलियाँ - डॉ. राजीव कुमार, पृ.क्र. 32
2. जून 2006 -ग्रामीण स्वच्छता अभियान - देवेन्द्र उपाध्याय , पृ.क्र. 29
3. नवम्बर .2007 -संपूर्ण स्वच्छता अभियान में महिलाओं का योगदान - गोविन्द शर्मा, पृ.क्र. 56
4. अक्टूबर 2017 -साकार होगा स्वच्छ भारत का सपना - परमेश्वरन अय्यर, पृ.क्र. 9
5. नवम्बर 2018 -

* खुले में शौच से मुक्त -जन आंदोलन - अरूण जेटली, पृ.क्र. 7

* स्वच्छ गॉव - स्वच्थ गॉव - नरेन्द्र सिंह तोमर, पृ.क्र. 15

* महिलाओं व बच्चों के लिए साफ सुथरा आरोग्यमय वातावरण - राकेश श्रीवास्तव, पृ.क्र. 39

स) उद्योग व्यापार पत्रिका -

1.नवम्बर 2010 - स्वच्छता की परम्परागत प्रणाली मे महत्वपूर्ण परिवर्तन - राजवन्त संधू, पृ.क्र. 36

2.अक्टूबर 2015 -स्वच्छ भारत अभियान - विकास के पथ पर अग्रसर, पृ.क्र. 28

3.अगस्त 2017 - बढ़ते कचरे की चुनौती से निपटना- सुधीरेन्दर शर्मा, पृ.क्र. 22

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

भारत में प्रतिलिप्याधिकार के प्रवर्तन की चुनौती एवं उनका समाधान(साक्षात्कार आधारित विधिक अध्ययन)

* एस.पी. सिंह
** आनन्द कुमार द्विवेदी

सारांश– *बौद्धिक सम्पदा मानव बुद्धि का सृजन है अर्थात यह मानव मस्तिष्क की जानकारी, अविष्कार, सृजनशीलता या अनुसंधान की उपज है। इसका अस्तित्व मनुष्य के अस्तित्व के साथ ही शुरू हो गया था। जैसे–जैसे मानव सभ्यता की ओर अग्रसर होता गया वैसे वैसे ही बौद्धिक सम्पदा के भी नये आयामों का विकास होता गया। प्रारम्भ में लोग किसी भी व्यक्ति के सृजनात्मक कार्य का उपयोग सामूहिक रूप से करते थे इसमें सृजनकर्ता का कोई एकाधिकार नही रहता था परन्तु कालान्तर में सृजनात्मकता (कृति, रचना, अविष्कार आदि) के प्रति उसके सृजनकर्ता के एकाधिकार की आवश्यकता महसूस होने लगी तथा समाज व विधि द्वारा उसके एकाधिकार को स्वीकार किया जाने लगा।*

मुख्य शब्द– प्रतिलिप्याधिकार जागरूकता , साक्षात्कार , चुनौती

प्रस्तावना–

बौद्धिक सम्पदा मानव बुद्धि की सृजन है। इसका तात्पर्य विचारों, जानकारी, अविष्कार, पुनरूद्धार, सृजनात्मकता अनुसंधान आदि से हैं, चूंकि ये सभी मानव मस्तिष्क की उपज हैं और किसी अन्य सम्पत्ति के समान हैं, चाहे चल अथवा अचल जहां कर्ताधर्ता या स्वामी अपनी इच्छानुसार सम्पत्ति का विशिष्ट उपयोग कर सकता है और उसकी अनुमति के बिना दूसरों को इसका उपयोग करने से रोकने का अधिकार है। बौद्धिक सम्पदा से संबंधित अधिकारों को बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के रूप में जाना जाता है। बौद्धिक सम्पदा का अस्तित्व मनुष्य के अस्तित्व के साथ ही प्रारम्भ हुआ था। जैसे जैसे मानव ने अपनी बुद्धि, क्षमता, कार्यकुशलता को परिमार्जित किया वैसे वैसे बौद्धिक सम्पदा का भी नये रूप में विकास होता गया। मानव का जंगली जानवर से वर्तमान स्वरूप में आने की प्रक्रिया जैसे कपड़े का प्रयोग, सुरक्षा के साधन, निवास हेतु घर की व्यवस्था, मनोरंजन हेतु विभिन्न क्रियाकलापों का संचालन तथा कला का प्रदर्शन इस बात का द्योतक है कि मनुष्य प्रारम्भ से अपनी बुद्धि, कार्यकुशलता, क्षमता एवं विवेक का प्रयोग समय समय पर विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु करता रहा है। प्रारंभ में अपने इन बौद्धिक क्षमताओं को उसने अधिकार व सम्पत्ति के रूप में दर्शाने का कभी प्रयास

* प्राध्यापक, विधि, शासकीय विधि महाविद्यालय रीवा, मध्यप्रदेश
** शोध छात्र, विधि, अवधेश प्रताप सिंह महाविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश

नहीं किया। वह यह मानकर चलता था कि उसे ऐसी क्षमता ईश्वर प्रदत्त उपहार है तथा समाज के लाभ व कल्याण के लिए है। इसमें उसका कोई व्यक्तिगत अधिकार नहीं है। उसके द्वारा सृजित उत्पाद पर सभी व्यक्तियों का अधिकार है तथा वह उन्हे निःशुल्क प्राप्त होना चाहिए।

समय के साथ साथ व्यक्ति की सोच व मनःस्थिति में परिवर्तन के फलस्वरूप उसके व्यवहारों में परिवर्तन होता गया। ऐसे क्रियाकलाप, गतिविधियाँ व वस्तुएँ जो अमूर्त रूप में थीं उनसे उत्पन्न लाभों व प्रलाभो को प्राप्त करने हेतु मनुष्य उसी प्रकार उत्साहित हो गया जिस प्रकार वह मूर्त सम्पत्ति को प्राप्त करने के लिए होता था। जिसमें बुद्धि, विवेक और कौशल से प्राप्त सम्पत्ति भी शामिल है वह उस व्यक्ति की सम्पदा मानी जाती है। बौद्धिक सम्पदा अधिकार को विनियमित करने एवं उससे उत्पन्न प्रलाभों को सुरक्षित रखने एवं इसको दुरुपयोग एवं दुर्विनियोग से बचाने हेतु प्रयास एक लम्बे समय से चल रहा था जिसे आधुनिक विधिक स्वरूप स्टैट्यूट आफ एनी, सन् 1710 के द्वारा दिया गया। इसके पश्चात शनैः शनै विकसित होता हुआ सन् 1967 में विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन तक पहुँचा।

शोध का उद्देश्य–

1. राष्ट्र तथा राज्य स्तर पर प्रतिलिप्याधिकार संबंधित विधियों के क्रियान्वयन की वास्तविक जानकारी प्राप्त करना।
2. इन विधियों के विशेष संदर्भ में बढ़ते हुए बौद्धिक सम्पदा अधिकार के प्रति व्यक्ति की वास्तविक स्थिति को ज्ञात करना।
3. इस शोध के माध्यम से देश में उत्पन्न प्रतिलिप्याधिकार संबंधी रोकथाम में अपनी पूर्ण सहभागिता प्रदान करना।

शोध का क्षेत्र एवं प्रविधि–

प्रस्तुत अध्ययन भारत में लागू प्रतिलिप्याधिकार अधिनियम, 1957 के प्रवर्तन व चुनौतियों से सम्बंधित है जिसको क्षेत्रीय सर्वेक्षण से प्राप्त सामाजिक, न्यायिक व वैचारिक आंकड़ों द्वारा पूर्ण किया गया है। जो निहित प्रश्नावली के साक्षात्कार द्वारा उपलब्ध हुआ है। अध्ययन में आवश्यकतानुसार द्वितीयक आंकड़ों का भी उपयोग किया गया है जो विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नल और विभिन्न न्यायालयों के निर्णय को समाहित किया गया है। यथा स्थान अग्र निर्णय व न्यायिक निर्णय को समाहित करते हुए कार्य को पूर्ण किया गया है।

परिकल्पना– प्रस्तावित शोध अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पनाओं को परखने का प्रयास किया गया है-

1. प्रतिलिप्याधिकार सामाजिक व आर्थिक विकास हेतु आवश्यक है?
2. प्रतिलिप्याधिकार की सुरक्षा संवैधानिक अधिकार द्वारा संभव है?
3. प्रतिलिप्याधिकार से पुर्नप्रचलन नियंत्रित होता है।
4. प्रतिलिप्याधिकार से बौद्धिक सृजनशीलता में अभिवृद्धि होती है, जिससे मानवीय कल्याण के विकल्प उद्भावित होते है।

व्याख्या एवं विश्लेषण–

समाज में प्रतिलिप्याधिकार के सम्बंध में तथा उनके विधिक अधिकारों के सम्बंध

व उनके हित संरक्षण के प्रति समाज के विभिन्न वर्गो के वैचारिक दृष्टिकोण प्राप्त करने के लिए समाज के विभिन्न वर्ग के लोगों से जानकारी प्राप्त की गई। जानकारी निहित प्रश्नावली के द्वारा साक्षात्कार विधि द्वारा प्राप्त की गई। साक्षात्कार में शामिल सभी वर्ग के लोगों की संख्या 1000 थी उनमे से 800 पुरुष व 200 महिलाये थी। पुरुषों में विभिन्न क्षेत्रों जैसे- न्याय विभाग, समाजसेवी, व्यापारिक क्षेत्र के, साहित्यिक क्षेत्र के, कला के क्षेत्र में अभियांत्रिकीय क्षेत्र के, महाविद्यालयीन छात्र, शहरी व ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षित अशिक्षित, व्यवसायी डिजाइन पेटेण्ट ट्रेडमार्क के विशेषज्ञ व कृषक शामिल किये गये। जबकि साक्षात्कार में शामिल महिलाएँ विभिन्न उम्र की तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत व गृहणियों को शामिल किया गया। इनके कार्यक्षेत्र भिन्न-भिन्न व पदो के स्तर अलग अलग थे। जिनमें से कुछ प्रमुख उत्तरदाताओं के मत निम्न हैं-

महिमा त्रिपाठी उम्र 35 वर्ष पेशा- व्यवसायी के मतानुसार यहां आपको आवेदन को आनलाइन भरने के विकल्प मिलेंगे. हालांकि उससे पहले आपको यहां लॉगिन करना होगा, जो निःशुल्क है। कापीराइट रजिस्ट्रेशन के लिए फार्म 904 भरा जाता है. भारत में फिल्मों और टीवी की कहानी पर कश्चपीराइट संपदा की सुरक्षा के लिए अलग से एक एसोसिएशन है। व्यक्तिगत विवरण- कॉपीराइट रजिस्ट्रेशन का फार्म भरने के लिए आपको अपने पर्सनल डिटेल मसलन- नाम, पता, राष्ट्रीयता के बारे में बताना होगा। साथ ही ये घोषित करना होगा कि जिस काम का कश्चपीराइट कराना है, वो उसका अपना है या वो आवेदक का प्रतिनिधि है

मीरा सोंधिया उम्र 25 वर्ष, पेशा वकालत के अनुसार किसी भी कंटेंट का गैर कामर्शियल इस्तेमाल उचित है. निजी इस्तेमाल में इजाजत की जररूत नहीं है. अगर किसी लेखन, शायरी या कविता के कुछ अंश समीक्षा के उद्देश्य से या रिपोर्ट या लेख को समझाने के लिए इस्तेमाल होते हैं तो ये फेयर डीलिंग यानी निष्पक्ष व्यवहार के दायरे में कवर होगा। कॉपीराइट एक्ट की धारा-52 के तहत किसी भी कंटेंट का प्राइवेट इस्तेमाल में उपयोग कॉपीराइट उल्लंघन नहीं है।

मंजुलता वर्मा, उम्र 29 वर्ष पेशा शिक्षिका के मतानुसार व्यक्तिगत इस्तेमाल कश्चपीराइट का उल्लंघन नहीं लेकिन लेकिन इसका सार्वजनिक प्रसार नहीं किया जा सकता. अगर कोई पब्लिक डोमेन में नेट आदि पर पड़े फोटोग्राफ या कोई अन्य कंटेंट का इस्तेमाल करना चाहता है तो उसे इजाजत लेनी होगी. रॉयल्टी पेमेंट करना होगा।
माया सिंह, उम्र 50 वर्ष पेशा- न्यायधीश के मतानुसार कॉपीराइट एक्ट के उल्लंघन के लिए दोषी पाए जाने पर एक साल तक की सजा के साथ आर्थिक जुर्माने का प्रावधान है। कॉपीराइट उल्लंघन पर डैमेज क्लेम किया जा सकता है. किसी ने कापीराइट के उल्लंघन कर जितना प्राफिट कमाया है, उस हिसाब से डैमेज क्लेम किया जा सकता है.
स्वरूपरानी, उम्र 35 पेशा- लेखिका के मतानुसार कुछ परिस्थितियों में, एक काम में इस्तेमाल किया जा सकता है स्वतंत्र रूप से अनुमति के बिना कॉपीराइट के मालिक हैं, बशर्ते कि वहाँ है उचित पावती के लेखक का नाम और काम के शीर्षक का इस्तेमाल किया जा रहा है।

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष निम्नलिखित है-

सारणी क्र.01

प्रतिलिप्याधिकार के सम्बंध में जानकारी

स.क्र.	हाँ		नही	
	संख्या	प्रति.(%)	संख्या	प्रति.(%)
1.	500	50	500	50

सारणी क्र. 1 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार के सम्बंध में 500 लोग जिनका प्रतिशत 50 है कि जानकारी है व 50 प्रतिशत अर्थात 500 ऐसे लोग है जिनका प्रतिशत 50 है।

ग्राफ क्र 01

प्रतिलिप्याधिकार के सम्बंध में जानकारी का दण्डारेख

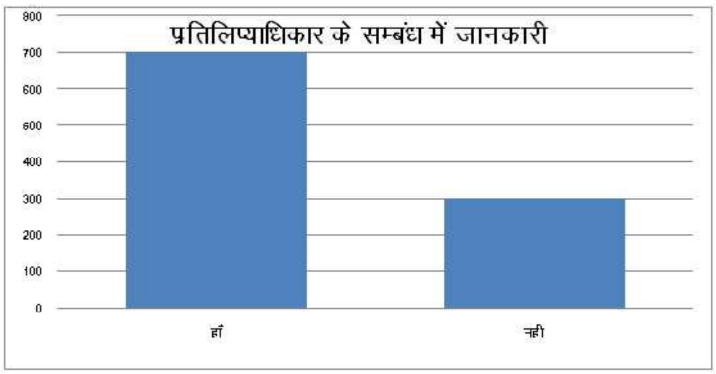

सारणी क्र. 02

प्रतिलिप्याधिकार एवं बौद्धिक अधिकार में अंतर की जानकारी

स.क्र.	हाँ		नही	
	संख्या	प्रति.(%)	संख्या	प्रति.(%)
1.	700	70	300	30

सारणी क्र. 2 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार व बौद्धिक अधिकार में अंतर की जानकारी का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि 700 लोग ऐसे है जिन्हे इनके अंतर के सम्बंध में जानकारी है जिनका प्रतिशत 70 है व 30 प्रतिशत ऐसे लोग हैं जिनको इसके अंतर के सम्बंध में जानकारी नही है।

ग्राफ क्र.02

प्रतिलिप्याधिकार एवं बौद्धिक अधिकार में अंतर का पाई आरेख

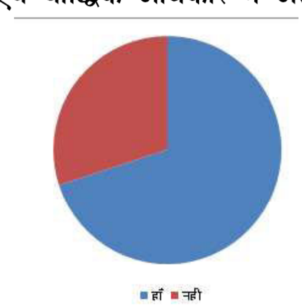

सारणी क्र.03
प्रतिलिप्याधिकार के संवैधानिक अधिकार की जानकारी

स.क्र.	हाँ		नही	
	संख्या	प्रति.(%)	संख्या	प्रति.(%)
1.	700	70	300	30

सारणी क्र. 3 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार के संवैधानिक अधिकार के बारे में की जानकारी का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि 70 प्रतिशत लोग ऐसे है जिन्हे इसके बारे में जानकारी है किन्तु 30 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिन्हे इसके बारे में जानकारी नही है।

ग्राफ क्र.03

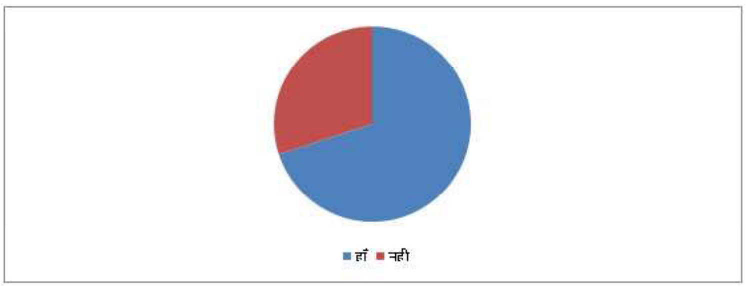

सारणी क्र.04
प्रतिलिप्याधिकार के हनन के सम्बंध में जानकारी

स.क्र.	हाँ		नही	
	संख्या	प्रति.(%)	संख्या	प्रति.(%)
1.	800	80	200	20

सारणी क्र. 4 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार के हनन के सम्बंध में जानकारी का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि 80 प्रतिशत लोग ऐसे है जिन्हे इसके बारे में जानकारी है किन्तु 20 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिन्हे इसके बारे में जानकारी नही है।

ग्राफ क्र.04
प्रतिलिप्याधिकार के हनन के सम्बंध में जानकारी

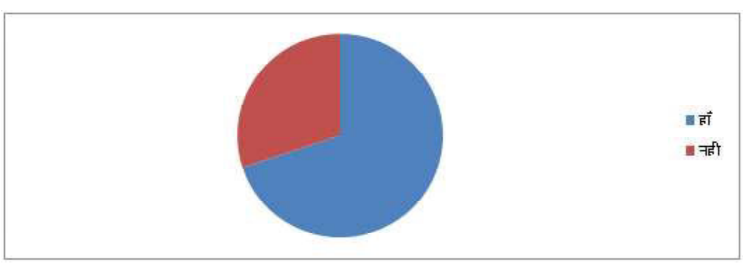

सारणी क्र.05

प्रतिलिप्याधिकार को न्यायालय में चुनौती देने सम्बंध जानकारी

स.क्र.	हाँ		नही	
	संख्या	प्रति.(%)	संख्या	प्रति.(%)
1.	700	70	300	30

सारणी क्र. 5 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार को न्यायालय में चुनौती में देने के सम्बंध में 70 प्रतिशत लोग ऐसे है जिन्हे इसके बारे में जानकारी है किन्तु 30 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिन्हे इसके बारे में जानकारी नही है।

ग्राफ क्र.05

प्रतिलिप्याधिकार को न्यायालय में चुनौती देने सम्बंध जानकारी

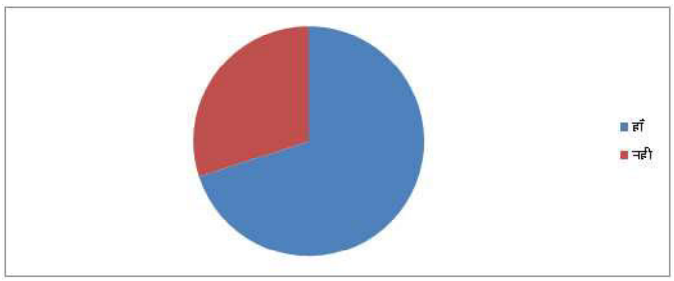

सारणी क्र.06

प्रतिलिप्याधिकार का दण्ड विधान मे प्रावधान

स.क्र.	विवरण	संख्या	प्रति.
1	जुर्माना लगता है	600	60
2	जुर्माना एवं कारावास दोना	350	35
3	कुछ नही	50	05

सारणी क्र. 6 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार के नियमों का पालन न करने पर 60 प्रतिशत लोगों का कहना है कि जुर्माना लगता है, 35 प्रतिशत लोगों का कहना है कि जुर्माना व कारावास दोनो होता है किन्तु 5 प्रतिशत लोगों का कहना है कि कुछ नही होता।

ग्राफ क्र.06

प्रतिलिप्याधिकार का दण्ड विधान मे प्रावधान

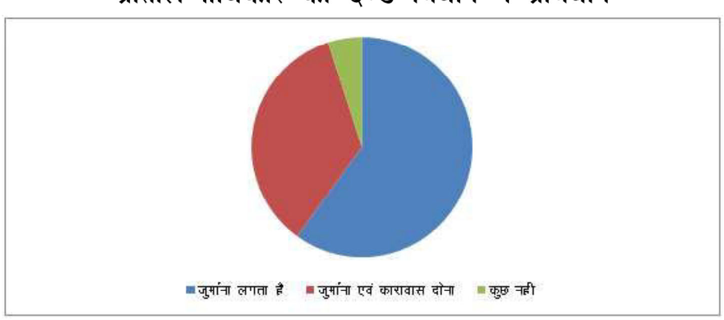

सारणी क्र.07

प्रतिलिप्याधिकार में पंजीयन सम्बंधी जानकारी

स.क्र.	विवरण	संख्या	प्रति.
1	मौलिक विचार या कृत्य पर	25	2.5
2	मौलिक प्रमाणिक कृत्य पर	75	7.5
3	उक्त दोनो पर	700	70
4	इनमें से कोई नही	200	20

सारणी क्र. 7 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार में पंजीयन सम्बंधी जानकारी का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि 2.5 प्रतिशत ऐसे है जिन्हे मौलिक विचार सम्बंधी जानकारी है किन्तु 7.5 प्रतिशत लोग ऐसे है जिन्हे मौलिक प्रमाणिक कृत्य सम्बंधी जानकारी है। 70 प्रतिशत लोग ऐसे है जिन्हे मौलिक विचार व मौलिक प्रमाणित कृत्य दोनो के सम्बंध में जानकारी है किन्तु 20 प्रतिशत लोग ऐसे है जिन्हे कोई जानकारी नही है।

ग्राफ क्र.07

प्रतिलिप्याधिकार में पंजीयन सम्बंधी जानकारी

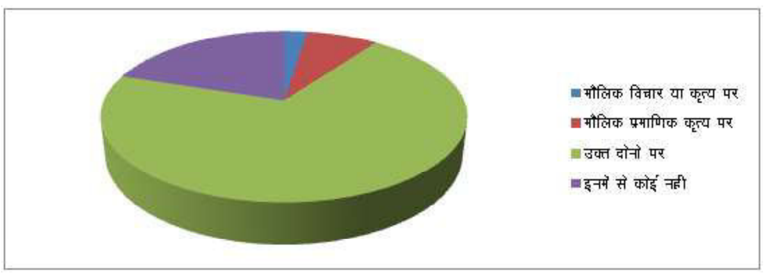

सारणी क्र.08

प्रतिलिप्याधिकार में मुकदमा कब दायर किया जा सकता

स.क्र.	विवरण	संख्या	प्रति.
1	पूर्णतः नकल करने पर	725	72.5
2	50 प्रति नकल करने पर	125	12.5
3	30 प्रति. नकल करने पर	100	10.0
4	मुकदमा लगा देने पर	50	5.0

सारणी क्र. 8 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार में मुकदमा दायर किया जा सकता है इस सम्बंध में 725 लोगो को कहना है कि पूर्णतः नकल करने पर दायर किया जा सकता है जिनका प्रतिशत 72.5 है। 125 लोगो का कहना है कि 50 प्रति. नकल करने पर प्रतिलिप्याधिकार में मुकदमा दायर किया जा सकता है। 10 प्रतिशत लोगो का कहना है कि 30 प्रतिशत नकल करने पर प्रतिलिप्याधिकार में मुकदमा

दायर किया जा सकता है किन्तु 5 प्रतिशत लोगो का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार में मुकदमा सिर्फ मुकदमा लगा देने से दायर हो जाता है।

ग्राफ क्र.08

प्रतिलिप्याधिकार में मुकदमा कब दायर किया जा सकता

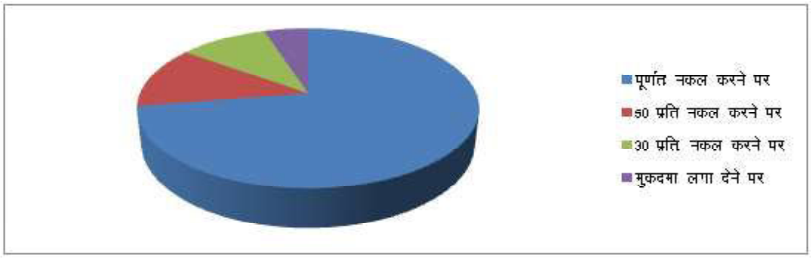

सारणी क्र.09

प्रतिलिप्याधिकार की सुरक्षा सम्बधी जबाबदारी

स.क्र.	विवरण	संख्या	प्रति.
1	राज्य सरकार	200	20
2	केन्द्र सरकार	300	30
3	आम जनता	100	10
4	न्यायालय की	300	30
5	इनमे से कोई नही	100	10

सारणी क्र. 9 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि प्रतिलिप्याधिकार की सुरक्षा संबंधी जबाबदारी राज्य सरकार की होती है इस सम्बंध में 200 लोगों का कहना है। 300 लोगों का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार की सुरक्षा संबंधी जबाबदारी केन्द्र सरकार की होती है। 100 लोगो का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार की सुरक्षा संबंधी जबाबदारी आम जनता की होती है। 300 लोगो का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार की सुरक्षा संबंधी जबाबदारी न्यायालय की होती है तथा 100 लोगों का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार की सुरक्षा संबंधी जबाबदारी उपरोक्त में से किसी की नही होती है।

ग्राफ क्र.09

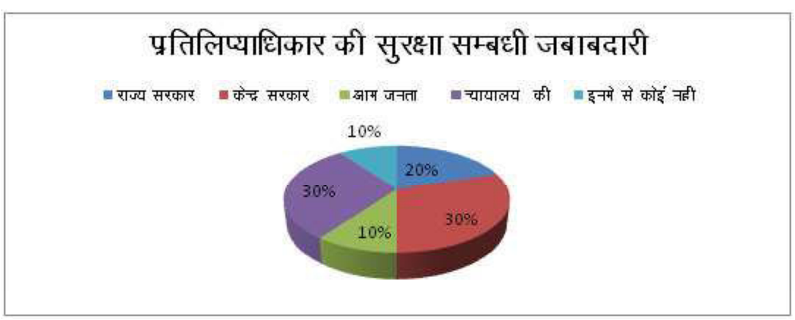

सारणी क्र.10

प्रतिलिप्याधिकार विवाद का स्वरूप है

स.क्र.	विवरण	संख्या	प्रति.
1	राष्ट्रीय	600	60
2	अन्तर्राष्ट्रीय	300	30
3	अन्य	100	10

सारणी क्र. 10 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि 600 लोगों का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार राष्ट्रीय विवाद का स्वरूप है। 300 लोगो का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार अन्तर्राष्ट्रीय विवाद का स्वरूप है। किन्तु 100 लोगों का कहना है कि प्रतिलिप्याधिकार न तो राष्ट्रीय विवाद न ही अन्तर्राष्ट्रीय विवाद का स्वरूप है।

ग्राफ क्र.10

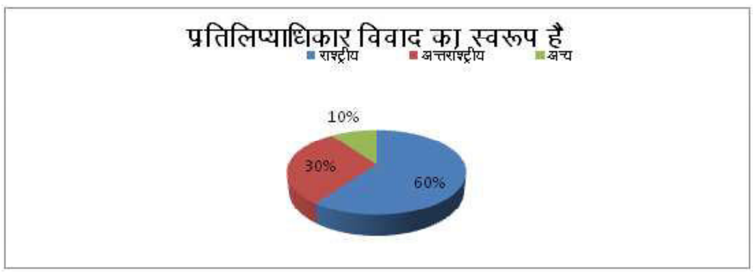

सारणी क्र.11

भारत में प्रतिलिप्याधिकार हस्तांतरण के योग्य है

स.क्र.	विवरण	संख्या	प्रति.
1	हाँ	600	60
2	नही	200	20
3	कह नही सकते	100	10
4	परिस्थितियों पर निर्भर	100	10

सारणी क्र. 11 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि भारत में प्रतिलिप्याधिकार हस्तांतरण के योग्य है के पक्ष में 600 लोगो का कहना है कि हस्तांतरण योग्य है। 200 लोगो का कहना है कि भारत में प्रतिलिप्याधिकार हस्तांतरण के योग्य नही है। 100 लोगो का कहना है कि कह नही सकते किन्तु 100 लोगो का कहना है कि भारत में प्रतिलिप्याधिकार का हस्तांतरण परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

ग्राफ क्र.11

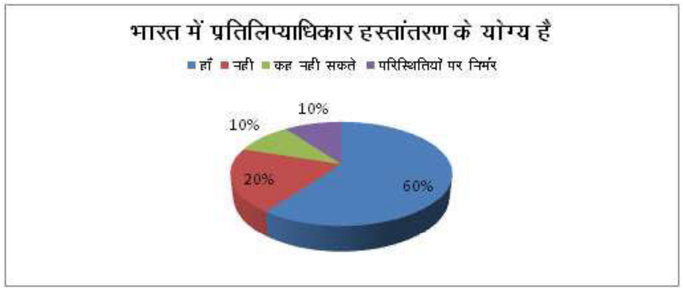

सारणी क्र.12
भारत में प्रतिलिप्याधिकार के फायदे

स.क्र.	विवरण	संख्या	प्रति.
1	हाँ	800	80
2	नही	200	20

सारणी क्र. 12 का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि भारत में प्रतिलिप्याधिकार के फायदे के समबंध में 80 प्रतिशत व्यक्तियों ने पक्ष में मत दिये किन्तु 20 प्रतिशत लोगो ने विपक्ष में मत दिये।

ग्राफ क्र.12

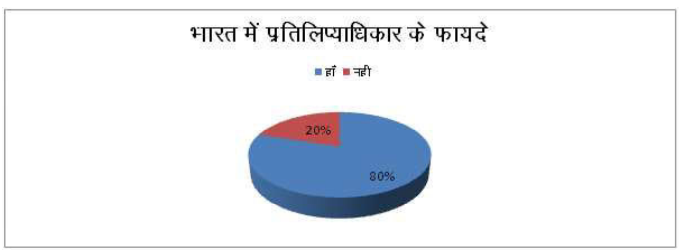

निष्कर्ष–

निष्कर्ष रूप में प्रतिलिप्याधिकार के प्रवर्तन की चुनौतियों का समाधान कतिपय सुधारों द्वारा समस्याओं के समाधान पर वांछित लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती है। चूंकि प्रतिलिप्याधिकार का सम्बंध समाज के एक छोटे वर्ग से सम्बंधित होता है, समाज का बड़ा वर्ग ऐसी चीजों का आनन्द लेने वाला होता है। अतः उस वस्तु के उपयोग पर प्रतिबंध नही लगाया जा सकता है परन्तु उसके व्यावसायिक प्रयोग हेतु लोगों को सचेत करना आवश्यक है अतः लोगों को इसे प्रति जागरूक करने का प्रयास करना चाहिए। ऐसे प्रतिलिपि के स्वामी को प्रतिलिपि सम्बंधी विधियों के सम्बंध में जानकारी होनी चाहिए। प्रतिलिपि एवं पेटेंट सम्बंधी विधियों में पंजीयन की प्रक्रिया जटिल है अतः इसे सरल बनाया जाना चाहिए। सरकार के अधीन बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के संरक्षण हेतु बनाये गये संस्थाओं को बौद्धिक सम्पदा के संरक्षण हेतु लोगो में जागरूकता लाने के लिए कार्यशाला, संगोष्ठियाँ, नुक्कड़-नाटक इत्यादि समय समय पर छोटे छोटे शहरों व

कस्बों में आयोजित किया जाना चाहिए।

परिकल्पनाओं का परीक्षण– समाज के विभिन्न वर्गो के लोगों के वैचारिक दृष्टिकोण का विश्लेषण करने पर–

हमारी पहली परिकल्पना कि प्रतिलिप्याधिकार आर्थिक एवं सामाजिक विकास हेतु आवश्यक है, प्रमाणित होती है।

हमारी दूसरी परिकल्पना कि प्रतिलिप्याधिकार का संरक्षण संवैधानिक अधिकारों द्वारा संभव है प्रमाणित होती है।

हमारी तीसरी परिकल्पना कि प्रतिलिप्याधिकार से पुनर्प्रचलन नियंत्रित होता है प्रमाणित होती है।

हमारी चौथी परिकल्पना कि प्रतिलिप्याधिकार से बौद्धिक सृजनशीलता में अभिवृद्धि होती है जिसमें मानवीय कल्याण के विकल्प उद्‌भावित होते है, प्रमाणित सिद्ध होती है।

===================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. Acharyal N-K- (2001) A TeÛt book on Intellectual property rights- Hyderabad
2. Asia Law House-
3. Collins Cobuild English Language Dictionary- (1987) London, Collins
4. भारत सरकार,कॉपीराईट अधिनियम संशोधित 2012, नई दिल्ली
5. Rai R.P. Access to justics to the poor
6. मिश्र, जयप्रकाश ''बौद्धिक सम्पदा अधिकार एक परिचय'' सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन इलाहाबाद।
7. बावेल बसंतीलाल ''बौद्धिक सम्पदा कानून'' सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद।
8. प्रतिलिप्यधिकार अधिनियम, 1957 भारत सरकार नई दिल्ली।
9. रीड व एजेंल ''कम्प्यूटर लॉ'' चतुर्थ संस्करण, यूनिवर्सल लॉ पब्लिशिंग कम्पनी प्रा.लि. नई दिल्ली

पत्र-पत्रिकाएँ–

1. दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर, टाइम्स ऑफ इण्डिया, क्राइम ऑफ इण्डिया, इण्टरनेट आदि।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

दुर्ग नगर पालिका निगम में कार्यरत नियमित एवं अनियमित चतुर्थ वर्गीय महिला कर्मचारियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन

* शैमीना परवीन
** अमरकांत पाण्डेय

सारांश– *प्रस्तुत शोध पत्र में दुर्ग नगर निगम में कार्यरत नियमित एवं अनियमित चतुर्थ वर्गीय महिला कर्मचारियों की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन में यहां पाया गया है कि जहां नियमित कर्मचारियों को रोजगार की सुरक्षा है वहीं अनियमित कर्मचारियों को हमेशा बेरोजगार होने का भय बना रहता है। दोनों ही कर्मचारियों द्वारा एक समान कार्य करने पर भी उनको प्राप्त होने वाली आय में बहुत अंतर है। समान कार्य करने पर भी उन्हें समान आय प्राप्त नहीं होती है। इन महिलाओं में आज भी शिक्षा का निम्न स्तर है और शिक्षा का निम्न स्तर होने के कारण इनकी आर्थिक स्थिति भी निम्न है।*

मुख्य शब्द– महिला, कर्मचारी, रोजगार, आय, शिक्षा

प्रस्तावना– किसी भी देश का समग्र विकास महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के बिना अधूरा है। राष्ट्र प्रेणता स्वामी विवेकानन्द ने विकास प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिका को स्वीकार करते हुए उचित ही कहा था कि "जिस प्रकार एक पंख से चिड़िया उड़ान नहीं भर सकती है उसी प्रकार महिलाओं की सहभागिता के बिना कोई राष्ट्र प्रगति नहीं कर सकता है।" महिलाएं समाज का एक अभिन्न अंग हैं। अतः सामाजिक, आर्थिक विकास की अवधारणा महिलाओं के विकास के बिना अधूरी है। माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू जी ने भी इसी तथ्य को पुष्ट करते हुए कहा था कि यदि आपको विकास करना है, तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं के विकास होने पर समाज का विकास स्वतः हो जायेगा।

आर्थिक क्रियाओं में महिलाओं द्वारा भाग लेना कोई नई बात नहीं है, आज वर्तमान में औद्योगिकिकरण तथा नारी शिक्षा व बड़े पैमाने के उत्पादन के प्रारंभ होने के कारण महिलाओं ने लाभप्रद रोजगार क्षेत्रों में प्रवेश किया है और अब तक का इतिहास यह बताता है कि किसी भी रूप में ये पुरूषों से पीछे नहीं है और आवश्यकता पड़ने पर

* शोध छात्रा, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

पुरूषों की भांति ही प्रत्येक प्रकार के कार्य कर सकती है।

अर्थ :- यहां चतुर्थ वर्गीय महिला कर्मचारियों से तात्पर्य उन महिला कर्मचारियों से है जो विभिन्न कार्यालयों में सफाई कर्मचारी का कार्य करतीं हैं। दुर्ग नगर पालिका निगम के अंतर्गत कार्यरत वे महिलाएं हैं जो कार्यालय में भृत्य का कार्य कर रही है सडकों में बगीचों में सफाई का कार्य कर रही हैं। तथा मिशन क्लीन सिटी या स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत घरों में जा कर कचरा एकीकृत करने का कार्य करती हैं।

अध्ययन का उद्देश्य :-

1. कार्यरत चतुर्थ वर्गीय (नियमित व अनियमित) महिला कर्मचारियों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को ज्ञात करना।
2. महिला कर्मचारियों के आय एवं गरीबी का मूल्यांकन करना।
3. उनकी शैक्षणिक स्थिति का पता लगाना।
4. उनकी समस्याओं का ज्ञान प्राप्त करना।
5. चतुर्थ वर्गीय (नियमित व अनियमित) महिला कर्मचारियों का तुलनात्मक विश्लेषण।
6. अध्ययन का विश्लेषण कर सुधार हेतु आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन का क्षेत्र :- प्रस्तुत शोध का अध्ययन क्षेत्र दुर्ग जिले के दुर्ग नगर पालिका निगम को लिया गया है। जिसका कुछ क्षेत्रफल 54.11 वर्ग कि.मी. है तथा जिसकी कुल जनसंख्या लगभग 292135 है। तथा दुर्ग नगर निगम में कुल वार्डों की संख्या 60 है। तथा दुर्ग नगर निगम को तीन जोनों में विभिक्त किया गया है। दुर्ग नगर निगम में कुल कर्मचारियों की संख्या लगभग 2088 है। जिसमें चतुर्थ वर्गीय कर्मचारियों की संख्या लगभग 1587 है तथा दुर्ग नगर निगम क्लास 'C' श्रेणी में आता है। प्रस्तुत शोध के लिए दुर्ग नगर निगम में कार्यरत चतुर्थ वर्गीय 50 नियमित एवं 50 अनियमित कुल 100 कर्मचारियों का चयन किया गया है।

समंकों का संकलन :- ज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्य अपरिहार्य है। शोध कार्यों द्वारा उन प्रश्नों का उत्तर जानने का प्रयास किया जाता है जिनका उत्तर उपलब्ध नहीं है। प्रस्तुत अध्ययन मुख्य रूप से प्राथमिक आकड़ों पर आधारित है। आकड़ों का संकलन करने हेतु साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है निदर्शन विधि द्वारा चुने गये उत्तरदाताओं से प्राथमिक समंकों का संग्रहण किया गया है आवश्यकता अनुसार विभिन्न स्त्रोतों से संग्रहित द्वितीय समंकों जैसे, शोध अध्ययन पत्रों, पत्रिकाओं, समाचार पत्रों का भी प्रयोग किया गया है।

तथ्यों का संकलन वर्गीकरण एवं विश्लेषण :- प्रस्तुत शोध पत्र तैयार करने के लिए अनुसूची का प्रयोग कर संबंधित सूचनाओं एवं तथ्यों को प्राप्त कर उन तथ्यों का विश्लेषण एवं वर्गीकरण किया गया है।

न्यादर्श महिला कर्मचारियों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन

सारणी क्रमांक-1

आयु के आधार पर वर्गीकरण

		नियमित		अनियमित	
क्रमांक	आयु वर्ग	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	20–30	5	10	10	20
2.	30–40	6	12	23	46
3.	40–50	16	32	13	26
4.	50–60	23	46	4	8
	योग	50	100	50	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि दुर्ग नगर निगम मे कार्यरत चतुर्थ वर्गीय नियमित महिला कर्मचारियों में 50-60 वर्ष की महिलाओं का सर्वाधिक प्रतिशत (46) है। जबकि 20-30 आयु वर्ग के लोग 10 प्रतिशत सबसे कम है, वहीं अनियमित कर्मचारियों में सर्वाधिक आयु स्तर 30-40 आयु वर्ग की महिलाओं का 46 प्रतिशत है तथा 50-60 आयु वर्ग के केवल 8 प्रतिशत पाया गया है।

तालिका क्रमांक 2

जाति के आधार पर वर्गीकरण

		नियमित		अनियमित	
क्रमांक	जाति	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	अनुसूचित जनजाति	5	10	13	26
2.	अनुसूचित जाति	32	64	27	54
3.	अन्य पिछड़ा वर्ग	13	26	10	20
4.	सामानय	–	–	–	–
	योग	50	100	50	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि इस कार्य में कार्यरत महिलाओं में से अधिकतर अनुसूचित जाति की महिलाओं की बहुलता है तथा नियमित में 64 प्रतिशत तथा अनियमित कर्मचारियों में 54 प्रतिशत महिलाएं अनुसूचित जाति की हैं।

तालिका क्रमांक 3

शिक्षा के आधार पर वर्गीकरण

		नियमित		अनियमित	
क्रमांक	शिक्षा	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	अशिक्षित	30	60	21	42
2.	प्राथमिक	8	16	13	26
3.	मध्यमिक	8	16	11	22
4.	हाईस्कूल	3	6	3	6
5.	हायर सेकण्डरी	1	2	2	4
	योग	50	100	50	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने पर यहां स्पष्ट होता है कि इन नियमित एवं

अनियमित महिला कर्मचारियों में अधिकतर कर्मचारी अशिक्षित हैं। नियमित में 60 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित है तथा अनियमित में 42 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित हैं। केवल 2 तथा 4 प्रतिशत महिलाएं ही 12वीं तक शिक्षा प्राप्त किया हैं। इस प्रकार इन महिलाओं में शिक्षा का स्तर बहुत ही निम्न है।

तालिका क्रमांक 4

आय के आधार पर वर्गीकरण

		नियमित		अनियमित	
क्रमांक	आय का वर्गान्तर	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	0—5000	—	—	34	68
2.	5000—10000	33	66	16	32
3.	10000—20000	17	34	—	—
	योग	50	100	50	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि नियमित कर्मचारियों की मासिक आय सर्वाधिक 10000-20000 वर्ग की (66) प्रतिशत है तथा अनियमित कर्मचारियों की मासिक आय 0-5000 (68) प्रतिशत है।

निष्कर्ष :- चतुर्थ वर्गीय महिला कर्मचारियों द्वारा किये जाने वाला सफाई का कार्य पूरे समाज की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि स्वस्थ व्यक्ति ही राष्ट्र का निर्माण कर सकता है और व्यक्ति तभी स्वस्थ रह सकता है जब उसके आस-पास का वातावरण साफ हो। अध्ययन से यहां स्पष्ट है कि इन चतुर्थ वर्गीय महिला कर्मचारियों में अधिकतर महिलाएं अशिक्षित है। अशिक्षित या निम्न शिक्षित होने के कारण इनकी आय भी कम है तथा आय के आधार पर देखा जाये तो समान कार्य करने पर भी नियमित एवं अनियमित होने के फलस्वरूप इनकी आय में बहुत अंतर है। सफाई कार्य में अधिकतर अनुसूचित जाति की महिलाएं कार्यरत है तथा आयु में भी नियमित में अधिक आयु की महिलाएं कार्यरत है तथा अनियमित में युवा महिलाओं की संख्या अधिक है अनियमित कर्मचारियों को रोजगार की सुरक्षा का भय हमेशा रहता है।

सुझावः- इन चतुर्थ वर्गीय महिलाओं की स्थिति अत्यधिक निम्न है। इसके लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं:-

1. महिलाओं को शिक्षित करने के लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए।
2. महिलाओं के शारीरिक, आर्थिक व सामाजिक शोषण को रोकने के लिए कानूनों का सख्ती से पालन होना चाहिए।
3. इन महिलाओं के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों को दूर करने के लिए निःशुल्क चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
4. उच्चतम न्यायालय के निर्देशानुसार समान कार्य के लिए समान वेतन के नियम का पालन किया जाना चाहिए।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. अल्का रात्रे "आर्थिक विकास में महिला कामगारों की भूमिका" International Research

Journal Lab to Land vol.3 No. 10 2011 पृष्ठ नं. 352-355

2. मधुलिका श्रीवास्तव एवं श्रद्धा शुक्ला "ग्रामीण समाज में महिला मजदूरों की सामाजिक स्थिति" Research Journal of social and life science Vol.XX1, Year 2011, Hindi 11 Dec. 2016 पृष्ठ नं. 33

3. के.के. शर्मा एवं नेहा सिंह बघेल "कामकाजी महिलाओं में शिक्षा की स्थिति।" Research Journal of social and life science Vol.XX1, Year 2011, Hindi 11 Dec. 2016 पृष्ठ नं. 142

4. अप्रकाशित शोध प्रबंध "शासकीय कार्यालयों में कार्यरत चतुर्थ वर्गीय महिला कर्मचारियों के जीवन स्तर का विश्लेषणात्मक अध्ययन।"

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

वृद्धों की समस्यायेंः एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

* गजानन मिश्र

सारांश– *वर्तमान समय में विभिन्न सामाजिक समस्याओं के साथ–साथ वृद्धों की समस्या समाज के लिए एक गम्भीर समस्या बन चुकी है और यह आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप और भी क्रमशः बढ़ती जा रही है। सामाजिक नीति कारकों या अन्य संस्थाओं के द्वारा कोई ठोसगत नीति न हो पाने की वजह से समस्या से सुलझने का कोई उपाय नहीं मिल पा रहा है। भारतीय संदर्भ में ऐसे सामाजिक शोधों की संख्या कम हैं जो वृद्धों की समस्याओं को समाज के समक्ष रख सकें। अब यह आवश्यक हो गया है कि इस विषय पर गहन आनुभाविक अध्ययन कर उचित नीति निर्धारण किया जाये जिससे इस समस्या से निजात मिल सके।*

मुख्य शब्द– वृद्ध, सामाजिक नीति, आधुनिकीकरण।

समकालीन समाज में विविध सामाजिक-आर्थिक, जनांकिकीय एवं अन्य कारकों के प्रभाव से विविध सामाजिक समस्याओं एवं विसंगतियों ने जन्म लिया है, उन्हीं में से एक है 'वृद्धों के प्रति दुर्व्यवहार। यह एक जटिल समस्या है और विकसित एवं विकासशील देशों में इसमें लगातार वृद्धि होती जा रही है। उल्लेखनीय है कि वृद्धों के प्रति दुर्व्यवहार को अत्यंत गंभीरता से लिया जाने लगा है जो यह दर्शाता है कि पूरे विश्व में मानवाधिकार और यौन समानता तथा साथ ही साथ घरेलू हिंसा और जनसंख्या में वृद्धों के बढ़ते अनुपात की सोच बढ़ी है।''[1] वर्तमान परिवेश में वृद्धों की समस्या एक मूलभूत सामाजिक समस्या है। वृद्धों की उपेक्षा एवं दुर्व्यवहार से संबंधित आंकड़े उपलब्ध नहीं होते उसका मूल कारण है कि बन्द कमरों में इन्हें प्रताड़ित किया जाता है, न ही इनके संबंध में पुलिस में कोई केस दर्ज होता है। सबसे ज्यादा वृद्ध उच्च और मध्यम वर्गीय परिवारों में होते हैं, जहां संवेदनाऐं धीरे-धीरे शून्य होती जा रही हैं व एकाकी परिवारों की वजह से लोग अपने आप में सिमटते जा रहे हैं। यही वजह है कि दुर्व्यवहार चरम सीमा तक बढ़ता जा रहा है। हमारा प्रशासन नीति न्यामक और विभिन्न विद्वतजन् इस संबंध में मौन धारण किये रहते हैं। जबकि वर्तमान में हालात ये है कि वृद्धाश्रमों की संख्या बढ़ती जा रही है और दिन व दिन वृद्ध प्रताड़ित हो रहे हैं। यह सत्य है कि प्राचीनतम समय में भी वृद्धों की स्थिति भी अच्छी नहीं रही है। परन्तु आज की अपेक्षा बेहतर थी।

वृद्धों के प्रति दुर्व्यवहार को परिभाषित करने में विद्वानों में एक मतता नहीं है। ऐसा माना जाता है कि वृद्धों के प्रति दुर्व्यवहार करना एक आवश्यक कृत्य हो गया है, जिसके अन्तर्गत वृद्धों को बल पूर्वक उनके स्थान से निकाल दिया जाता है और अन्यत्र रहने के

* सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, महात्मा गांधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, करेली

लिए विवश होना पड़ता है, जिसमें वह अपना भरण-पोषण विभिन्न बीमारियों का शिकार होकर भीख मांगकर करते हैं। भारतीय समाज में यही स्थिति पुरूषों के साथ-साथ महिलाओं की भी है, जिसमें घर से संतानहीन विधवाओं को निकालना या टोने-टोटके या जादू का आरोप लगाकर उन्हें घर से बेघर करना आदि शामिल है।

भारतीय परिवार व समाज में प्राचीनकाल से ही वृद्धजनों को विशिष्ट व सम्मानीय स्थान प्राप्त रहा है। परम्परागत संयुक्त परिवारों में प्रायः परिवार के वरिष्ठतम सदस्य को ही परिवार के 'कर्ता' या मुखिया का स्थान प्राप्त होता था तथा पारिवारिक जीवन के संचालन में उनके निर्णयों को परिवार जन स्वाभाविक रूप से स्वीकार करते थे। परिवार में बच्चों के पालन-पोषण, उनकी शिक्षा, समाजीकरण, विवाह, पारिवारिक परम्पराओं के निर्वहन आदि में वृद्धजनों की सदा से ही महत्वपूर्ण भूमिका रही है। परन्तु आज के सामाजिक-आर्थिक दबावों व परिवर्तनों ने परम्परागत भारतीय समाज के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित किया है। औद्योगीकरण व परिणामस्वरूप बढ़ते नगरीकरण व जनसंख्या के प्रवजन की प्रवृत्ति ने लम्बे समय से चली आ रही संयुक्त परिवार जैसी संस्था को प्रभावित किया है। तकनीकि उन्नति, जनसंचार के साधनों के प्रभाव तथा उच्चस्तरीय गतिशीलता ने स्थापित जीवनशैली, पारम्परिक मूल्य व्यवस्था तथा वृद्धों को समाज में प्रथागत रूप से प्राप्त स्थान को भी प्रभावित किया है। इसी कारण आज परिवारों में वृद्धजनों को भावनात्मक उपेक्षा व सहयोग की कमी का सामना करना पड़ रहा है। आयुगत विभेद के कारण आज वृद्धजन अलगाव, पृथक्करण तथा परिवार व समाज में हाशिये पर कर दिये जाने की भावना से पीड़ित होते जा रहे हैं। वस्तुतः संयुक्त परिवार, जाति व्यवस्था व ग्रामीण समुदाय जैसी सामाजिक संस्थाएं, जो कि वृद्धों के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती थी, अब कमजोर हो रही हैं तथा इसका प्रभाव भी वृद्ध जीवन पर देखा जा सकता है। इन्हीं सब परिस्थितियों के चलते आज वृद्ध जीवन क्रमशः कठिन होता जा रहा है तथा भारत में भी वृद्धावस्था धीरे-धीरे एक समस्या का रूप लेती जा रही है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो भारतीय परम्परा में वृद्धावस्था को एक स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में देखा गया तथा वैदिक कालीन मनीषियों ने वृद्धावस्था की समस्याओं पर गम्भीर चिन्तन करते हुए ऐसे सामाजिक विधान बनाये, जिससे वृद्ध जीवन सुरक्षित व सम्मानित हुआ। ऋग्वेद में 'जीमेव शरद शत्' द्वारा सौ वर्ष जीने की कामना की गयी है। वात्सायन ने भी अपने कामसूत्र में मानव जीवन को सौ वर्ष का मानकर उसे बाल्यावस्था, यौवनावस्था स्थविर या वृद्धावस्था इन तीन स्तरों में विभाजित किया है।

मनुष्य जीवन में क्रमशः बाल्यावस्था, युवा तथा जरा या वृद्धावस्था जीवन के अनिवार्य स्तर हैं तथा एक निश्चित आयु के पश्चात् जीवन में वृद्धावस्था के आगमन को एक स्वाभाविक स्थिति माना जा सकता है। भारतीय संदर्भ में जीवन को सौ वर्ष मानकर उसे चार आश्रमों में विभाजित करने सम्बन्धी हिन्दू दृष्टिकोण को सकारात्मक एवं आशावादी कहा जा सकता है। शर्मा एवं तिवारी (1983) के अनुसार आश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत ब्रम्हचर्य एवं गृहस्थ के दायित्वों के निर्वाह के पश्चात् वानप्रस्थ आश्रम को स्थान दिया गया है, जिसमें यद्यपि व्यक्ति के सक्रिय जीवन से विलग होने की बात की

गई है, परन्तु इस आयु वर्ग के व्यक्तियों के अनुभवों को परिवार तथा समाज दोनों के संदर्भ में महत्वपूर्ण एवं उपयोगी माना गया है। यद्यपि आश्रम व्यवस्था के अनुरूप व्यक्ति के जीवन के विभाजन की वास्तविकता को प्रमाणित नहीं किया जा सकता परन्तु दार्शनिक धरातल पर देखा जाय तो यक एक ऐसी व्यवस्था मानी जा सकती है, जिसमें वृद्धजनों के जीवन के सम्पूर्ण समाज के उत्थान हेतु समुचित उपयोग की सम्भावना है। राय चौधरी (1969) के विचारानुसार वानप्रस्थ आश्रम सामाजिक जीवन में वृद्ध व्यक्तियों की समस्याओं को कम करने में सहायक समझा गया।

भारत में पूर्व औद्योगिक समाजों के आधुनिक विकसित समाजों की ओर संक्रमण की स्थिति में सामाजिक-पारिवारिक समायोजन को प्रभावित किया है जिसका वृद्धों के जीवन पर भी स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। इसी कारण वर्तमान में परिवार के वृद्धों का महत्व निरन्तर घट रहा है और उनके कार्यों को विभाजन भी अन्य वयस्क सदस्यों के साथ होने लगा है। अब पारिवारिक सत्ता केवल माता-पिता या बड़े-बूढ़े सदस्यों के हाथों में भी केन्द्रित नहीं है बल्कि परिवार के अन्य वयस्क सदस्यों में बंट कर विकेन्द्रित हो रही है। यद्यपि अतीत में पारिवारिक शक्ति संरचना में वृद्धों का सशक्त व महत्वपूर्ण स्थान था परन्तु परिवर्तन की प्रक्रिया के दौरान व विशेष रूप से स्वतंत्रता के पश्चात् सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन में हुए परिवर्तनों का वृद्ध जीवन पर भी स्पष्ट प्रभाव देख जा सकता है। आधुनिकीकरण के विस्तार, गतिशीलता में वृद्ध, श्रमशक्ति में महिलाओं की बढ़ती भागेदारी तथा युवा पीढ़ी में बढ़ती प्रवजन की प्रवृत्ति आदि कारकों ने वृद्ध जीवन को निश्चित रूप से प्रभावित किया है तथा उनकी सामाजिक प्रस्थिति पहले की तुलना में कमजोर हुई है। तेजी से परिवर्तित हो रही सामाजिक व्यवस्था में वृद्धों के सामने अनेक समस्याएं भी उत्पन्न हो गयी हैं।

विभिन्न अध्ययनों में यह देखा गया है कि वृद्धजन चाहे वे किसी भी जाति, संस्कृति या सामाजिक पृष्ठभूमि के हों, अनेक प्रकार की समस्याओं से ग्रस्त हैं। नंदलाल खत्री एवं कादियान (1987)[2] ने हरियाणा के पांच गांवों में किये गये अध्ययनों के आधार पर वृद्धजनों की विभिन्न समस्याओं के समाधान के संदर्भ में सुझाव देते हुए कहा कि वृद्धों की असहायता की रूढ़िगत मनोवृत्तियों को छोड़ना पड़ेगा साथ ही दूसरी ओर युवा वर्ग को अधिक सहानुभूति एवं सहनशीलता से उनकी समस्याओं को समझने और उनके प्रति संवेदनशील होना होगा। रमन (1986)[3] के अध्ययन के अनुसार सामाजिक अकेलापन एकाकी वृद्ध पुरूषों को वृद्ध महिलाओं की अपेक्षा अधिक प्रभावित करता है। इस समस्या का मुख्य कारण समाज की मुख्य धारा से स्वयं को हटा लेना होता है और कुछ वृद्धों का अड़ियल और दकियानूसी रवैया होता है। पाल एवं शर्मा (1985)[4] के अनुसार वृद्ध होने की प्रक्रिया उन दो प्रक्रियाओं से जुड़ी हुई है जिसमें 1- वृद्धों को लाभार्जन एवं सम्पत्ति जोड़ने से धीरे-धीरे अलगाव करना होता है तथा 2- परिवार के सदस्यों से भावनात्मक दूरी बनानी पड़ती है। वृद्धावस्था को बीमारी, क्षय एवं टूटने से जुड़ी हुई अवस्था नहीं माना गया है। इसके विपरीत इस अवस्था को जीवन की उच्चतर अवस्थाओं के लिए एक तैयारी की व्यवस्था कहा जा सकता है, जो वृद्धों को समाजीकृत करती है। नायर (1987)[5] का मत है कि आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण, लौकिकीकरण, व्यावसायिक विविधता, शिक्षा, व्यक्तिवादी दर्शन के विकास ने, उन

परम्परागत मूल्यों जिनके कारण वृद्धजनों को सत्ता एवं शक्ति प्राप्त थी, को कमजोर किया है और इसी से उनकी प्रस्थिति का महत्व भी कम हुआ है। परिणामस्वरूप युवा पीढ़ी के सदस्यों में वृद्धों के लिए सम्मान की भावना कम हुई है।

वृद्ध महिलाओं में समायोजन की समस्या संबंधित अपने अध्ययन में आशा व सुब्रमण्यम (1990)[6] ने स्पष्ट किया है कि वृद्ध पुरूषों की तुलना में वृद्ध महिलाओं की समायोजन से संबंधित अधिक समस्यायें होती हैं। इसके अतिरिक्त इस अध्ययन में यह भी स्पष्ट हुआ है कि स्वास्थ्य, भावनात्मक व सामान्य समायोजन के सन्दर्भ में ग्रामीण व नगरीय महिलाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। परन्तु सामाजिक समायोजन के सन्दर्भ में उनके उल्लेखनीय अन्तर दिखाई दिया अम्बेडकर (1990)[7] ने वृद्धावस्था की समस्याओं का कारण वृद्धों की रूढ़िवादिता और युवाओं का आधुनिक मूल्यों को अपना लेने की उत्सुकता के बीच संघर्ष को बताया है। इन दो पीढ़ीगत समूहों के बीच में स्वस्थ एवं स्वतंत्र संचार की कमी रही है। इसमें यह बात भी जोड़ी जा सकती है कि युवा सोचते हैं कि वृद्ध दकियानूसी होते हैं। रन्धावा (1991)[8] ने ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में रहने वाले वृद्धों की सामाजिक-मनावैज्ञानिक , आर्थिक एवं स्वास्थ्य संबंधित दशाओं का अध्ययन किया है। वे यह परिकल्पना करते हैं कि ग्रामीण वृद्ध शहरी वृद्धों की तुलना में अधिक संतुष्ट हैं तथा दोनों लिंगों के वृद्ध, पुरूष रिश्तेदारों की तुलना में अपने महिला संबंधियों के साथ रहना पसंद करते हैं। सम्पन्न परन्तु एकाकी जीवन व्यतीत करने वाले वृद्धों की अपेक्षा वे वृद्ध अधिक संतुष्ट पाये गये जो कि अपने रिश्तेदारों के साथ रहते हैं। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि सामाजिक सामन्जस्य के सम्बन्ध में जाति, शिक्षा, आर्थिक प्रस्थिति, रहन-सहन और भावनात्मक सहयोग महत्वपूर्ण कारक हो सकते हैं। डॉ0 इंदिरा जय प्रकाश (1997)[9] ने अपने अध्ययन में कहा है कि वृद्धावस्था में महिलाओं को तीन प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वृद्ध होना, स्त्री होना तथा गरीब होना। अधिकतर वृद्ध महिलाएं आर्थिक रूप से दूसरों पर आश्रित होती हैं, क्योंकि उनके पास प्रायः लाभदायक रोजगार नहीं होता है। ऐसी कोई भी विस्तृत सामाजिक सुरक्षा पद्धति नहीं है जिससे सभी जरूरतमंद वृद्धों को सुरक्षा प्रदान की जा सके। 74 प्रतिशत वृद्ध स्त्रियां अपने जीवन को पति के बिना ही बिताती हैं क्योंकि उम्र के साथ-साथ विधवा होने के संयोग अधिक होते हैं। आज 50 प्रतिशत वृद्ध स्त्रियां अशिक्षित हैं तथा 75 प्रतिशत किसी न किसी रोग से ग्रस्त हैं। यह संख्या तेजी से बढ़ रही है। इनमें से अधिकतर बच्चों के साथ रहती हैं तथा उनके जीवन की स्थिति उनकी देखरेख करने वालों के मनोभावों, साधनों तथा प्रवृत्ति पर निर्भर करती हैं। स्नेजा एवं त्याग (1999)[10] ने हेल्प एज इंडिया द्वारा आयोजित दिल्ली के ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में परिवार एवं वृद्धावस्था सम्बन्धी अपने अध्ययन में यह पाया कि वृद्धों की रहन-सहन की दशाओं में उनकी वित्तीय प्रस्थिति में कमी के साथ-साथ गिरावट आयी है। वृद्धों का मानना था कि युवा वर्ग की अभिवृत्तियां उनके प्रति बदली हैं और वे परिवार में अपनी सम्मानजनक स्थिति तभी तक बनाये रख सकते हैं जब तक परिवार में उनका हस्तक्षेप कम हों यह अध्ययन मध्यमवर्गीय वृद्धों को उनके आवास पर ही स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने की अवश्यकताओं को भी दर्शाता है। गौर एवं कौर (1001)[11] ने चंडीगढ़, पंचकुला व मोहाली के संस्थागत व गैर संस्थागत समूहों की कुल 200 वृद्धों का अध्ययन किया।

वृद्धजनों की जीवन संतुष्टि के मूल्यांकन के लिए उन्होंने अपने अध्ययन में लिकर्ट के स्केल का प्रयोग किया। उनके अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि जीवन संतुष्टि के मामले में संस्थागत वृद्धों की तुलना में गैर संस्थागत वृद्धों की संतुष्टि का स्तर उच्च था। साथ ही महिलाओं की तुलना में पुरूषों का संतुष्टि स्तर भी ऊँचा देखा गया। वृद्ध महिलाओं की तुलना में वृद्ध पुरूष आर्थिक रूप से अधिक स्वतंत्र व वाह्य गतिविधियों में संलग्न रहते थे। शोधकर्ताओं ने इस संदर्भ में सुझाव देते हुए कहा कि भारतीय परिवार आज भी वृद्धजनों के लिए आदर्श स्थान है। अतः औपचारिक संस्थानों में रहने की संस्तुति केवल उन्ही वृद्धों के लिए की जानी चाहिए जो पूर्णतः असहाय हैं। सामाजिक परिवर्तन के दौरान बहुत तेजी से वृद्धों के सामने अनेक समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं, जिसमें मूलरूप से है वृद्धों का विभिन्न बीमारियों से ग्रसित होना तथा परिवार के लोगों के द्वारा उनका उपचार न कराना, अपर्याप्त आय विहीन एकाकी जीवन और वर्तमान युवा पीढ़ी तथा वृद्धों के बीच संवाद हीनता व वैचारिक असमानता का टकराव एक संघर्षात्मक स्थिति को पैदा करता है। उनकी पेंशन को परिवार के द्वारा निकालना व रख लेना जिससे दैनिक जीवन में आने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति न होना उनमें तनाव उत्पन्न कराता है। परिवार में कितने ही अमीर लोग क्यों न हों फिर भी वृद्धों को समय पर भोजन नहीं मिल पाता। आदि कुछ ऐसी समस्यायें जिनका समाधान आवश्यक है। यह सत्य है कि विभिन्न सामाजिक प्रक्रियाओं के परिणाम स्वरूप सामाजिक संरचना परिवर्तित हुई है। जिसमें संयुक्त परिवार टूटे हैं और एकाकी परिवारों का जन्म हुआ है। इन परिवारों में पति-पत्नी दोनों का नौकरी करना या व्यवसाय के लिए बाहर जाना वृद्धों की समस्याओं को बढ़ाता है। शहरी स्तर पर तो नौकरी से सेवा निवृत्त होने के पश्चात् यह मान लिया जाता है कि व्यक्ति वृद्ध हो चुका है, किन्तु ग्रामीण स्तर पर जिस उम्र तक व्यक्ति काम करता रहता है, उसे वृद्ध नहीं माना जाता। वर्ष 1991 को संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष घोषित किया गया था, उसके पश्चात् वृद्धों की समस्याओं के संबंध में विभिन्न अध्ययन हुए परन्तु वह पर्याप्त नहीं थे। 1951 में 60 वर्ष से ऊपर की आयु के लोगों की जनसंख्या 1.98 करोड़ थी , कुल जनसंख्या का 4.5 प्रतिशत। जो कि 1991 में 6.7 प्रतिशत हो गयी थी। जबकि 2001 की जनसंख्या के आंकड़ों के अनुसार कुल जनसंख्या में 60+ आयु वर्ग के लोगों की संख्या 7.66 करोड़ है जो कुल का 7.4 प्रतिशत है। भारत में 80 लाख वृद्ध 80 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुके हैं। 2.9 करोड़ वृद्ध ऐसे हैं जिनकी आयु 70 वर्ष से ऊपर है। 2011 की जनगणनों में वृद्धों की संख्या 12.7 करोड़ थी, ऐसा अनुमान है कि 2015 तक यह जनसंख्या बढ़कर 28 से 30 करोड़ हो सकती है, इसका कारण है कि वृद्धों को कहीं न कहीं मिलने वाली औषधीय मदद उनकी संख्या को बढ़ावा दे रही हैं। सेन्टर फार सोशल रिसर्च की रिपोर्ट के अनुसार भारत में यदि इसी गति से बढ़ोत्तरी होती रही तो इनकी समस्याओं में इजाफा होगा। भारत में वृद्धों की स्थिति के संबंध में 2002 में विश्व स्वास्थ्य संगठन की जो रिपोर्ट आई उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय वृद्ध अस्वस्थता एवं धनहीनता जैसी समस्याओं का सामना रोज कर रहे हैं। डब्ल्यु एच.ओ. की रिपोर्ट में यह स्पष्ट है कि वृद्धों के प्रति होने वाले दुर्व्यवहार में उनके अपने बच्चे तक परिजन शामिल हैं, जिसमें उनका अपमान, उपेक्षा और दुर्व्यवहार उनको असमय वृद्ध बना रहा है।

वर्तमान समय में वृद्धों की आयु जितनी अधिक है उनकी समस्यायें भी उतनी अधिक हैं। सामान्य स्थितियों एवं विशिष्ट तरह की समस्याओं, जिनका सामना वह करते हैं उसमें पुरूष की अपेक्षा स्त्रियां अधिक प्रताड़ित हैं। यह आवश्यक है कि हम उन समस्याओं को समझें व उनको सुलझाने का प्रयास करें क्योंकि यही वह व्यक्ति हैं जिनके पास जीवन का एक लम्बा अनुभव है और विभिन्न परिस्थितियों से सामना करने का तरीका ये जानते हैं। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए मैंने नरसिंहपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के दो ग्राम चांवरपाठा एवं इमझिरा के 45-45 तथा शहरी क्षेत्र में नरसिंहपुर के 45 वृद्धों याने (135) के ऊपर शोध के दौरान कुछ निष्कर्ष निकाले जो निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट होते हैं -

सूचनादाताओं की वर्तमान स्थिति का परिदृश्यः

विभिन्न चर	समय पर भोजन न मिलना	दवाईयां समय पर उपलब्ध नहीं	बच्चे देखभाल नहीं करते	परिवार के लोग स्वयं पेंशन निकाल लेते हैं	कुल / प्रतिशत
रमान	15 11.11	10 7.40	18 13.33	2 1.48	45 33.33
नरसिंहपुर	20 14.81	08 5.02	07 5.18	10 7.40	45 33.33
इमझिरा	15 11.11	20 14.81	9 6.66	01 0.74	45 33.33
कुल / प्रतिशत	50 37.03	38 28.14	34 25.18	13 9.62	135 99.99

स्रोतः- साक्षात्कार अनुसूची के अधार पर।[10]

उपरोक्त तालिका इस बात को स्पष्ट करती है कि ग्राम इमझिरा व चांवरपाठा में भोजन समय पर न मिलने वाले वृद्धों का प्रतिशत 11.11 व 11.11 एवं समय पर दवाई न मिलने वाले वृद्ध 7.40 व 14.81 तथा वे परिवार जिनमें बच्चे उचित देखभाल नहीं करते 13.33 तथा 6.66 प्रतिशत व वे परिवार जिनमें वृद्ध नौकरी में रहे व सेवा निवृत्ति पश्चात् वृद्धावस्था के कारण पेंशन नहीं निकाल पाते उनकी संख्या 1.48 एवं 0.74 प्रतिशत है। शहरी क्षेत्रों में नरसिंहपुर के 14.81 प्रतिशत वृद्ध ऐसे हैं जिनको समय पर भोजन ना प्राप्त होता, दवाई समय पर न मिलने वाले परिवार 5.92 एवं बच्चे देखभाल न हीं करते उन परिवारों का प्रतिशत 5.18 एवं पेंशन बच्चे पेंशन निकाल लेते हैं व वृद्धों को नहीं देते हैं वह 7.40 प्रतिशत हैं। तालिका के विवरण के आधार पर स्पष्ट होता है कि ग्रामीण व नगरीय स्तर पर वृद्धों की स्थिति वर्तमान में अच्छी नहीं कही जा सकती है। आधुनिकता, नौकरी पेशा व परिवार में समयाभाव इनकी स्थिति को खराब कर रहा है। जहां परिवार में बच्चे दादा-दादी की सेवा में लगे रहते थे अब वह स्थिति नहीं रही। पढ़ाई का अत्याधिक बोझ व समय मिलने पर मोबाईल देखने में लग जाना इन्हें सेवा कार्य से दूर रख रहा है।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि वृद्धों की स्थिति बेहतर समझ, योजना

निर्माण व सही क्रियान्वयन के द्वारा सुधारी जा सकती है। वृद्धों को सम्मानपूर्वक जीने का हक है, परिवार में अत्याधिक मानसिक दबाव उनके सम्मान को ठेस पहुंचाता है यह आवश्यक है कि समाज व परिवार उनके प्रति सकारात्मक दृष्किोण रखे व उनके प्रति होने वाले दुर्व्यवहार के कारकों, प्रवृत्तियों को समझे और उनको हटाने का प्रयास करे।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. Behere, P.N. Belavadi Ram, 'Psychological Problems of the young Elders in National Symposium on Psycho-social Medical and Biological Aspects of Aging (August. 9-10, Coimbatore) Book of Abstracts: Coimbatore, PSG College of Arts and Science Department of Psychology, P.21, 1990.
2. Nandlal, D.S.Khatri, R. Sand Kadian, R.S., 'Aging Problems in the Structural Context' in Sharma M.L. and Dak T.M. (eds), Againg in India: Challenge for the Society; Delhi, Ajanta, PP. 106-16. 1987.
3. Raman, Renu, 'Aging issues in India With Special reference to Bihar' in World congress of the international sociological association (11'th August 18-22 New Delhi) papers 1986.
4. Pal, Roma & Sharma, Greesh C, 'Gerantology: View Point of Hindu Psychology' in Indian Psychology Review-vol 28, No. 1, January, PP. 36-40. 1985.
5. Nayer, P.K.B., 'Againg and Sociology the case of the developing countries' in Social welfare, Vol 34, No.2, May PP 2-338, Vol. 343 June PP 28-31. Third survey of research in Sociology and Social Anthropology Volume I 1987.
6. Ambedkar, Prabhakar- Yashvantrao, 'The lower middle class retired employees in Sholapur city (Maharastra state), in world congress of Sociology (July 9-13 spain); papers. Third survey of research in Sociology and Social Anthropology Volume I 1990.
7. Asha C.B. & Subrahmanium K.A., 'Problem of Elderly Women' in Indian Journal of Community Guidance Service, Vol. 7, No.3, Sept., PP.61-67. Third survey of research in Sociology and Social Anthropology Volume I 1990.
8. Soneja S. & Tyagi R., 'Family and Ageing' , A Study to assess the kind of support required by the aged living in families, Research and development Journal, Vol. 5, No. 3,5-12. 1999.
9. Gaur, Rajan and Kaur A. Life Satisfaction among Institutionalized and Non Institutionalized Elderly . Indian J. Gerantology, 15(3-4): 322-326.2001
10. सूचना दाताओं से साक्षात्कार के आधार पर ।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

मुरिया जनजाति की शुरूआती सांस्कृतिक अवस्था
(बस्तर जिले के विशेष संदर्भ में)

* रूपिन्दर जीत कौर
** किरण

सारांश– *गोंड जनजाति की उपजाति के रूप में मुरिया जनजाति जानी जाती है। मुरिया जनजाति की अपनी अलग एक भौतिक संस्कृति है। आदिकाल में इस जनजाति की संस्कृति का मुख्य केन्द्र घोटुल रहा जहा युवक–युवतियॉ अपनी संस्कृति के नृत्य संगीत, रीति–रिवाजों का ज्ञान व जीन जीने के सही मायने एवं जीवन साथी का चुनाव भी कर लिया करते थे। इस संस्कृति में धर्म का विशेष महत्व रहा जिसमें देवी देवतओं, बलि तन्त्र मंत्र, जादू टोना व सिरहा गुनिया महत्वपूर्ण हैं। मेहनतप्रिय यह जनजाति प्रकृति से शिकार एवं कंद–मूल फलों के माध्यम से अपनी खाद्य एवं औषधीय आवश्यकताएं आसानी से पूर्ण कर लिया करती थी। महिला पुरूष अपनी अलग वेश–भूषा एवं नृत्य जिसमें महिला वर्ग लुंगी, बारी, करनफूल, मोतिमाला, सिनकामाला शामिल हैं, पुरूष वर्ग में काटेदार व गोदना शामिल हैं। गोदना को एक गहना मानकर कई मान्यताओं को धारण कर विवाह से पूर्ण गोदना अनिवार्य माना जाता था तथा हर युवती गोदना गुदवाया करती थी। पुरूष वर्ग द्वारा भी गोदना इच्छानुसार गुदवाया जाता रहा। नृत्य संगीत का आयोजन किया जाता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न नृत्य, संगीतों का आयोजन किया जाता है। मुरिया जनजाति की चित्रकला एवं काष्ठकला हृदयस्पर्शी है। शुक्ल' लिखते हैं, मुरिया जनजाति लकड़ी को तराशकर भी कलाकृति बनाते हैं। ये माता, देव, बैल नर्तक, युवती, बच्चा, शेर कंघी आदि बनाते हैं। इस प्रकार से प्रकृति से जुड़ी यह जनजाति अपने में अनोखी एवं अद्वितीय संस्कृति समाये है।*

मुख्य शब्द– जनजाति, संस्कृति, रीति–रिवाज, जीवन–साथी

प्रस्तावना– आदिवासी जनसंख्या बाहुल्य जिले के रूप में विशेष पहचान स्थापित किये हुए है बस्तर जिला यहॉ गोंड, मुरिया, माडिया, भतरा, हल्बा, धुरवा आदि जनजातियों के लोग शुरूआती अवस्था सें निवास कर बस्तर को विशाल सांस्कृतिक धरोहर बनाए हुए हैं तथा बस्तर को एक विशेष पहचान दिये हुए हैं। मुरिया जनजाति को गोंड़ जनजाति की उपजाति जाना जाता है मेहनतकश मुरिया जनजाति विशाल एवं भिन्न संस्कृति के लिए विख्यात है।

* नुरूटी, सहायक प्राध्यापक, गुंडाधुर महाविद्यालय कोण्डागांव
** नुरूटी, सहायक प्राध्यापक, गुंडाधुर महाविद्यालय कोण्डागांव

बस्तर की मुरिया जनजाति वास्तव में 3 अलग-अलग समूहों में विभाजित की जा सकती है।

1. झोरिया मुरिया
2. घोटुल मुरिया
3. राजा मुरिया

सौंदर्य और सज्जा की दृष्टि से झोरिया मुरिया सर्वश्रेष्ठ है''[1]

मुरिया जनजाति बस्तर अंचल के प्रायः सभी क्षेत्रों में निवास करती है।

यह जनजाति क्षेत्र विशेष के आधार पर रहन-सहन खान-पान में एक दूसरे से थोड़ा अंतर लिए हुए होती है। गोंड आदिवासी की एक शाखा मुरिया अपने शुरूआती काल सें बस्तर में बसे है। जब बस्तर पूरी तरह सें जंगलो सें घिरा एक पिछड़ा क्षेत्र था। आदिम अवस्था में विकास व आधुनिक परिवेश सें कोसो दूर यह जनजाति बस्तर अंचल की प्रकृतिमय गोद में कठिन परिश्रम कर प्रकृति को स्वयं के अनुसार ढालने की कला में निपुण यह जनजाति आपसी प्रेममय वातावरण में जीवन निर्वाह करती आई है।

मुरिया जनजाति उत्पत्ति- मुरिया जनजाति जो कि गोंड जनजाति की उपजाति के रूप में जानी जाती है मुरिया जनजाति की उत्पत्ति कब कैसे हुई। इसके सम्बंध में हमे कई तथ्यो सें जानकारी प्राप्त होती है एवम् कई विद्धानों ने भी अपने-अपने मत प्रगट किए हैं। रसेल एण्ड हीरालाल लिखते है कि ''मूर शब्द से मुरिया बना मुर अर्थात पलाश का वृक्ष, बस्तर रियासत में पलाश के वृक्ष अधिक पाये जाते थे। मुर की छाया में रहने वाले मुरिया कहलायें''[2] मुरिया जनजाति की उत्पत्ति कब और कैसे हुई तथा इनका नामकरण मुरिया किस कारण से पड़ा इसके संबंध में बस्तर के एक लोक गीत में वर्णन है- श्रृष्टि की रचना करने के लिए पुराल (भागवान) ने स्वर्ग लोक से अपनी पुत्री नंगी (तल्लूरमुते) को पृथ्वी पर भेजा था। तल्लूरमुते ने जल प्लावित पृथ्वी को बाहर निकाला और फिर भगवान ने उसका पति भेजा, इनकी जितनी संताने हुई, अनाथ छोड़ दी। लाल मुह वाले बंदरों ने इनका लालन-पालन किया। अनाथ के अर्थ बोध करने के लिए हिन्दी का एक शब्द है 'मुरहा' संभवतः मुरिया इसी का अपभ्रंशित रूप है व उच्चारण भिन्नता से यह मुरिया हो गया है।''[3] बस्तर के मुरिया अंचल में निवास करने वाले मुरिया अपनी उत्पत्ति के संबंध में बतलाते हैं बस्तर के राजाओं ने गोंडो को मांझी मुखिया बनाया और हमें मुखिया नाम से सम्बोधित किया करते थे। यही मुखिया शब्द प्रचलन में आते आते मुरिया में बदल गया।''[4] इस प्रकार से मुरिया जनजाति की उत्पत्ति नामकरण के संबंध में कई मत और विचार हैं। ठाकुर ने चौबीस जातियों को बस्तर के आदिम निवासी माना है- मुरिया, माड़िया, भतरा, हल्बा, धुरवा, गोंड इनमें शामिल हैं।''[5]

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि मुरिया जनजाति अपने आदिमकाल से ही बस्तर क्षेत्र के अलग-अलग भागों में निवास करती आ रही है एंवम यहा निवास करने वाले लोगो की उत्पत्ति भी यही हुई है, इनकी उत्पत्ति के सम्बध में या नामकरण के सम्बध में ठोस वैज्ञानिक तथ्यो के बिना भी यह कहा जा सकता है कि मुरिया जनजाति यहा के मूल निवासी है एवम् प्रकृति से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति भी करते हुये वर्तमान में भी बने हुए है।

बस्तर संभाग की मुरिया जनजाति की आदिकालीन संस्कृति–

संस्कृति शब्द अपने में विशालता समाहित किये हुए है अर्थात संस्कृति से तात्पर्य किसी सभ्यता या समुदाय का रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा, जन्म मृत्यु संस्कार, आचार-विचार, धर्म, कला, मान्यताएं आदि सभी संस्कृति में समाहित है। इस प्रकार सें संस्कृति के आवश्यक पक्ष निम्नानुसार है-

1. **विवाह**– बस्तर की मुरिया जनजाति में ममेरे, फुफेरे भाई-बहनों में विवाह का प्रचलन शुरूआती काल में खूब रहा। विवाह का प्रस्ताव प्रायः लड़के पक्ष से लाया जाता है। विवाह विषम गोत्र को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। विवाह संस्कार के लिए घोटुल महत्वपूर्ण संस्था थी, जहा लड़के लड़किया अपनी पसंद का जीवन साथी चुन लिया करते थे। लड़के नक्काशीदार कंघी बनाया करते थे व अपनी पसंद की कन्या को देते थे अगर कन्या ने स्वीकार कर लिया तो समाज द्वारा उनका विवाह करवा दिया जाता था ऐसा न होने की स्थिति में रिश्ता करने का एक और तरीका है जिसमें लड़के पक्ष वाले लड़की के घर रिश्ता लेकर जाते है तथा अगर लड़की व परिवार पक्ष सहमत है तो शगुन देकर विवाह तय किया जाता है।

मुरिया जनताति में विवाह का अधिकांश खर्च वर पक्ष के लोग ही उठाते हैं। वर पक्ष द्वारा कन्या मूल्य भी अदा किया जाता है। तथा यह कन्या मूल्य देवी-देवताओं को अर्पित किया जाता है क्योकि कन्या एक देवीय परिवार से दूसरे देवीय परिवार में प्रस्तान कर रही है, इसी मान्यता को ध्यान में रखकर कन्या मूल्य दिया जाता है।

2. **जन्म संस्कार**– मुरिया जनजाति में जन्म संस्कार अत्यंत महत्वपूर्ण है। महिला के गर्भधारण के पश्चात् उसकी सेवा सुरक्षा का विशेष ध्यान रखा जाता है। गर्भवती महिला की सुरक्षा हेतु वन जाना, पेड़ पर चढ़ना, दूर तक यात्रा करना, जंगल के अंदर जा कर लकड़ी या फल प्राप्त किये जाने पर मनाही लगाई थी। बच्चे के जन्म के समय महिला का प्रसव घर में ना करवाकर घर से बाहर झोपड़ी या पेड़ की छांव में करवाया जाता था। घर में देवी-देवताओं का निवास के कारण प्रसव महिला को अपवित्र मानकर घर के बाहर ही प्रसव को उचित माना जाता था, ताकि देवी-देवता नाराज ना हो और परिवार या गांव में किसी भी प्रकार की हानि ना हो पाये। ''प्रसव के समय पति को भी अनेक विशेष नियमों का पालन करना पड़ता था। वह किसी घायल जानवर के रक्त से सना हुआ रास्ता पार नहीं कर सकता, उसे त्यौहारों पर अलग भोजन करना होता था एवं वह और उसकी पत्नी बलि या रस्मी शिकार में मारे हुए पशु का सिर या पैर नहीं खा सकते थे।''[6]

मुरिया जनजातीय समाज में बच्चे के जन्म के पश्चात् रस्मों का निर्वाह किया जाता है। क्योकि मुरिया समाज पूर्वजन्म में विश्वास करता आया है वर्तमान में भी यह धारणा अशिक्षित व अंचल क्षेत्रो में ज्यादा मात्रा में देखने को आई है साथ ही यह भी देखा जाता रहा कि परिवार में किस पूर्वज ने बच्चे के रूप में जन्म लिया है। बच्चे को जन्म के पश्चात माता का दूध ही पिलाया जाता है, इसका कारण यह माना जाता है कि गाय का दूध पिलाने से माता का दूध सूख जायेगा, इस प्रकार की धारणा पूर्वकाल के लोगो में ज्यादा जानने को प्राप्त हुई ।

3. **मृत्यु संस्कार**– बस्तर के मुरिया, माडिया दोनों में ही मृतक को दफनाने की

परम्परा है एवं इच्छानुसार जलाया भी जाता है, मृतकों को दफनाने की प्रथा के पीछे कारण यह माना जाता है कि यह शरीर मिट्‌टी का है और अंत में मिट्‌टी में मिलेगा। पूर्वकाल में मठ बनाने की परम्परा नहीं थी केवल दफनाकर पत्थर गाड़ दिया जाता था। मृतक को दफनाने के पश्चात् पत्थर गाड़ना या मृतक स्तंभ भी बनाये जाते रहे। मुरिया जनजाति द्वारा शुरूआती काल में बुजुर्ग मृत्यु को उत्सव के रूप में भी मनाया जाता रहा इसका मुख्य कारण मान्यता रहीं मान्यतानुसार मृतक की आत्मा को आह्वान कर उसे मृतकों के रूप में घर में रखा जाता रहा और उसे देवी-देवता के रूप में मानकर पूजा अर्चना भी कि जाती रही है। यह जनजाति पूर्व जन्म में भी विश्वास करती है। इस कारण वश बच्चों के जन्म समय उन्हें किसी ना किसी मृत पूर्वज का नवीन जन्म माना जाता है।

4. **धर्म एवं धार्मिक मान्यताएं**- मुरिया जनजातीय समाज में धर्म का विशेष महत्व रहा है। यह जनजाति शुरूआत अवस्था सें ही जंगलो पर्वतों पहाड़ों में रहती आ रही है इस कारण प्रकृति बदलावो को गहराई सें महसूस करने की अपनी ही क्षमता इनमें रही है आस्था, भय, श्रद्धा ही इन्हे प्रकृति पूजक बनाती है इस कारण यह जनजाति प्रकृति में ही अपने देवी-देवतओं का निवास मांगती आ रही है। देवी-देवताओ का नाम आने पर बस्तर के आदिवासी मुरिया जनजाति द्वारा लिंगादेव, भीमादेव, आंगादेव, पाटदेव, बूढ़ी माता, मांवली माता, परदेसीन माई, दन्तेश्वरी माता आदि देवी-देवताओं की पूजा अर्चना किया करते है।

धर्म का विशेष महत्व है इनके जीवन में किसी भी कार्य की शुरूआत और अंत धर्म से जोड़कर देखा करते हैं। फसलों की कटाई, खेतों में जुताई, प्रथम फसल को लेकर विभिन्न धार्मिक क्रियाकलापों को किया जाता है। शुरूआती अवस्था से ही मुरिया जनजाति जादू-टोने में विश्वास करती है, विभिन्न बीमारियों के उपचार हेतु परम्परागत जड़ी बूटियों का प्रयोग साथ ही बैगा, गुनिया, की मदद ली जाती रही। साथ ही गोदना भी विभिन्न बीमारियों का उपचार माना गया। अंधविश्वास व बलि प्रथा- यह जनजाति अपनी शुरूआती काल में प्रकृति के बदलावों से पूर्णत: अनभिज्ञता वंश अंधविश्वासों और बलि प्रथाओं का काफी प्रभाव रहा रोग, दुख, खुशी और मान्यताओ को लेकर विभिन्न त्यौहारो अवसरों पर देवी-देवताओं को प्रसन्न करने हेतु बलि प्रथा को अपनाया गया, मुरिया जनजाति के लोग सिरहा, गुनिया को देवी-देवता के समान मान कर पूजा अर्चना किया करते है, प्रत्येक सामाजिक धार्मिक संस्कार सिरहा, द्वारा करवाये जाते रहे है।

राठौर के अनुसार- ''अनेक रोगों की एक दवा है 'सिरहा' सर्प काटने, पतली दस्त, बुखार, लकवा व बच्चों का रोना इन सभी में सिरहा'' द्वारा समय-समय पर इलाज के नाम पर दान व बलि भी चढाई जाती रही।''[7] बस्तर अंचल में गाय, भैंस, बकरा, मुर्गा, सूअर, मछली आदि जानवरों की बलि चढाई, जाती रही साथ ही मंदिरा का प्रयोग भी किया जाता रहा। देवी-देवतओं को मंदिरा तर्पण भी किया जाता है तथा तत्पश्चात स्वंय भी प्रसाद के रूप में ग्रहण की जाती है।

5. **वेश-भूषा व आभूषण**- मुरिया जनजाति प्रकृति के समीप रहने वाली जनजाति है। यह जनजति स्वयं के आरंभिक काल से ही सामान्य वेश-भूषा जिसमें

महिलाओं द्वारा साड़ी, लुंगी धारण की जाती रही है, और पुरूष वर्ग द्वारा लुगी, गमछा धारण किया जाता रहा। महिला अपने प्रारंभिक काल में वक्ष स्थल के नीचे ही लुंगी धारण करती थी महिलाओं को स्वयं को आभूषणों से युक्त रखना अधिक पसंद था इस कारण गले में मोतियो की माला,सूता आभूषणों में महिलाओं द्वारा गोदना गुदवाया जाता था ऐसा माना जाता था कि गोदना ही एक ऐसा गहना है जो मृत्यु के पश्चात् हमारे साथ जाएगा। वासुदेव (2008) स्त्री और पुरूष दोनो ही गोदना गुदवाते हैं परन्तु महिलाएं इसे विशेष रूप से धार्मिक और सामाजिक मान्यता के रूप में ग्रहण करती है। यह उनके स्थायी आभूषण के रूप में रहते हैं कही-कहीं जाति अथवा समुदाय के लिए ही गोदना चिन्हों का भी प्रयोग किया जाता है।''[8]

महिला द्वारा नाक में फुल्ली, नथनी, गले में सिक्कों की माला, सूता, भुजा में पहुंची, वाहय कला में ऐंठी, हाथ की उंगलियों में मुन्दरी, कम में करधन, पैर में लच्छा एवं चिपमाल, खिनवा, करनफूल आदित आभूषणों को महिलाओं द्वारा धारण किया जाता रहा। पुरूष वर्ग द्वारा भी गोदना गुदवाया जाता था परंतु इसका प्रतिशत अंतराल कम रहा। त्यौहारों के अवसर पर पुरूष वर्ग द्वारा सिर पर मुर्गा, कोयल, मयूर के पंखों एवं कौड़ियों से युक्त मुकुट धारण करते थे तथा काटेदार कड़ा, बारी, करन फूल पुरूष वर्ग भी धारण करते थे। इस प्रकार से यह संस्कृति अपने आभूषणों हेतु अलग पहचान बनाए हुए थी।

6. **खान-पान**- मुरिया जनजाति प्रकृति पर निर्भर रहने वाली जनजाति है। ऐसी स्थिति में जंगलों से ही सम्पूर्ण आवश्यकताएं पूरी कर लिया करते है जैसे- जंगलों से आम, जाम, जामुन, केटू, हडरा, बेहरा, सीताफल, बेर अन्य फल एवं बोडा, फूटू, चापड़ा, बास्ता विभिन्न प्रकार के कंद व भाजिया एवं उपचार हेतु जड़ी, बूटियां जंगलों से ही यह जनजाति को प्राप्त होती है साथ ही शिकार में चूहा, खरगोश, गाय, जंगली सुअर, गिलहरी, चिड़ियों के शिकार शामिल भी शुरूआती काल में अधिक रहा है।

नशे के साधन के रूप में महुए व चावल की शराब महिला व पुरूष दोनो वर्ग द्वारा ग्रहण की जाती थी। साथ ही सलफी, ताड़ी, लादा आदि पेय पदार्थ भी काफी मात्रा में ग्रहण किये जाते थे। पेय पदार्थो एवं पानी को सुरक्षित रखने हेतु तुम्बा का भी प्रयोग किया जाता था, तुम्बा अर्थात देसी गोल आकार की लौकी जिसे बर्तन के समान प्रयोग किया जाता है।

घोटुल- घोटुल मुरिया जनजाति का संस्कृति का मुख्य केन्द्र है। गंगाले के मतानुसार -''यह संयुक्त गोंडी शब्द गो+टुल इन दो शब्दों के मेल से बना हुआ है। गो का मतलब गोंगा अर्थात दुःख एवं क्लेश निवारण शक्ति जिसे विद्या कहा जाता है और टुल का मतलब ठीया या ठाना जिसे स्थल कहा जाता है। इस तरह गोटुल का अर्थ गोंगा स्थल अर्थात विद्या स्थल होता है''[9]

शुक्ल के अनुसार- मुरिया युवकों की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, धार्मिक और प्रशासनिक गतिविधियों और युवा संगठन को घोटुल के नाम से जाना है घोटुल - मुरिया युवकों की संगठन व्यवस्था का नाम है। साथ ही नागरिक के रूप में अनुपस्थित प्रशिक्षक के बावजूद प्रशिक्षण केन्द्र हैं। यहां पर लोग आप ही आप घोटुल के अपने से आगे की पीढ़ियों के कार्य, व्यापारों के देखते अनुभव करते प्रशिक्षित होते

हैं''[10] इस प्रकार से घोटुल वह संस्था थी जहाँ युवा वर्ग भावी जीवन का ज्ञान एवं अपनी कला सभ्यता संस्कृति धर्म व धार्मिक मान्यताओं के ज्ञान के साथ ही सही जीवन साथी का चुनाव भी घोटुल के माध्यम से आसानी से कर लिया करते थे। शुरूआती काल में स्कूलों की व्यवस्था नहीं थी ऐसी स्थिति में घोटुल युवक-युवतियों को शिक्षा व मनोरंजन का आधार था। घोटुल के माध्यम से आपसी एकता एवं सहयोग कायम होता था। घोटुल के सदस्य विवाह या अन्य अवसरों पर सम्पूर्ण व्यवस्था आसानी से कर दिया करते थे। घोटुल संस्था व्यक्ति के जीवन को व्यवस्थित करती थी। इस प्रकार से घोटुल नियमों और विधि विद्यानों की सम्पूर्ण प्रणाली थी। जिसके सम्बंध में झा अपने विचार व्यक्त करते हैं कि ''घोटुल का अनुशासन काफी सख्त होता है। सभी सदस्यों को सौपा गया काम करना होता है, अनुशासन ना मानने अथवा काम चोरी करने पर दण्ड दिया जाता है''[11]

7. **कला संगीत**– आदिवासी चाहे वह भारत के किसी भी स्थान का निवासी हो कला प्रिय होता है। मुरिया जनजाति में कला का मुख्य केन्द्र घोटुल था जहाँ युवक-युवतियों को कला संगीत का ज्ञान दिया जाता था। घोटुल नियमों विधि-विधानों की सम्पूर्ण व्यवस्था का नाम था। जहाँ चोलिक और मुटियारिन पर कई नियम लगाए जाते थे, ताकि वे व्यवस्थित जीवन के लिए तैयार हो सके। घोटुल में युवक एवं युवतियां रोज रात्रि के समय नृत्य संगीत का आयोजन करते है। घोटुल की दीवारों पर सुन्दर चित्रकला भी की जाती थी। मुरिया अपनी कला के लिए विश्व प्रसिद्ध है। ''शुक्ल बताते है कि- ''मुरिया कला रूपों में वैविध्य और समृद्धि के दर्शन होते है यह कला गीत नृत्य के रूप में आनुवांशिक रूप पीढ़ी-दर पीढ़ी हस्तांतरित होती है।''[12] मुरिया जनताति में चित्रकला का विशेष महत्व रहा परंतु इस कला के प्राचीन नमूने अभी अप्राप्त हैं घर में देवगुड़ी में, गोटुल और घरों में चित्रकारी देखी जा सकती थी। बस्तर में काष्टकला की भी सुन्दर परम्परा रही। लकड़ी के फारे पर सबसे सुन्दर चित्र जिसमें आदिवासी जनजाति के महिला पुरूष की आकृति शामिल हैं। चोलिको द्वारा नक्काशीदार कंघी भी घोटुल में काष्टकला का सुन्दर उदाहरण था। साथ ही मुरिया अंचल में देवी-देवताओं के प्रतीक पत्थर, मिट्टी या किसी आकारहीन लकड़ी के टुकड़ों के रूप में हैं।

संगीत– मुरिया जनजाति घोटुल में रहने के साथ लिंगों देव को संगीत के देवता के रूप में मानते रहे। मुरिया मान्यतानुसार संगीत के आदि देव लिंगो थे। संगीत एक वरदान के रूप में देखा गया। लोक गीत में यह बात स्पष्ट होती है।

पहली पाटा बोनीर लियोर
पहली पाटा बोना
लिंगो न आयो बाना लियोर
पहलीर पाटा बोना
अर्थ - पहला गीत किसका है बताओं युवकों
पहला गीता किसका है
पहला गीत लिंगो का है। युवकों
पहला गीत किसका।''[13]

लिंगो ने ना सिर्फ पहला गीत मुरिया को दिया बल्कि सिखाया भी गीत गाना इस

प्रकार से मुरिया जनजाति संगीत प्रेमी जनजाति है।

निष्कर्ष–आदिवासी मुरिया समाज पौराणिक कथाओ के अनुसार अपनी उत्पति पृथ्वी के साथ ही मानते है। यह समाज आत्मा के अस्तित्व पर विश्वास करता आ रहा है एंवम आदिवासी मुरिया समाज वैदिक संस्कृति को नही, देव संस्कृति को मानता है, जिसें गोड़ी में पेन हालान कहा जाता है। धर्म धार्मिक क्रियाओ एंवम देवी-देवताओ का विशेष महत्व इस संस्कृति में है। प्रकृति के प्रति आस्था विश्वास इन्हे प्रकृति प्रेमी बनाती है। संगीत एंवम कला मनोरजंन के साथ ही इनकी पहचान का आधार भी है। जन्म से लेकर मृत्यु तक मुरिया जनजातीय समाज में विशेष आयोजन की व्यवस्था की जाती है जिसमे पूर्वकाल में घोटुल जो कि संस्कृति शिक्षा एवम् जीवन साथी चुनाव का मुख्य स्थल रहा जिसका वर्तमान में अस्तित्व समाप्त हो चुका है।

इस प्रकार सें अंत में कहा जा सकता है कि मुरिया जनजाति एक मेहनत कश जनजातीय समाज है जो कि अपने आदिम रूप में विशेष नियमो विधि विधायो एवम् अपनी धार्मिक आस्थाओ एंवम प्राकृतिक विशिष्ट विश्वासो सें बंधा रहा है। यही मान्यताए विश्वास कला का विविध रूप इस संस्कृति के गीत-संगीत कला शुरूआती अवस्था सें ही लोगो का आकषर्ण का केन्द्र रहा है, एवम् प्रकृति सें अपनी सम्पूर्ण आवश्यकताए पूर्ण करने वाली मेहनत कश यह जनजाति अपने जीवन के हर पक्ष धर्म कला, रहन-सहन, कला, संस्कृति, वेश-भूषा संगीत एवं धार्मिक मान्यताओं के द्वारा स्वयं को अन्य सें एक विशेष पहचान दिलाती प्रभावशाली रूप में दृष्टिगोचर होती है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. दुबे के.सी. - बस्तर के आदिवासी लेख मध्यप्रदेश संदेश 25 अप्रेल 19832 रसेल एण्ड़ हीरालाल -ट्राइबल एण्ड कास्ट ऑफ य
2. रसेल एण्ड़ हीरालाल-ट्राइबल एण्ड कास्ट ऑफ सी.पी. ऑफ इण्ड़िया ग्रंथ 3 पृ.-64
3. नर्मदा प्रसाद श्रीवास्तव ''बस्तर राजा चो कहानी '' अप्रकाशित पुस्तक,पृ.20
4. उपाध्याय विजय शंकर एवं शर्मा विजय प्रकाश - ''भारत में जनजातीय संस्कृति'' 1989 पृ. 2
5. ठाकुर केदारनाथ - ''बस्तर भूषण'' - पृ. 41, 42
6. वेरियर ऐल्विन - ''मुरिया एण्ड देयर घोटुल'' राजकमल प्रकाशन पृ. 108
7. राठौर मोहन - आदिवासियों के लिए सिरहा ही भगवान नवभारत दीपावली विशेषांक 1990 पृ. 121
8. सहानी वासुदेव 2008 - ''गुदना प्रथा और वस्तर का आदिम जन'' शोध उपक्रम, अक्टूबर पृ. 18, 19
9. गंगाले चंद्रलेखा - लेख पहादी कुमार लिंगों का गोटूल तत्वज्ञान गोंडवाना समाज जनवरी 1987 पृ. 5
10. शुक्ल नवल - मुरिया पृ. 22
11. झा कालीदत्त - ''मुरिया घोटुल'' लेख म.प्र. संदेश अप्रेल 1983 अंक पृ. 44
12. शुक्ल हीरालाल- आदिवासी संगीत पृ.22
13. आदिम जन''शोध उपक्रम, अक्टूबर पृ.18,19

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

महिलाओं के विकास में महिला एवं बाल विकास विभाग की प्रमुख योजनाओं के उपलब्धियों का अध्ययन

(छत्तीसगढ़ धमतरी जिले के कुरूद ब्लॉक के विशेष संदर्भ में)

* वेणु साहू
** के. पद्मावती

सारांश- प्रस्तुत शोध-पत्र में छत्तीसगढ़ के धमतरी जिले के कुरूद ब्लॉक के अंतर्गत महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं का अध्ययन किया गया है, जिसके अंतर्गत वर्तमान में यह योजनाएँ चलायी जा रही है - (1) पूरक पोषण आहार योजना, (2) महतारी जतन योजना, (3) बाल संदर्भ योजना,(4) मुख्यमंत्री कन्यादान योजना, (5) अमृत दुग्ध योजना, (6) किशोरी शक्ति योजना, (7) प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना, (8) सुकन्या समृद्धि योजना, (9) गैर सबला योजना, (10) दत्तक पुत्री योजना, (11) स्वाधार योजना, (12) उज्ज्वला योजना, (13) प्रधानमंत्री स्वच्छ भारत योजना। इन योजनाओं से कुरूद ब्लॉक प्रभावित हो रहा है या नही यह ज्ञात करने के लिये अध्ययन क्षेत्र के रूप में चुना गया है। महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा चलायी जा रही योजनाओं के अंतर्गत महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक स्थिति में वृद्धि हुई है एवं बच्चों के कुपोषण स्तर में कमी आयी है।

मुख्य शब्द- पोषण, आहार, किशोरी, दत्तक

प्रस्तावना:- मानव संसाधन विकास मंत्रालय (भारत सरकार) के अंतर्गत महिला एवं बाल विकास विभाग की स्थापना सन् 1985 में हुई है, भारतवर्ष में महिलाओं से संबंधित 27 से अधिक योजनाएँ चलायी जा रही है। इसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं एवं बच्चो के समग्र विकास को बढ़ावा देना है। महिलाओं के विकास का अर्थ महिलाओं का सम्पूर्ण विकास करना अर्थात् शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी को सुदृढ़ करना है। बौद्धिक विकास तथा स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याओं का निवारण करना तथा सम्पूर्ण पोषण आहार देकर कुपोषित एवं एनीमिया से बचाना, जिससे की देश में सशक्त और स्वस्थ्य महिलाएँ तथा बच्चे जो राष्ट्र निर्माण के विकास में सहयोग प्रदान करें।

आर्थिक गतिविधियों में मुख्य कामगारों के रूप में एक बड़ी संख्या महिला कामगारों की है, ग्रामीण महिलाओं में कार्यभागीदारिता की दर 18.40 प्रतिशत, वही

* शोधार्थी (पी.एच.डी.) अर्थशास्त्र शासकीय वि.या.ता.स्व.स्नातकोत्तर महाविद्यालय दुर्ग, छ.ग.
** सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र शासकीय वि.या.ता.स्व.स्नातकोत्तर महाविद्यालय दुर्ग, छ.ग.

शहरी महिलाओं की दर 8.6 प्रतिशत है। फिर भी महिलाओं के कार्यो को कोई महत्व नही दिया जाता है और न ही राष्ट्र के आर्थिक विकास में भी गिना जाता है।

बच्चों के समग्र विकास के लिए महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा समेकित बाल विकास सेवाओं (ICDS) का क्रियांवयन किया जाता है, जिसके अंतर्गत पूरक पोषण, टीकाकरण, स्वास्थ्य जांच और रेफरल सेवाएँ, स्कूल जाने से पहले अनौपचारिक शिक्षा भी दी जाती है। महिला एवं बाल विकास के अंतर्गत आंगनबाड़ियों से यह ज्ञात हुआ है कि आंगनबाड़ी में पढ़ने वाले बच्चों की देखरेख आंगनबाड़ी कार्यकर्ता एवं आंगनबाड़ी सहायिका के द्वारा किया जाता है। बच्चो का शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास का दायित्व इन्ही के ऊपर रहता है साथ ही शिशुवती महिलाएँ, गर्भवती महिलाएँ एवं किशोरी बालिकाओं के लिए ताजा गर्म भोजन आंगनबाड़ियों में उपलब्ध रहता है। जिसके अंतर्गत चावल, मिक्स दाल, हरी सब्जी, आचार, पापड़, फोर्टिफाइल तेल, सलाद, दो रोटी, गुड़ एवं रेडी टू ईट फूड (सम्पूर्ण पोषण आहार) हितग्राहियों को ताजा गर्म पका हुआ भोजन प्रत्येक दिन दिया जाता है तथा रेडी टू ईट फूड प्रत्येक सप्ताह में मंगलवार को दिया जाता है। हितग्राहियों के पोषण आहार को ध्यान में रखते हुए महिला एवं बाल विकास विभाग में अधिकारी एवं सुपरवाईजर द्वारा समय-समय पर निरीक्षण किया जाता है।

कुरूद ब्लॉक के अंतर्गत रेडी टू ईट फूड बनाने के लिए महिला समूह संगठन को सौंपा गया है, जिससे की महिलाओं को रोजगार मिला है और उसकी आर्थिक स्थिति में सुधार आया है। महिलाओं को जो राशि मिलती है, उससे बचत करके अपने घर की खर्चे तथा छोटे-छोटे कुटीर एवं लघु उद्योग भी चला रही हैं। जिसके अंतर्गत रेडी टू ईट फूड, फल दुकान, सब्जी उत्पादन, कृषि कार्य, पशुपालन, मत्स्य पालन, फूलों की खेती, वाशिंग पाउडर, साबून, फिनाइल, सेनेटरी नेपकीन एवं अन्य व्यवसाय कर रही है।

महिला एवं बाल विकास विभाग योजना महिलाओं एवं बच्चो का सम्पूर्ण विकास का क्रियांवयन करना है तथा योजनाओं के बारे में जानकारी देना एवं योजनाओं का लाभ दिलाना इनका मुख्य उद्देश्य रहा है।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन-

किसी भी अध्ययन के पूर्व किए गए शोध साहित्य अत्यंत उपयोगी होता है, अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष शोध कार्य के लिए अत्यंत ही उपयोगी होता है -

(1) कहोल उषा, जैन कामिनी, शांडिल्य दुर्गेश (2009) ''महिला विकास और सरकारी प्रयास''- इसमे महिलाओं की शिक्षा को विशेष रूप से ध्यान मे रखकर महिलाओं की विकास के बारे में बताया गया है। सुदृढ़ महिलाएँ ही अपने परिवार एवं समाज को विकास की ओर ले जा सकती है। सरकार द्वारा चलाये जा रहे योजनाओं के अंतर्गत महिलाएँ अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सकती है। पिछले कुछ दशकों के अंतर्गत महिलाओं की स्थिति अत्यन्त ही दयनीय थी, जो कि अब कुछ हद तक महिलाओं की स्थिति में सुधार आयी है, ग्रामीण क्षेत्रों मे अभी महिलाओं की शिक्षा का स्तर निम्न है। जबकि शहरी क्षेत्रों में महिला साक्षरता दर में वृद्धि हुई है। मध्यप्रदेश मे महिला साक्षरता दर को बढ़ाने के लिए सरकार द्वारा कुछ योजनाएँ चलायी जा रही है, जो लाड़ली लक्ष्मी योजना, विक्रमादित्य छात्रवृत्ति प्रदान, गणवेश एवं पाठ्य- पुस्तक योजना, राज-राजेश्वरी,

राष्ट्रीय मातृत्व योजना है, इसके अलावा जननी सुरक्षा योजना, लाभ योजना, किशोरी बालिका योजना यह सरकार द्वारा महिलाओं को आर्थिक रूप से सक्षम बनाने के लिए चलायी जा रही है तथा महिलाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराकर आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनाने के उद्देश्य से चलायी जाती है यह इसका निष्कर्ष है।

(2) चौधरी आशा (2013) ''निम्न वर्ग के सामान्य एवं एकीकृत बाल विकास योजना से पोषित 3 से 5 वर्ष के बच्चों के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन ''- इसमें भारतीय बच्चों की पोषण आहार के बारे में बताया गया है, कि 1-3 वर्ष तथा 3-5 वर्ष तक के बच्चों के शारीरिक विकास के लिए कितना पोषण आहार देना चाहिए एवं कुपोषण से बचाया जा सके।

एकीकृत बाल विकास सेवा योजना द्वारा 6 वर्ष तक की आयु के बच्चों, गर्भवती एवं स्तनपान करवाने वाली माताओं को एक सम्पूरक पोषण सेवा दी जाती है, जिसके अन्तर्गत 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों को 30 कैलोरी एवं 10 ग्राम प्रोटीन वाला आहार देना एवं अत्यधिक कुपोषित बच्चों को 600 कैलोरी एवं 20 ग्राम प्रोटीन वाला आहार देने की व्यवस्था रहती है। इसके अलावा शारीरिक विकास होते जाता है, वैसे ही पोषण स्तर को बढ़ा दिया जाता है, प्रोटीन, कैलोरी, विटामिन एवं कैल्शियम के साथ बाल विकास एकीकृत द्वारा अन्य योजनाओं से भी बच्चों को लाभान्वित किया जाता है तथा निष्कर्ष रूप में यह होगा कि एकीकृत बाल विकास योजनाओं का लाभ बच्चों को अधिक लाभ प्राप्त होगा एवं समान्य बच्चों को पोषण आहार का लाभ अधिक मिल सकेगा।

(3) सरवटे नंदिनी तोमर संगीता (2013) '' गर्भवती महिला का आहार- एक अध्ययन ''- सरवटे एवं तोमर ने मॉ के गर्भ मे भ्रूण की विकास के बारे मे तथा आहार, पोषक, विटामिन कितनी मात्रा मे गर्भवती माता को लेना विशेष जोर दिया गया है। गर्भवती स्त्रियॉ अपने आहार के प्रति जागरूक हो तथा कुपोषण के कारण देश मे मृत्यु-दर तथा बाल मृत्यु तक की संख्या अधिक होता है। इस पर रोक लगाया जा सके।

अध्ययन का उद्देश्य-

(1) न्यादर्श परिवार की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना का अध्ययन करना।

(2) छत्तीसगढ़ शासन की महिला एवं बाल विकास विभाग की प्रमुख योजनाओं का अध्ययन करना।

(3) महिला एवं बाल विकास की प्रमुख योजनाओं को जानना एवं विश्लेषण कर सुझाव प्रदान करना।

अध्ययन का क्षेत्र-

प्रस्तुत शोध का अध्ययन क्षेत्र धमतरी जिले के कुरूद ब्लॉक को लिया गया है। जिनके अंतर्गत ब्लॉक के चारों दिशाओं को न्यादर्श के रूप में दूरस्थ एवं निकटतम ग्राम के अतंर्गत 20 ग्राम पंचायतों एवं संलग्न गॉवों से 375 परिवारों का चयन करके शोध कार्य के रूप में चुना गया है। कुरूद ब्लॉक की भौगोलिक स्थिति 20^0-49-58'' उत्तरी अक्षांश से 81^0-42-57'' पूर्व देशांश तक है। भौगोलिक क्षेत्रफल 592S42 वर्ग कि. मी. तक फैला हुआ है। कुल जनसंख्या 2001 में 296137 तथा 2011 में कुल जनसंख्या 219013 है। कुरूद ब्लॉक में कुल आंगनबाड़ियों की संख्या 273 तथा

आंगनबाड़ी में पढ़ने वाले बच्चों की संख्या 14172 है।

परिकल्पना–

1. न्यादर्श परिवार में बच्चों का पोषण स्तर निम्न पोषित है।
2. अधिकांश परिवार सुकन्या समृद्धि योजना से लाभान्वित है।

तथ्यों का विश्लेषण- प्रस्तुत शोध पत्र में विभिन्न विधियों का प्रयोग किया गया है -

1. यह अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको पर आधारित है।
2. आंगनबाड़ी से प्राप्त हितग्राहियों का अध्ययन।
3. शोध पत्र में वर्गीकरण, सारणीकरण एवं रेखाचित्रों का प्रयोग किया गया है।
4. सांख्यिकी विधियों में काई वर्ग परीक्षण एवं समाचार पत्र, पत्रिकाओं का प्रयोग किया गया है।

तथ्यों का संकलन वर्गीकरण एवं विश्लेषण–

सारणी कमांक -1

न्यादर्श परिवार में सुकन्या समृद्धि योजना संबंधी विवरण

न्यादर्श परिवार	हां	नही	योग
शिशुवती महिला	88(61.53)	55(38.46)	143
गर्भवती महिला	137(81.06)	32(18.93)	169
योग	**225(72.11)**	**87(27.88)**	**312(100)**

स्त्रोत - (1) व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित।

(2) कोष्टक मे अंकित संख्या प्रतिशत को प्रदर्शित करता है।

उपरोक्त तालिका में सुकन्या समृद्धि योजना संबंधी विवरण को प्रदर्शित किया गया है, जिसमें सर्वाधिक 72.11 प्रतिशत परिवार को योजना की जानकारी है, निम्न में 27.88 प्रतिशत परिवार को इस योजना की जानकारी नही है ।

सारणी कमांक -2

न्यादर्श परिवार में बच्चो के कुपोषण स्तर संबंधी विवरण

न्यादर्श परिवार	शिशुवती महिला	गर्भवती महिला	योग
निम्न(0)	39(27.27)	33(19.52)	72(23.07)
मध्यम(Y)	43(30.06)	54(31.95)	97(31.08)
सामान्य(G)	61(42.65)	82(48.52)	143(45.83)
योग	**143**	**169**	**312(100)**

स्त्रोत - (1) व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित।

(2) कोष्टक मे अंकित संख्या प्रतिशत को प्रदर्शित करता है।

उपरोक्त तालिका में न्यादर्श परिवार में बच्चो के कुपोषण स्तर संबंधी विवरण को प्रदर्शित किया गया है, जिसमें सर्वाधिक 45.83प्रतिशत सामान्य बच्चे पाया गया है, तथा निम्न में 23.07 प्रतिशत बच्चे पाया गया है।

निष्कर्ष–

शोध अध्ययन के अन्तर्गत हमने यह पाया कि कुरूद ब्लॉक में न्यादर्श परिवारों को

महिला एवं बाल विकास द्वारा चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी है, लेकिन इस योजनाओं का लाभ अधिकांश परिवार को नही मिल रहा है। कारण में यह पाया गया है कि इस योजनाओं की सही जानकारी देने के लिए कोई व्यक्ति या समूह नही है। यहाँ निवास करने वाले अधिकांश परिवार में गरीबी एवं शिक्षा का स्तर निम्न पाया गया है। गरीब परिवार मजदूरी करने जाते है, जिससे कि उसके पास योजनाओं का लाभ लेने के लिए समय नही है एवं कम पढ़े लिखे व्यक्ति में समझने की क्षमता कम है। जो बच्चे कुपोषित थे वह सामान्य में पाया गया है, अतः बच्चों का पोषण स्तर अच्छा है।

सुझाव–

(1) न्यादर्श मजदूर शिशुवती, गर्भवती महिलाओं के लिए टेक होम सुविधाएँ देना।

(2) पोषण आहार की मात्रा को बढ़ाना।

(3) महिला समूह संगठन को बढ़ावा देना जिससे कि महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति सुदृढ़ हो।

(4) महिलाओं को निःशुल्क शिक्षा देना।

(5) योजनाओं की सही जानकारी देने के लिए उच्च अधिकारी द्वारा गाँवों में समूह एवं संगठन का निर्माण करवाना।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. चौधरी आशा (2013) '' निम्न वर्ग के सामान्य एवं एकीकृत बाल विकास योजना से पोषित 3 से 5 वर्ष के बच्चों के पोषणस्तर का तुलनात्मक अध्ययन ''- सामाजिक सहयोग राष्ट्रीय त्रैमासिक शोध-पत्रिका वर्ष 13 अंक 50 RNI NO 58703 / 91
2. कहोल डॉ. श्रीमती उषा, जैन श्रीमती कामिनी, शांडिल्य श्रीमति दुर्गेश (2009) ''- शोध-समीक्षा और मूल्यांकन सितंबर 2009 ISSN 0974 - 2832 Vol. II पेज नं. 88-89
3. सरवटे डॉ. नंदिनी, तोमर संगीता (2013) '' गर्भवती महिला का आहार-एक अध्ययन ''-सामाजिक सहयोग राष्ट्रीय त्रैमासिक शोध पत्रिका वर्ष 13 अंक 51 RNI NO 58703 / 91 पेज नं. 39-45।
4. भारत सरकार द्वारा प्रकाशित महिला एवं बाल विकास विभाग की पत्रिकाएँ।
5. Dhamtari.gov.in
6. अप्रकाशित शोध पत्र धमतरी, कुरूद ।
7. जिला सांख्यिकी विभाग धमतरी की पत्र, पत्रिकाएँ।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

समाज में वैधानिक परिवर्तन-डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का दृष्टिकोण

* विमला सिंह
** सुषमा श्रीवास्तव

सारांश- *मानव समाज में विधि और राज्य दोनों का प्रमुख स्थान है। अपने विधि-विधान के आधार पर राज्य समाज में एक विशिष्ट प्रकार का संगठन स्थापित करता है। समय-समय पर उस संगठन की सुरक्षा भी राज्य द्वारा दी जाती है। नयी परिस्थितियाँ आने पर राज्य विधि की संरचना और कार्यात्मक शैली में परिवर्तन भी करता है। राज्य इस कार्य को अपने दो मुख्य अंगो-विधायिका एवं कार्यपालिका-द्वारा सम्पन्न करने में समर्थ होता है। वैसे सामाजिक परिवर्तन की दिशा में धर्म एवं नैतिकता की भूमिका होती है, किन्तु राज्य की भूमिका कहीं अधिक प्रभावी मानी जाती है, क्योंकि उसमें कानून की बाध्यकारी शक्ति निहित होती है। लेकिन फिर भी सामाजिक तत्व समाज के ढाँचे और कार्यों को व्यापक रूप से प्रभावित करते हैं। वस्तुतः विधि और समाज में अटूट सम्बन्ध होता है। किसी एक में परिवर्तन का अर्थ है दूसरे में भी परिवर्तन। जहाँ तक डॉ. अम्बेडकर के दृष्टिकोण का सम्बंध है, वह चाहते थे कि भारत जैसे देश में जहाँ समाज रूढ़िवादी, धर्मान्धी, अन्यायपूर्ण तथा संकीर्ण हो, वहाँ सामाजिक परिवर्तन के उपकरण के रूप में राज्य द्वारा निर्मित विधि की भूमिका ही निर्णायक होगी और यह एक नये समाज के निर्माण में सहायक सिद्ध हो सकेगी।*

मुख्य शब्द- विधि, राज्य, संगठन, सुरक्षा।

वर्तमान युग में समय और आदमी की परिस्थितियों की मांग है कि समाज का ढाँचा ऐसा हो जो असमानता, अन्याय, गुलामी, उत्पीड़न, शोषण आदि से मुक्त हो, और कम से कम व्यवहार में अभी भले ही सम्भव न हो पाए, किन्तु सिद्धांततः 'स्वतंत्र समाज' के मूल-तत्वों को संरक्षण दिया जाए। डॉ. अम्बेड़कर कहते थे कि सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया तथा उद्देश्य वास्तव में विधि द्वारा सम्भव हो सकते हैं। उन्होंने भारत के संविधान में जिन सिद्धांतों-कानून की सर्वोच्चता, सामाजिक न्याय, धर्म-निरपेक्षता, स्वतंत्रता, समता, व्यक्ति की गरिमा, राष्ट्र की एकता, भ्रातृत्व को समाविष्ट करवाया है, वे निश्चित रूप से मनु-स्मृति में वर्णित जड़ीभूत, असमानता में निहित समाज का निषेध ही नहीं करते, अपितु एक 'स्वतंत्र समाज' की नींव भी डाले हैं। डॉ. अम्बेडकर विधि के द्वारा एक ऐसे 'स्वतंत्र समाज' की स्थापना के लिए कटिबद्ध थे जिसमें सभी वर्गों का कल्याण संभव हो सबको न्याय मिले, सभी को समान अधिकार संरक्षित हों और

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
** प्राध्यापक, समाजशास्त्र, कटनी, (म.प्र.)

सभी के लिए एक समान नागरिक संहिता हो। वस्तुतः भारत में कानून एक ऐसा उपकरण है जिसके द्वारा समाज में एक नयी समाज व्सवस्था को सुनिश्चित किया जा सकता है।

यह मानव व्यक्ति क्या है? डॉ. अम्बेडकर ने उसका उत्तर प्रोफेसर जैक्स मैरिटेन उस निबंध-स्वतंत्रता की विजय में पाया जिसमें कहा गया है कि आदमी को जब व्यक्ति माना जाता है तब इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई व्यक्ति अणु, मक्खी, घास का टुकड़ा मात्र अथवा हाँथी की भांति मात्र एक इकाई है। आदमी वह व्यक्ति या इकाई है जो स्वयं को अपनी बुद्धि और अपने संकल्प से संभाले रखता है, वह मात्र भौतिक रूप में ही अस्तित्व में नहीं होता। ज्ञान तथा प्रेम के माध्यम से उसका आध्यात्मिक उच्च-अस्तित्व है, वह स्वयं में एक विश्व है, एक सूक्ष्म-विश्व है, जिसकी सम्पूर्णता को ज्ञान द्वारा जाना जा सकता है। प्रेम से व्यक्ति स्वयं को अन्य प्राणियों के साथ जोड़ता है। आदमी मात्र हाड़-मांस का एक पुतला नहीं है। आत्म-चेतना व्यक्तित्व की जड़ है जिसमें एक प्रकार की संपूर्णता तथा स्वतंत्रता निहित है। उसमें क्रियाशीलता तथा जीवंत रहने की अग्नि होती है। व्यक्ति चाहे अमीर हो या निर्धन, बलवान हो अथवा निर्बल, स्वतंत्र है और निरपेक्ष अस्तित्व में सहभागी है। व्यक्ति का मूल्य, उसकी प्रतिष्ठा और उसके अधिकार हमारी व्यवस्था से जुड़े रहते हैं। इसलिए डॉ. अम्बेडकर ने मानव व्यक्ति को सर्वोच्च माना और कहा कि उसकी मौलिक छवि को कठोर बन्धनों तथा दमनकारी कानूनों से धूमिल नहीं किया जाना चाहिए। मानव व्यक्तिगत को एक साधन-मात्र समझकर व्यवहार करना नैतिक और विधिक दोनों दृष्टि से अवांछनीय है। अतः एक स्वतंत्र समाज में मानव व्यक्ति की गरिमा अनिवार्य चीज है, व्यक्ति साध्य है, साधन नहीं।

मानव व्यक्ति की गरिमा और नैतिक समानता को ध्यान में रखते हुए डॉ. अम्बेडकर ने भाईचारे को स्वतंत्र समाज का एक अनिवार्य तत्व माना और कहा कि ''भाईचारा किसी व्यक्ति का वह गुण है जो मनुष्यों को आदर एवं प्रेम का पात्र मानकर अपने साथी प्राणियों के साथ एकीभूत होने का इच्छुक होता है। एक स्वंतत्र समाज में स्वतंत्रता क्यों अनिवार्य है? इस प्रश्न का उत्तर डॉ. अम्बेडकर ने इन शब्दों में दिया।

डॉ. अम्बेडकर के मन में जिस स्वतंत्र तथा समतावादी समाज व्यवस्था की रूपरेखा थी, वह उसे सांविधानिक विधि में अन्तर्निहित करना चाहते थे ताकि यहाँ की रूढ़िवादी, अशिक्षित और जातिगत समाज में सदियों से उत्पीड़ित एवं शोषित रहे लोगों का जीवन-स्तर बेहतर बने। उन्होंने यह स्वयं देखा कि भारतीय समाज में अधिकतर स्त्री-पुरूष दरिद्रता तथा निरक्षरता का जीवन बिताते है, करोड़ों नर-नारी अछूत एवं पददलित हैं, और अन्य बहुत से पिछड़े हुए हैं। डॉ. अम्बेडकर ने उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए संविधान में समाजवादी समाज का उद्देश्य निश्चित किया था। वैसे संविधान किसी विशिष्ट विचारधारा, समाजवाद या साम्यवाद, से बंधा हुआ नहीं है, किन्तु वह समाज की तत्कालीन आवश्यकताओं से प्रेरित था। उन्होंने भारत के असंख्य लोगों में राष्ट्रीय-भावना तथा एकता, सामाजिक समानता, राजनीतिक स्वतंत्रता, बनाए रखने के लिए केन्द्र की मजबूती, समान नागरिक संहिता, समाजवादी उद्देश्य एकल नागरिकता, विधि का शासन आदि सुझाव की अन्तर्निहित सम्पूर्णता न केवल समतावादी तथा समाजवादी समाज के सिद्धांतों को स्वीकार करती है, अपितु वह एक स्वतंत्र समाज व्यवस्था की मांग करती है। संपूर्ण सांविधानिक विधि में एक ऐसी

अन्तरध्वनि है, जो सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने में सक्रिय भूमिका निभा सकती है। सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था और समाजवादी सिद्धांतों का निकट सम्बंध है। इस निकटता को कानून ही फलीभूत कर सकता है। डॉ. अम्बेड़कर का स्पष्ट विचार था कि भारत जैसे रूढ़िवादी, किन्तु विकासशील देश में स्वतंत्र समाज व्यवस्था लाने के लिए अनेक कानूनों की आवश्यकता है।

डॉ. अम्बेड़कर ने जिस विधि-दर्शन का पोषण किया, जिसमें मानवतावादी दृष्टिकोण सुस्पष्ट है। इसका अर्थ है मानव व्यक्ति हमारी समाज व्यवस्था का मुख्य केन्द्र है। राज्य अथवा कानून उसकी स्वतंत्रता एवं समानता का संरक्षण है। उन्होंने कहा था कि ''कानून के समक्ष सभी समान हैं और सबके नागरिक अधिकार समान हैं।'' केवल इतना ही परिवर्तन नहीं, 'नैतिकता समानता' भी सबका अधिकार है। यही कारण था कि भारत के संविधान में सभी नागरिकों के लिए डॉ. अम्बेड़कर ने समान अधिकारों के प्रावधान करवाये। उनकी दृष्टि से, अब कोई भी कानून, नियम या रीति-रिवाज, अथवा व्यवस्था या फिर संस्था, ऐसी नहीं रहेगी, जो भेद-भाव करती है, जो ऊँच-नीच तथा छुआछूत के विचार पैदा करती है।

डॉ. अम्बेड़कर के सामाजिक न्याय की धारणा एक ऐसी जीवन पद्धति है जिसमें अपेक्षा की जाती है कि प्रत्येक मानव व्यक्ति को समाज में समुचित स्थान मिलेगा। लेकिन समुचित स्थान का मतलब यह कतई नहीं है कि व्यक्ति को जन्माधारित सामाजिक प्रतिष्ठा मिले। पददलित हैं, और अन्य बहुत से पिछड़े हुए हैं। डॉ0 अम्बेडकर ने उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए संविधान में समाजवादी समाज का उद्देश्य निश्चित किया था। वैसे संविधान किसी विशिष्ट विचारधारा, समाजवाद या साम्यवाद, से बंधा हुआ नहीं है, किन्तु वह समाज की तत्कालीन आवश्यकताओं से प्रेरित था। उन्होंने भारत के असंख्य लोगों में राष्ट्रीय -भावना तथा एकता, सामाजिक समानता, राजनीतिक स्वतंत्रता बनाए रखने के लिए केन्द्र की मजबूती, समाज नागरिक संहिता, समाजवादी उद्देश्य एकल नागरिकता, विधि का शासन आदि सुझाव दिये थे जिन्हें संविधान निर्माताओं ने सहर्ष स्वीकार किया था। इसलिए संविधान की अन्तर्निहित सम्पूर्णता न केवल समतावादी तथा समाजवादी समाज के सिद्धांतों को स्वीकार करती है, अपितु वह एक स्वतंत्र समाज व्यवस्था की भी मांग करती है। संपूर्ण सांविधानिक विधि में एक ऐसी अन्तरध्वनि है जो सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने में सक्रिय भूमिका निभा सकती है। सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था और समाजवादी सिद्धांतों का निकट संबंध है। इस निकटता को कानून ही फलीभूत कर सकता है। डॉ. अम्बेडकर का स्पष्ट विचार था कि भारत जैसे रूढ़िवादी, किन्तु विकासशील देश में स्वतंत्र समाज व्यवस्था लाने के लिए अनेक कानूनों की आवश्यकता है।

डॉ. अम्बेडकर ने जिस विधि -दर्शन का पोषण किया, जिसमें मानवतावादी दृष्टिकोण सुस्पष्ट है। इसका अर्थ है मानव व्यक्ति हमारी समाज व्यवस्था का मुख्य केन्द्र है। राज्य अथवा कानून उसकी स्वतंत्रता एवं समानता का संरक्षण है। उन्होंने कहा था कि ''कानून के समक्ष सभी समान हैं और सबके नागरिक अधिकार समान हैं।'' केवल इतना ही परिवर्तन नहीं नैतिकता समानता भी सबका अधिकार है। यही कारण था कि भारत के संविधान में सभी नागरिकों के लिए डॉ. अम्बेडकर ने समान अधिकारों के

प्रावधान करवाये। उनकी दृष्टि से, अब कोई भी कानून, नियम, या रीति-रिवाज, अथवा व्यवस्था या फिर संस्था, ऐसी नहीं रहेगी, जो भेद-भाव करती है, जो ऊंच-नीच तथा छूआ छूत के विचार पैदा करती है।

राज्य व्यवस्था के सुचारू रूप से संचालन के लिए डॉ. अम्बेडकर ने जनता द्वारा सहभागिता, सम्मान एवं सद्भावना का होना आवश्यक बतलाया। सरकार के प्रति आज्ञापालन का भाव शान्ति -व्यवस्था के लिए जरूरी है। इन बातों के बिना, न कोई सरकार, न कोई प्रजातंत्र या समाजवादी विचार, सफल हो सकता है। इसीलिए डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि ''सरकार की सत्ता के प्रति, सरकार की सुदृढ़ता के लिए, आज्ञापालन की भावना उतनी ही आवश्यक है जितनी की राजनीति दलों की राज्य के मौलिक तत्वों पर एकता। किसी भी विवेकशील व्यक्ति के लिए यह असंभव है कि वह राज्य व्यवस्था को कायम रखने के लिए आज्ञापालन के महत्व को अस्वीकार करे। नागरिक अवज्ञा में विश्वास करना, अराजकता में विश्वास करने के समान है।

डॉ. अम्बेडकर के विधि दर्शन के विभिन्न पक्षों को देखने के पश्चात यह निष्कर्ष स्वाभाविक है कि उसका मूलाधार वह 'सामाजिक उद्देश्य' है जो हमें न्याय, स्वतंत्रता, समानता, भ्रातृत्व जैसे मानवीय सिद्धांन्तों में अन्तर्निहित मिलता है। न्याय की धारणा को डॉ. अम्बेडकर ने जटिल विचार बनाने की बजाय, एक सामान्य दृष्टिकोण से जोड़ा ताकि न्याय की मूल भावना को पहचाना जा सके। उन्होंने अपनी न्याय की धारणा को प्रोफेसर बर्गबॉन के इन विचारों से संबंधित पाया जो यह मानते हैं कि ''न्याय का सिद्धांत एक समग्रता है और उसमें अधिकांशतः वे सभी सिद्धांत समाहित हैं जो नैतिक व्यवस्था की नींव बन चुके हैं। न्याय ने सदैव समानता, समानुपात, क्षतिपूर्ति के विचारों को जागृत किया है। समानुपात का अर्थ है समानता। नियम एवं अधिनियम, अधिकार तथा सदाचार मूल्य की दृष्टि से समानता के साथ जुड़े हुए हैं। यदि सभी मनुष्य समान हैं, सभी मनुष्य एक ही सार-तत्व से बने हैं, तो यह सामान्य सार-तत्व उन्हें समान मौलिक अधिकारों तथा समान स्वतंत्रता के लिए अधिकृत करता है।

हमें अपनी राजनीति प्रजातंत्र को साथ में ही एक सामाजिक प्रजातंत्र भी बनाना चाहिए। राजनीतिक स्वतंत्रता अधिक दिनों तक टिकी नही रह सकती यदि उसकी नींव सामाजिक प्रजातंत्र पर आधारित नहीं है। सामाजिक प्रजातंत्र का अर्थ क्या है? इसका अर्थ है एक जीवन पद्धति जो स्वतंत्रता, समानता तथा भ्रातृत्व को जीवन के सिद्धांतों के रूप में स्वीकृत करती है। स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के इन सिद्धान्तों को एक त्रयी के पृथक-पृथक बिन्दुओं के रूप में नहीं समझना चाहिए। वे त्रयी के एक संगठन का निर्माण करते हैं। इस अर्थ में कि किसी एक को दूसरे से अलग करना प्रजातंत्र के मूल उद्देश्य को ही परास्त करना है।

डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक न्याय की धारणा एक ऐसी जीवन पद्धति है जिसमें अपेक्षा की जाती है कि प्रत्येक मानव व्यक्ति को समाज में समुचित स्थान मिलेगा। लेकिन समुचित स्थान का मतलब यह कतई नहीं है कि व्यक्ति को जन्माधारित सामाजिक प्रतिष्ठा मिले।

स्पष्टतः डॉ. अम्बेडकर के समाजिक न्याय की धारण निश्चित रूप में एक सामाजिक अभियान है, और अब भी कोई आदमी, दल या सरकार, इस संदर्भ में

सामाजिक न्याय की बात करता है, तब इसका अर्थ है परंपरागत रूढ़िवादी समाज व्यवस्था में सुधार, शक्ति-सम्पन्न सामाजिक समूहों से प्राकृतिक न्याय की मांग और साथ में ही इसका यह भी तात्पर्य है कि राज्य ऐसी सामाजिक तथा आर्थिक नीति अपनाए जिसके आधार पर वही सभी लोगों के प्रति प्राकृतिक न्याय के दायित्वों का निर्वाह है, और समाज को आंतरिक अव्यवस्था और बाह्य आक्रमण से बचाना राज्य का दायित्व है। सामाजिक न्याय मात्र विधि से कहीं बढ़कर है।

भारतीय समाज एवं विचारधाराओं के इतिहास में सामाजिक न्याय से संबंधित अनेक ऐसे पक्ष हमें मिलते हैं जिनके आधार पर धर्म, वर्ग, वर्ण, जाति, दिव्यता तथा पवित्र शास्त्रों में अन्तर्निहित पाये जाते हैं। डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक न्याय की अन्तर्दृष्टि हमें शुद्धताः मानववाद संविधानवाद और यथार्थ स्थितियों से जुड़ी हुई मिलती है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर- रायटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खंड 3, (महाराष्ट्र सरकार प्रकाशन, बम्बई, 1987)
2. बी.आर. अम्बेडकर : स्टेट्स एण्ड माइनॉरिटीज, (थैकर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1947)
3. बी0आर0 अम्बेडकर : पाकिस्तान और द पार्टीशन ऑफ इण्डिया, (थैकर एण्ड कम्पनी 1946)
4. स्टेट्स एण्ड माइनॉरिटीज, पृ. 3
5. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर-रायटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खंड 3,
6. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर-रायटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खंड 13, (महाराष्ट्र सरकार प्रकाशन, बम्बई, (1994)
7. स्टेट्स एण्ड माइनॉरिटीज, पृ. 28.
8. बी0आर0 अम्बेडकर : पाकिस्तान और द पार्टीशन ऑफ इण्डिया, (थैकर एण्ड कम्पनी 1946), पृ. 294
9. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर-रायटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खंड 3, पृ. 25.
10. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर-रायटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खंड 13, (महाराष्ट्र सरकार प्रकाशन, बम्बई, (1994), पृ. 1216

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

वैकल्पिक न्याय परिदान व्यवस्था के अंतर्गत लोक अदालत की भूमिकाः एक विश्लेषात्मक अध्ययन

* एस.पी. सिंह
** सविता मिश्रा

सारांश– *भारत के संविधान में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अन्तर्गत अनुच्छेद 39 ए में यह प्रावधान किया गया है कि राज्य अपने देश के निर्धन व कमजोर वर्ग को कानूनी सहायता प्रदान करने का प्रयास करेगा। इसी तारतम्य में विधिक सेवा प्राधिकरण अधि ानियम, 1987 संसद द्वारा अधिनियमित किया गया जो कि 9 नवम्बर 1995 से कार्यशील है। विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के प्रावधानों के अन्तर्गत राष्ट्रीय स्तर पर, राज्य स्तर पर व जिला व तहसील स्तर पर समय समय पर लोक अदालतों का आयोजन किया जाता रहा है जिससे लाखों लोगों को सस्ता, सुलभ व त्वरित न्याय प्रदान हुआ है तथा जनसामान्य के समय व धन की काफी बचत हुई व व्यर्थ की परेशानी से बचे है। अभी तक 2016 में कुल निराकृत मामलों की संख्या 9401521, 2017 में 5405867, 2018 में 2712252 तथा 2019 में 2542029 मामलों का निराकरण किया जा चुका है। लोक अदालत के क्रियाशील होने से नियमित अदालतों का बोझ काफी हद तक कम हुआ है।*

मुख्य शब्द– विधिक सेवा प्राधिकरण, लोक अदालत, न्यायालय, पक्षकार व सुलह

भूमिका–

भारत में समाज के निर्धन और कमजोर वर्गों के लिए विधिक सहायता सुनिश्चित कराने का प्रावधान भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39 ए मे किया गया है। संविधान 14 और 22 (1) के अन्तर्गत सभी को विधि के समक्ष समानता सुनिश्चित कराने और एक ऐसी कानूनी प्रणाली गठित करने का दायित्व राज्य को सौंपते है जो सभी के लिए समान अवसर के आधार पर न्याय प्रदान करें। समाज के इन्ही उद्देश्यों को लेकर भारतीय संसद द्वारा विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 पारित किया गया जो कि 9 नवम्बर 1995 से लागू हो गया।

शोध का उद्देश्य–

1. राष्ट्र एवं राज्य स्तर पर लोक अदालत से संबंधित विधियों के क्रियान्वयन की

* प्राध्यापक, विधि, शासकीय विधि महाविद्यालय रीवा, मध्यप्रदेश
** शोध छात्रा, विधि, अवधेश प्रताप सिंह महाविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश

वास्तविक जानकारी प्राप्त करना।

2. लोक अदालत से सम्बर्नधित विधियों के सही ढंग से क्रियान्वयन में आने वाली कठिनाईयों की जानकारी प्राप्त करना।

3. इन विधियों के क्रियान्वयन का वैकल्पिक विवाद समाधान पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

शोध का क्षेत्र एवं प्रविधि–

प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु समय समय पर आयोजित लोक अदालतों के द्वारा किये गये कार्यो का मूल्यांकन किया गया है। अध्ययन में मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों समस्याओं को सम्मिलित करते हुए प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों के द्वारा विश्लेषणात्मक विधि द्वारा पूर्ण किया गया है। प्राथमिक आंकड़े निहित प्रश्नावली द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से प्रयोजित विधि द्वारा प्राप्त किये गये है जबकि द्वितीयक आंकड़े जिला एवं सत्र न्यायालय रीवा, भोपाल, विधिक सेवा प्राधिकरण केन्द्र जबलपुर तथा राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण की बेबसाइट व अन्य समाचार पत्रों व इंटरनेट से प्राप्त किये गये हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि–

सर्वप्रथम 1851 फ्रांस में स्वदेशी लोगों को कानूनी सहायता प्रदान कराने के लिए एक कानून बनाया गया था। इसी प्रकार ब्रिटेन में 1944 में गरीबों और जरूरतमंदों को राज्य की ओर विधिक सेवाये प्रदान करने के लिए संगठित प्रयास किया गया। जब वहा के लार्ड चांसलर, विस्काउंट साइमन ने यह जांच करने के लिए रशक्लिफ कमेटी का गठन किया था कि इंग्लैंड और वेल्स में गरीबों को कानूनी सलाह देने वाली मौजूदा सेवाओं की क्या स्थिति क्या है तथा इन्हें बेहतर विधिक सहायता किस प्रकार से उपलब्ध कराई जा सकती है। भारत में 1952 में निर्धनों के लिए विधिक सहायता प्रदान करने के प्रयास प्रारम्भ किये गये। भारत सरकार द्वारा 1960 में देश में कानूनी सहायता योजना के लिए कुछ दिशा निर्देश तैयार किए गए। विभिन्न राज्यों में कानूनी सहायता बोर्ड, सोसाइटियों और विधिक विभागों के माध्यम से कानूनी सहायता योजनाएं शुरू की गई। 1980 में पूरे देश में कानून सहायता कार्यक्रम के निगरानी और निरीक्षण के लिए माननीय, अध्यक्ष माननीय श्री जस्टिस पी.ए भगवती तत्कालीन जज, भारतीय उच्चतम न्यायालय की अध्यक्षता में एक राष्ट्र स्तरीय कमेटी फश्वर इम्पिलिमेंटिंग लीगल एड स्कीम समिति का गठन किया गया। इसने अपने गठन के साथ ही पूरे देश में कानूनी सहायता गतिविधि पर निगरानी का काम शुरू कर दिया था। देश की न्याय व्यवस्था में लोक अदालतों एक नया अध्याय जोड़ा गया और इसके माध्यम से विवादित पक्षों को अपने मामले सुलहनामे के माध्यम से सुलझाने का एक उचित मंच प्रदान किया जिसका लक्ष्य एक समेकित विधिक व्यवस्था को प्रोत्साहित करना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके हाशियाबद्ध और वंचित क्षेत्रों को उचित और सार्थक न्याय प्राप्त हो है।

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के मुख्य लक्ष्य–

जन जागरूकता, समान अवसर और प्रदेश न्याय ऐसे आधार-शिलाएं हैं जिन पर नालसा की इमारत नालसा का मुख्य उद्देश्य समाज के कमजोर वर्गों को मुत और सक्षम विधिक सेवाएं मुहैया कराना सुनिश्चित करना है कि कोई भी व्यक्ति आर्थिक कारणों से न्याय प्राप्त करने के अवसरों से वंचित चाहिए और विवादों के सौहार्दपूर्ण निपटारे के

लिए लोक अदालतों का आयोजन किया जाना चाहिए। कार्यों के अलावा, कानूनी साक्षरता और जागरूकता फैलाना, सामाजिक न्याय के मुकदमों पर कार्र भी नालसा के कार्यों में शामिल है। अलग-अलग सामाजिक-आर्थिक, सांस्तिक और राजनैतिक पृष्ठभूमियों वाले विविध परिवेश तक पहुंचने के उद्देश्य के साथ, नालसा देश की विविध आबादियों से हाशियाबद्ध और वंचित वर्गों की पहचान करता है और विभिन्न प्रकार की योजनाएं तैयार करता है ताकि अलग-अलग कानूनी सेवा प्राधिकरणों द्वारा प्रतिरोधात्मक और रणनीतिक कानूनी सेवा कार्यक्रमों को चलाया और जा सके। इन सभी जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए, नालसा विविध राज्य विधिक सेवा प्राधिक विधिक सेवा प्राधिकरणों तथा अन्य एजेंसियों के सहयोग व तालमेल के साथ काम करता है।

लोक अदालत-

समाज के कमजोर और हाशियाबद्ध वर्गो के लिए विधिक सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए तथा प्रत्येक व्यक्ति का न्याय तक पहुँच के लिए अदालतों में मुकदमेबाजी के विकल्प के रूप में विवाद निवारण के त्वरित और कम के तरीके निकालना जरूरी है। लोक अदालत में एक वैकल्पिक विवाद निवारण का एक स्वदेशी रूप है और अब यह देश की विधिक व न्यायिक प्रणाली के अत्यधिक सफल रहा है। लोक अदालत एक ऐसा मंच है जहां विधिक अदालतों में लंबित अथवा मुकदमा पूर्व स्थिति में ही विवाद मुकदमा का समाधान आपसी सौहार्द समझौते से निकाला जाता है। विधिक सेवा प्राधिकरण अधि ानियम, 1987 अनसार लोक अदालतों द्वारा पारित आदेश (फैसला) को सिविल कोर्ट की डिग्री के समान माना जाता और यह अंतिम होती है तथा उस विवाद से जुड़े सभी पक्षों पर बाध्यकारी होती है और इस आदेश (फैसले के खिलाफ) किसी भी विधिक न्यायालय के समक्ष अपील नहीं की जा सकती।

लोक अदालत अपनी ओर से किसी भी मामले का निपटान नहीं करती वल्कि उनका निपटारा पक्षकारों के बीच होने वाले समझौते सुलहनामे के आधार पर किया जाता है। इसके सदस्यों को दोनो पक्षों के विवाद के सौहार्दपूर्ण समाधान हेतु उनके प्रयासों में स्वतंत्र और निष्पक्ष तरीके तथा सहयोग किया जाता है।

विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 18 (1) के अनुसार लोक अदालत के पास पक्षकारों के बीच विवादित निम्नलिखित मामलों पर समझौता या सुलहनामें में पहुँचाने या निर्धारण करने का अधिकार होता है-

1. कोई भी मामला जो उसके समक्ष लंबित हो, अथवा
2. कोई भी महिला जो आयोजित लोक अदालत के क्षेत्राधिकार में आने वाली किसी भी न्यायालय में असफल रहा हो और इससे पहले उसके समझ न लाया गया हो, बशर्ते कि लोक अदालत का क्षेत्राधिकार तलाक अथवा किसी कानून के तहत दर्ज मामले पर नहीं होगा, जो समझोता योग्य न हो।

सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2002 में न्यायालय के बाहर वैकल्पिक न्याय प्रणाली द्वारा न्यायिक समाधान के प्रक्रिया पर जोर दिया गया है। जब न्यायालय को यह प्रतीत हो कि यह मामला लोक अदालत के माध्यम से निपटाया जा सकता है तो वह ऐसे मामले को लोक अदालत को संदर्भित करती है। पक्षकारों को

समझौता करने व प्रकरण वापस लेने का अधिकार दिया गया है। तथा इसी प्रकार उन्हें लोक अदालतों से विवादों का समाधान करने की वैधानिक मान्यता प्राप्त है। इसके अतिरिक्त दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के अन्तर्गत शमनीय अपराधों को भी इस परिधि में रखा गया है। तथा अभिवाक सौदेबाजी के माध्मय से अनेक आपराधिक सिद्धदोष व्यक्तियों को सजा में छूट दी जाती है।

लोक अदालत का प्रकार– लोक अदालत तीन प्रकार की है -

1. स्थाई लोक अदालत
2. निरन्तर लोक अदालत
3. मेघा लोक अदालत

स्थाई लोक अदालत एवं मेघा लोक अदालत का आयोजन विभिन्न अदालतो के द्वारा ही संयोजित की जाती है जबकि निरन्तर लोक अदालत के लिए एक स्थाई लोक अदालत का गठन प्रत्येक जिला न्यायालय में किया गया है जिसका आयोजन महीने में एक बार किया जाता है।

लोक अदालत की शक्तियॉ– लोक अदालत को विवादो के निराकरण हेतु जो न्यायालय को शक्तियॉ प्राप्त है, वही शक्तियॉ प्राप्त होती है, अर्थात–

1. साक्षियों को समन करना व शपथ पत्र पर परिक्षण करना।
2. दस्तावेजो को प्रकटीकरण व जॉच।
3. लोक दस्तावेज की माँग।
4. शपथ पत्र पर साक्ष लेना तथा ऐसे अन्य शक्तियॉ जो निर्धारित की जाए।

न्यायिक क्षेत्र में लोक अदालत की भूमिका– लोक अदालत के आयोजनों से पक्षकारों को निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं-

1. मामले का त्वरित निराकरण एवं प्रक्रिया का लचीला होना,
2. कोई न्यायिक शुल्क नही लिया जाना,
3. लोक अदालत के पीठासीन अधिकारी से पचकारो का सीधा संपर्क होना,
4. लोक अदालत के निर्णय पक्षकारों पर बंधन कारी होते है तथा इनका कोई अपील कर प्रावधान न होने के कारण मामले का अंतिम रूप से समाधान हो जाता है, तथा
5. लोक अदालत के माध्यम से पचकारो को शीघ्र न्याय प्राप्त होता है।

राष्ट्रीय लोक अदालत द्वारा निराकृत मामलों का सांख्यिकीय विष्लेषण :
(2016 में आयोजित लोक अदालत)

सारणी क्र.01

स.क्र.	वर्ष और तिथि	पूर्व लंबित मामलों की संख्या	लंबित मामलों की संख्या	कुल मामलों की संख्या	प्रदान की गई कुल समझौते की राशि (रुपये में)
	12.11.2016 (सभी मामलों से सम्बंधित)	2490296	2655788	5146084	38966189034
	10.09.2016 (शमनीय अपराधों से संबंधित)	81381	242827	324208	3274717900
	13.08.2016 (चेक अनादर एवं वसूली से संबंधित)	207129	202358	409487	13188602780
	09.07.2016(विद्युत, पानी, टेलीफोन सेवायें एवं जन उपयोगी)	576762	131543	708305	3524807016
	14.05.2016 (बीमा क्लेम सम्बंधित)	18599	203902	222501	6577394563
	09.04.2016 (श्रम एवं परिवार से सम्बंधित)	471514	330038	801552	4587029808
	12.03.2016 (सिविल व राजस्व से सम्बंधित)	812744	613075	1425819	6833785929
	13.02.2016 (बैंकिग से सम्बंधित)	190656	172909	363565	12674234151
	कुल योग	**4849081**	**4552440**	**9401521**	**89626761181**

सन् 2016 में लोक अदालतों का समय समय पर कई आयोजन कियो गये जिनके अन्तर्गत विशिष्ट प्रकार के मामलों के लिए अलग अलग आयोजन किये गये जैसा कि सारणी क्र.01 में दर्शित है जिसका विश्लेषण करने पर यह तथ्य सामने आया कि 12. 11.2016 में सभी प्रकार के मामलों की सम्मिलित रूप से सुनवाई हुई जिसमें सुनवाई के लिए कुल मामलों की संख्या लोक अदालतों द्वारा निराकृत शमनीय अपराधों के मामले में पूर्व लंबित मामलों की संख्या 81381 व लंबित मामलों की संख्या 242827 में खर्च की गई कुल समझौते की राशि 3274717900 थी। चेक अनादर एवं वसूली से संबंधित पूर्व लंबित मामलों की संख्या 207129 व लंबित मामलों की संख्या 202358 में खर्च की गई कुल समझोते की राशि 13188602780 थी। विद्युत, टेलीफोन व जनउपयोगी संबंधी पूर्व लंबित मामलों की संख्या 576762 व लंबित मामलों की संख्या 131543 में खर्च की गई कुल समझौते की राशि 352480थी। बीमा क्लेम से संबंधित पूर्व लंबित मामलों की संख्या 18599 व लंबित मामलों की संख्या 203902 में कुल समझौते की राशि रु.6577394563। श्रम एवं परिवार से संबंधित पूर्व लंबित मामलों की संख्या 471514 व लंबित मामलों की संख्या 330038 में कुल समझौते की राशि रु. 4587029808 थी। सिविल व राजस्व संबंधित 1425819 मामलों को निराकृत कर 68337859 रु. समणैता राशि प्रदान की गई। बैकिंग से संबंधित 363565 मामलों को निराकृत कर 126774234151 रु. समझौता राशि प्रदान की गई।

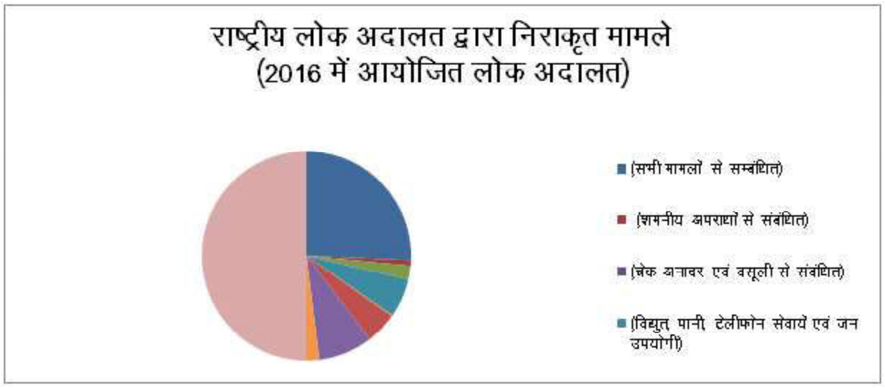

(2017 में आयोजित लोक अदालत)

सारणी क्र.02

स.क्र.	वर्ष और तिथि	वाद पूर्व लंबित मामलों की संख्या	निराकृत से संबंधित मामलों की संख्या	निराकृत मामलों की संख्या	प्रदान की गई कुल समझौते की राशि (रुपये में)
	09/12/2017	659141	711308	1370449	37778486324
	09/09/2017	515296	602914	1118210	33307037733
	08/07/2017	468366	550000	1018366	30095856645
	08/04/2017	532487	413043	945530	19007283024
	11/02/2017	302238	651074	953312	29400243450
कुल योग		2477528	2928339	5405867	149588907176

सन् 2017 में आयोजित लोक अदालतों के द्वारा कुल 5405867 मामलों में 149588907176 रु. समझौता राशि प्रदान की गई।

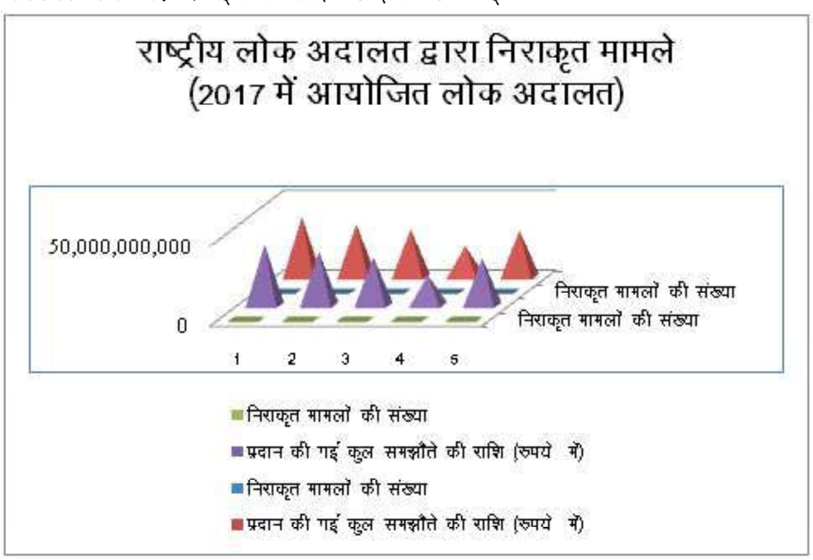

(2018 में आयोजित लोक अदालत)

सारणी क्र.03

स.क्र.	वर्ष और तिथि	कुल सम्मिलित मामले	कुल निराकृत मामले	प्रदान की गई कुल समझौते की राशि (रुपये में)
	08.12.2018	3400907	632705	8343250905
	08.09.2018	4271135	1054811	26174276634
	14.07.2018	1556572	498962	23375392653
	22.04.2018	737469	525774	30349029804
कुल योग		**9966083**	**2712252**	**88241949996**

वर्ष 2018 में आयोजित लोक अदालतों के द्वारा कुल 2712252 मामलों को निराकृत कर 88241949996 रु. समझौता राशि प्रदान की गई।

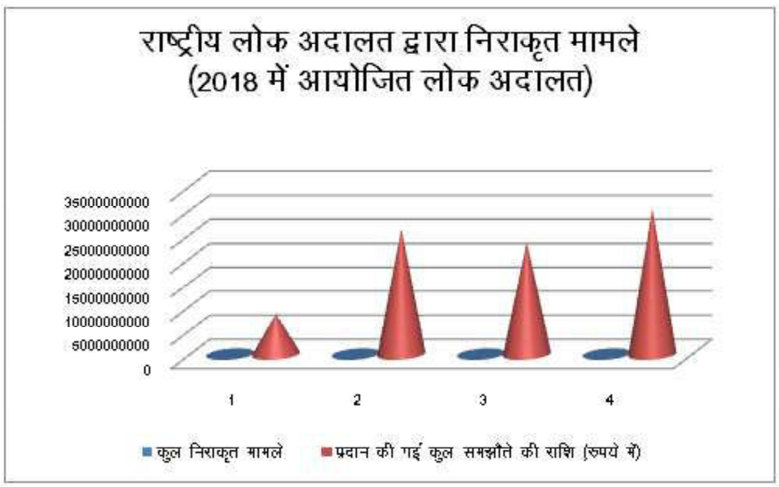

(2019 में आयोजित लोक अदालत)

सारणी क्र.04

स.क्र.	वर्ष और तिथि	कुल सम्मिलित मामले	कुल निराकृत मामले	प्रदान की गई कुल समझौते की राशि (रुपये में)
	14.09.2019	5131546	1174644	39678508119
	13.07.2019	3445956	661960	12777123627
	09.03.2019	3397025	705425	8921461338
कुल योग		**11974527**	**2542029**	**61377093084**

वर्ष 2019 में आयोजित लोक अदालतों के द्वारा कुल 2542029 मामलों को निराकृत कर 61377093084 रु. समझौता राशि प्रदान की गई।

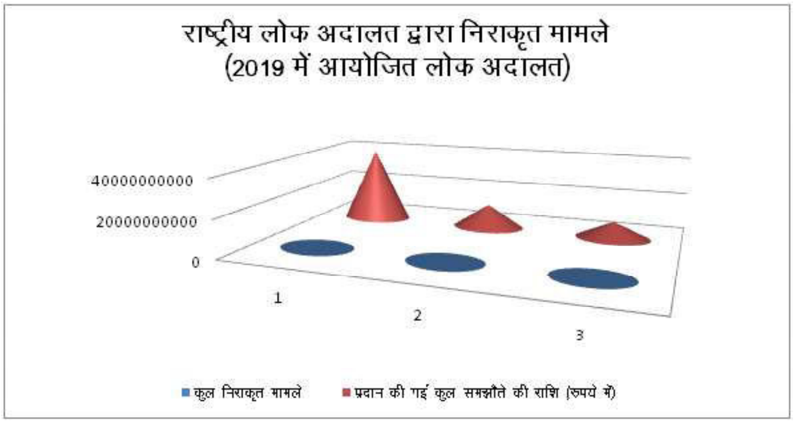

निष्कर्ष–

भारत में प्राचीन काल से लोक अदालत की अवधारणा पंच परमेश्वर के रूप में मौजूद थी। जब किसी भी गांव में उत्पन्न हुए विवाद को गांव के चौपालों में पंचायतों द्वारा निपटा लिया जाता था जिससे सामाजिक सोहार्द व पक्षकारों के बीच में आपसी संबंध बने रहते थे। लोक अदालत के आयोजनों ने न्याय के क्षेत्र में ऐसा मंत्र प्रदान किया है, जहाँ पक्षकारों व जन साधारण व्यक्ति, निर्धन व्यक्तियों को त्वरित सस्ता, सुगम न्याय प्रदान होने लगा है। जहाँ पक्षकार आपसी रजामंदी से मामलों का समझौता या समाधान आपसी सहमति पर कर लेते हैं। लोक अदालतों के आयोनों के सफलता में समाज सेवी संगठन, सामाजिक कार्यकर्ता, अधिवक्ता व जनसामान्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जहाँ एक जन समान्यों को एक ओर त्वरित एवं सस्ता न्याय उपलब्ध होता है वहीं दूसरी ओर नियमित न्यायालयों के ऊपर मामलों का बोझ काफी कम होता है जिससे वह अपने नियमित मामलों की सुनवाई पूरे मनोयोग से करते हैं। लोक अदालत की सफलता इसी बात से साबित होती है कि प्रत्येक माह पूरे भारत में लाखों मामलों का निपटारा एक साथ हो जाता है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. भारतीय संविधान
2. मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993
3. सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005
4. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908
5. विधिक लोक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987
6. म.प्र. विधिक सेवा केन्द्र, जबलपुर
7. रीवा जिला एवं सत्र न्यायालय
8. न्याय सांख्यिकी, 2016 से 2020
9. राष्ट्रीय विधिक सहायता कोष का वार्षिक लेखा 2016-17- 2018-19 व 2019-20
10. मध्यस्था एवं सुलह अधिनियम, 1996
11. विधिक सेवा प्राधिकरण नियम, विनियम एवं स्कीम

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

मऊगंज विकासखण्ड : भूमि उपयुक्तता वर्गीकरण

* आलोक कुमार राय
** संदीप कुमार पटेल

सारांश– *भूमि उपयुक्तता वर्गीकरण से किसी क्षेत्र की भूमि की कृषि क्षमता, समस्याग्रस्त क्षेत्र, जैव–रासायनिक तकनीकों के प्रति उनकी अनुक्रिया एवं उसकी कृषि पद्धतियों के बारे मे जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मऊगंज विकासखण्ड विन्ध्यन पठार के अन्तर्गत आता है यहाँ के कुल क्षेत्रफल के केवल 58 प्रतिशत भाग पर ही कृषि की जाती है। अच्छी कृषि योग्य भूमि विकासखण्ड के मध्यवर्ती क्षेत्र देवतालाब रा.नि.मं. का उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र तथा सीतापुर रा.नि.मं. का निचले पश्चिमी क्षेत्र की भूमि इस वर्ग के अर्न्तगत आती है। तरौड़, पनिगवॉ, सगरा, खरिहानी, तीतपुर, झलवार आदि ग्राम पंचायतों में साधारण कोटि की खेतिहर भूमि पायी जाती जबकि दक्षिण तथा दक्षिण–पूर्व कि भूमि पहाड़ी है जो खेती के अनुकूल नहीं है। निम्न कोटि की खेतिहर भूमि मऊगंज तथा सीतापुर राजस्व निरीक्षक मण्डलों मे सबसे ज्यादा देखने को मिलती है। इस भाग में पर्ती भूमि की अधिकता है, यहाँ कि मृदा में उर्वरक तत्वों की अत्यधिक कमी है। यहाँ भूमि भू सुधार कर अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है।*

मुख्य शब्द– कृषि क्षमता, जैव–रासायनिक तकनीक, भूमि, मृदा

प्रस्तावना–

विशेष उद्देश्य के लिए भूमि के गुणों के अनुसार किया गया वर्गीकरण भू वर्गीकरण क्रिया कहलाती है। कृषि हेतु किया गया वर्गीकरण प्रायः कृषि के विकास में सहायक होता है। भूमि का वर्गीकरण भूमि की विशेषताओं इनमें अन्तर्निहित मृदा गुणों और भौतिक क्षेत्र प्रबंधन पद्धतियों का वैज्ञानिक मूल्यांकन होता है। भूमि उपयुक्तता मानचित्र से किसी क्षेत्र की भूमि की कृषि क्षमता, समस्याग्रस्त क्षेत्र, जैव-रासायनिक तकनीकों के प्रति उनकी अनुक्रिया एवं उसकी कृषि पद्धतियों के बारे मे जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस वर्गीकरण की अत्याधिक व्यवहारिक उपयोगिता है, क्योंकि इसकी मदद से परिवर्तनशील कृषि प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरण के अनुसार शस्य अनुकूलता के अनुरूप एवं तर्कसंगत भूमि उपयोग और शस्य प्रतिरूप विकसित किया जा सकता है।

शोध क्षेत्र–

मऊगंज विकासखण्ड मध्यप्रदेश में रीवा जिले के पूर्वी भाग $24^0 31'$ उत्तरी

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, भूगोल, शासकीय शहीद केदारनाथ महाविद्यालय मऊगंज, जिला-रीवा (म.प्र.)
** अतिथि विद्वान, भूगोल, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, जिला-रीवा (म.प्र.)

अक्षांश से 24°42' उत्तरी अक्षांश तथा 81°38' पूर्वी देशांतर से 81°55' पूर्वी देशांतर के मध्य स्थिति है। मऊगंज विकासखण्ड का क्षेत्रफल 5772 हेक्टेयर है इसकी उत्तर से दक्षिण लम्बाई 22 कि.मी. तथा पूर्व से पश्चिम चौड़ाई 31 कि.मी. है। मऊगंज विकासखण्ड की समुद्र तल से औसत ऊँचाई 415 मी. है। क्षेत्रफल की दृष्टि से रीवा जिले का सातवाँ विकासखण्ड है। इसकी उत्तरी सीमा नईगढ़ी विकासखण्ड, पूर्वी सीमा हनुमना विकासखण्ड, पश्चिमी तथा दक्षिणी-पश्चिमी सीमा क्रमशः रायपुर कर्चुलियान विकासखण्ड तथा गुढ़ विकासखण्ड से लगी हुई है। दक्षिणी सीमा से सीधी जिले की चुरहट तहसील लगी हुई है।

शोध प्रविधि–

प्रस्तुत शोध पत्र में मऊगंज विकासखण्ड के भूमि उपयुक्तता वर्गीकरण हेतु मऊगंज के विभिन्न क्षेत्रों का सर्वेक्षण कर मिट्टी के प्रकार, भूमि का स्वभाव तथा ढाल, कृषि की स्थिति और सिंचाई से सम्बन्धी स्थितियों को ज्ञात करने का प्रयास किया गया साथ ही विभिन्न क्षेत्रों के कुछ कृषकों से साक्षात्कार द्वारा जानकारी प्राप्त की गई है।

शोध का उद्देश्य–

प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य मऊगंज विकासखण्ड के कृषित भूमि की वास्तविक स्थिति और विकास की संभावनाओं से अवगत कराना जिससे कृषित भूमि के सुधार सम्बन्धी भावी योजनाओं को निश्चित क्षेत्र में लागू किया जा सके।

विश्लेषण–

भू-वर्गीकरण की अनेक विधियाँ हैं। एल.डी.स्टाम्प (Stamp, 1960) ने ब्रिटेन की भूमि का सर्वप्रथम वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इस व्यवस्था में भूमि को सात वर्गों में बाँटा गया है। भारत में इस क्षेत्र में सर्वप्रथम कार्य एम.शफी (M.Shafi,1962) किया। भारत में अखिल भारतीय मृदा एवं भूमि उपयोग सर्वेक्षण संस्थान संरक्षण ने 1960 में भूमि उपयुक्तता वर्गीकरण हेतु एक आयोजन में सुझाव दिया, जिसमें संगठन ने 1970 में पुनः कुछ संसोधन प्रस्तुत किया। इसके अनुसार भूमि उपयोग क्षमता को आठ प्रमुख वर्गों में निर्धारित किया गया। जिन्हे पुनः कृषि की उपयोगिता की दृष्टि से दो वृहत समूहों में रखा गया है-

कृषि योग्य भूमि–

- श्रेणीः अत्यन्त उत्तम खेतिहर भूमि जहाँ खेती करने में कोई कठिनाई नहीं है।
- श्रेणीः अच्छी खेतिहर भूमि जिसे अपरदन, अप्रवाह, बाढ़ से सुरक्षित रखने के लिए जल-प्रवाह सुधार योजना एवं सिचाई के लिए जल के संरक्षण की आवश्यकता होती है।
- श्रेणीः साधारण कोटि की खेतिहर भूमि जहा अपरदन नियंत्रण और सिचाई जल संरक्षण पर विशेष ध्यान की आवश्यकता है। बाढ व गहन जल प्रवाह से भी इसे सुरक्षित रखना आवश्यक है।
- श्रेणीः समयानुसार सीमित खेती के अधीन भूमि जिसे अपरदन से बचाए रखना आवश्यक है। मिट्टी की सीमित-क्षमता हो दूर करने के उपाय और गहन-सिचाई का प्रबंध भी चाहिए।

भूमि जो खेती हेतु नही है–

- श्रेणीः खेती के लिए अनुपयुक्त, चारागाह के लिए उत्तम परन्तु इसे अवनलिका अपरदन से सुरक्षित रखना आवश्यक है।
- श्रेणीः खेती के लिए अनुपयुक्त किन्तु चारागाह और जंगलात के लिए अच्छी है।
- श्रेणीः खेती के लिए ठीक नहीं है किन्तु चारागाह और जंगलात के लिए ठीक ठीक।
- श्रेणीः मात्र वन्यजीवों, मनोरंजन सुविधाओं और जल आपूर्ति संरक्षण के लिए उपयुक्त।

मऊगंज विकासखण्ड की मृदा की बनावट पी.एच. मान, मिट्‌टी के प्रकार, भूमि का स्वभाव तथा ढाल, प्रतिरोधी शक्ति, मृदाक्षरण, जलस्तर आदि के आधार पर पांच वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

(1) अच्छी खेतिहर भूमि-

अच्छी कृषि योग्य भूमि यहां सिचाई जल संरक्षण की आवश्यकता है। विकासखण्ड का मध्यवर्ती क्षेत्र देवतालाब रा.नि.मं. का उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र तथा सीतापुर रा.नि.मं. का निचले पश्चिमी क्षेत्र की भूमि इस वर्ग के अर्न्तगत आती है। यहां मिश्रित लाल-काली मिट्‌टी पायी जाती है। जो कृषि योग्य है इसका pH मान मानक स्तर के अनुरूप है। विकासखण्ड में सबसे ज्यादा जनसंख्या घनत्व इसी क्षेत्र में पाया जाता है। इस क्षेत्र में कृषि उत्पादन भी अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक होता है। यहाँ के अधिकांश कृषक अभी भी पुरानी पद्धतियों से ही खेती करते हैं। यहां सिचाई की कमी के कारण रवी फसल का क्षेत्र कम हो जाता है। अतः इस क्षेत्र में सिचाई हेतु जल संरक्षण की आवश्यकता है साथ ही उन्नत बीज, नवीन उपकरण, उर्वरक तथा उन्नत तकनीकों को अपना कर उत्पादन को और अधिक बढ़ाया जा सकता है।

विगत कुछ वर्षों से ट्‌यूबवेल के माध्यम से यहाँ भूमिगत जल द्वारा सिंचाई का प्रतिशत बढ़ा है, जिसका प्रभाव यहाँ कि उत्पादन तकनीक तथा उत्पादकता दोनों पर पड़ रहा है।

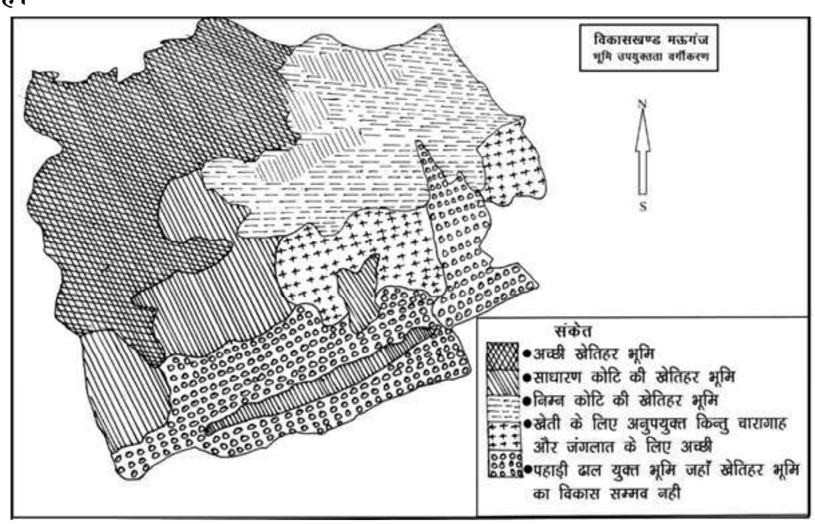

(2) साधारण कोटि की खेतिहर भूमि-

इस भूमि में मृदा उर्वरता संरक्षण के उपायों के अभाव के कारण उत्पादकता में धीरे-धीरे ह्रास होने लगा है। गरीब अथवा छोटे कृषकों की संख्या अधिक है जो पुरानी पद्धतियों से खेती करते हैं। सिंचाई हेतु जल की कमी के कारण कहाँ देशी धान-गेहूँ तथा मोटे अनाज बोये जाते हैं, यहाँ उर्वरकों का भी बहुत कम उपयोग होता है। इन क्षेत्रो में साधारण भूमि सुधार उपाय अपनाने की आवश्यकता है। यह क्षेत्र विकासखण्ड के दक्षिण में कैमूर श्रेणी के समानान्तर अदवा नाला का क्षेत्र का है, जिसमे हर्रहा, हर्रई, कॉड़ी, सरई आदि गॉव शामिल हैं। इनके अलावा उत्तर पश्चिम क्षेत्र में तरौड़, पनिगवाँ, सगरा, खरिहानी, तीतपुर, झलवार आदि ग्राम पंचायतों में इस वर्ग की भूमि पायी जाती है।

(3) निम्न कोटि की खेतिहर भूमि-

इस वर्ग के अर्न्तगत उस भूमि को रखा गया है जिसमें अपरदन बढ़ रहा है। इस क्षेत्र में मेंड बन्दी, समतलीकरण के साथ-साथ फास्फोरश, नाइट्रोजन आदि उर्वरा तत्वों को बढ़ाना आवश्यक है। इस वर्ग की भूमि मऊगंज तथा सीतापुर राजस्व निरीक्षक मण्डलों मे सबसे ज्यादा देखने को मिलती है। इस भाग में पर्ती भूमि कि अधिकता है, यहाँ कि मृदा में उर्वरक तत्वों कि अत्यधिक कमी है। ढाल की अधिकता के कारण वर्षा ऋतु भूमि का अपरदन अधिक होता है। इस वर्ग में देवरी, सुकली, निविहा, धुरेहटा, रकरी, नन्दनपुर डिधौल, अटरिया, वनपाडर खतौही, नरहो, पिपरी, अमघटी, कुलबहेरिया ग्रम पंचायतें शामिल हैं। इन क्षेत्रों में जलसंरक्षण योजनाओं का निर्माण किया जा सकता है। सिंचाई के विकास के लिए यहाँ छोटे-छोटे स्टाप डैम निर्मित किये गये हैं जिनसे कृषित भूमि में धीरे-धीरे विकास हो रहा है।

(4) खेती के लिए अनुपयुक्त किन्तु चारागाह और वृक्षारोपण के लिए अच्छी-

इस वर्ग की मिटटी में मृदा विकास कि समस्या गंभीर रूप से दृष्टिगोचर होती है। इस क्षेत्र में मृदा कि गहराई बहुत कम है, यहाँ अधिकाँश क्षेत्रों में ऊपरी सतह पर कठोर चट्टानें पाई जाती हैं अतः इस क्षेत्र में कृषि कार्य स्थगित कर देना ही उपयुक्त होगा। यह पशुचारण हेतु उपयुक्त भूमि है इसके साथ-साथ यहाँ फलोद्यान एवं वृक्षारोपण भी किया जा सकता है। इस वर्ग में विकासखण्ड कि दक्षिण तथा दक्षिण-पूर्व कि पहाड़ी भूमि को शामिल किया गया है। इसमें मलकपुर, माठी जंगल, केसरा पहाड़ प्रमुख है। यहाँ जनसंख्या बहुत विरल है, इस क्षेत्र में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लोग निवास करते हैं, जो अत्यधिक गरीब हैं। ये लोग वर्षा ऋतु में कुछ स्थानों में धान, मक्का तथा खीरा-ककड़ी कि खेती करते हैं।

(5) पहाड़ी ढाल युक्त भूमि जहाँ खेतिहर भूमि का विकास सम्मव नहीं-

इस वर्ग में विकासखण्ड की दक्षिणी भू-भाग शामिल किया गया है जो कैमूर श्रेणी का क्षेत्र है। यहाँ खेतिहर भूमि का विकास सम्मव नही है, यहाँ की भूमि पहाड़ी ढाल युक्त है। इस क्षेत्र में भी जनसंख्या बहुत कम है, पहाड़ी ढलानों पर कहीं-कहीं कोल तथा गोंड़ जाति के लोग छोटे-छोटे घर बना कर निवास करते हैं। ये लोग वर्षा ऋतु में घरों

के आस-पास मोटे अनाज तथा सब्जियाँ बोते हैं। कुछ स्थानों में देशी धान तथा गेहूँ भी बोया जाने लगा है, किन्तु उत्पादकता बहुत कम है। यहाँ वृक्षारोपण कर वन्यजीव पर्यटन व मनोरंजन का विकास किया जा सकता है।

इस प्रकार भू वर्गीकरण से स्पष्ट है कि विकासखण्ड में सबसे अच्छी कृषि योग्य भूमि देवतालाब तथा सीतापुर रा. नि. म. हैं, जहाँ सिंचाई हेतु जल उपलब्ध कराकर अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है। मऊगंज तथा सीतापुर राजस्व निरीक्षक मण्डलों पर्ती भूमि कि अधिकता है, यहाँ कि मृदा में उर्वरक तत्वों कि अत्यधिक कमी है। यहाँ भूमि भू सुधार कर पर्ती भूमि पर कृषि कार्य किया जा सकता है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. Stamp L. D., (1931): The Land Utilization survey of Britain, Geographic Journal, Vol. 78: 1, pp. 40-53
2. Safi M. (1969): Land use planning, Land classification and capability - Method and techniques, The Geographer, 16. Pp. 1-8.
3. गौतम, अल्का (1994), कृषि भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
4. हुसैन, माजिद (2007)-कृषि भूगोल रावत पब्लिकेशन नई दिल्ली.।
5. पटेल संदीप कुमार (2014): रीवा जिले में खाद्य फसल का प्रतिरूप एवं उत्पादकता का मऊगंज विकासखण्ड के विषेश संदर्भ में : एक भौगोलिक अध्ययन" (सन् 1990-2010 तक) पी-एच.डी. थीसिस, अ.प्र.सिं.वि.वि. रीवा।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

गुप्तकाल संस्कृत साहित्य का स्वर्णयुग : एक ऐतिहासिक विश्लेषण

* अमोल कुमार

सारांश– *गुप्तकाल तो संस्कृत साहित्य के सृजन का स्वर्णकाल था। गुप्तकालीन लेख के सिक्के इस उन्नति का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। ''गुप्त अभिलेखों में संस्कृत काव्य का उत्कृष्ट उदाहरण मिलता है। प्रयाग प्रशस्ति का रचयिता हरिषेण, गद्य और पद्य दोनों ही सुगमता से लिखता था। इसी प्रकार ''मन्दसौर–प्रशस्ति का रचयिता वत्सभट्टि भी महान कवि था। उसकी रचना काव्यमयी और अलंकारमयी है, किन्तु आडम्बर से दूर है।'' चन्द्रगुप्त द्वितीय के मेहरौली स्तम्भ से पता चलता है कि इसका रचयिता भी कोई साधारण कवि नहीं था। महाकवि कालिदास गुप्तकाल के ही विभूति थे। महाकवि कालिदास का विश्व के सर्वोत्कृष्ट कवियों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। जिस विषय पर भी महाकवि की लेखनी चली उसमें कोई दूसरा उनकी समता नहीं कर सकता। उनके ग्रन्थों में कौन सा ग्रन्थ सर्वश्रेष्ठ है, नहीं कहा जा सकता। कुमारसम्भवम् और रघुवंश महाकवि के दो महाकाव्य हैं, मेघदूत और ऋतु संहार उनके दो खण्ड काव्य हैं और विक्रमोर्वशीयम् मालविकाग्निमित्रा तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम् उनके तीन नाटक हैं। इनके अध्ययन करते समय हृदय इतना आनन्दित हो उठता है कि समालोचना कुछ समय के लिए मूक हो जाती है। शुद्रक गुप्त युग के दूसरे साहित्यकार हैं जिन्होंने मृच्छकटिकम् नामक एक उत्कृष्ट नाटक लिखा। इस नाटक की विशेषता यह है कि नाटककार ने समाज में निम्न कहे जाने वाले लोगों को अपने नाटक का पात्र बनाया है और सहानुभूति के साथ उसके चरित्र की विशेषताएँ प्रदर्शित की।*

मुख्य शब्द– सृजन, उन्नति, साहित्य, परिच्छंद

गुप्तकाल संस्कृत साहित्य के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण काल था। इस काल में संस्कृत भाषा और साहित्य की अपूर्व उन्नति हुई मौर्योत्तर काल में संस्कृत-साहित्य के विकास की जो प्रक्रिया प्रारंभ हुई थी। गुप्तकाल में वह उन्नति की चरम सीमा तक पहुँच गयी। गुप्तकाल में सर्वतोमुखी साहित्य का प्रचार हुआ। ''जितने भी शिलालेख उस समय के मिलते हैं, उनमें छन्द-बद्ध काव्य की रचना मिलती है। सिक्को पर भी छन्द-बद्ध शब्दों का प्रयोग मिलता है। काव्य, नाटक, गणित, ज्योतिष, राजनीति, पुराण, धर्म, दर्शन इत्यादि विषयों पर स्वतन्त्र रचनाएँ इस काल में हुई।''[1] गुप्तकाल तो संस्कृत साहित्य के सृजन का स्वर्णकाल था। गुप्तकालीन लेख के सिक्के इस उन्नति का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। ''गुप्त अभिलेखों में संस्कृत काव्य का उत्कृष्ट उदाहरण मिलता है।

* प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

''प्रयाग प्रशस्ति का रचयिता हरिषेण, गद्य और पद्य दोनों ही सुगमता से लिखता था।''[2] इसी प्रकार ''मन्दसौर-प्रशस्ति का रचयिता वत्सभट्टि भी महान कवि था। उसकी रचना काव्यमयी और अलंकारमयी है, किन्तु आडम्बर से दूर है।''[3] चन्द्रगुप्त द्वितीय के मेहरौली स्तम्भ से पता चलता है कि इसका रचयिता भी कोई साधारण कवि नहीं था। ''महाकवि कालिदास गुप्तकाल के ही विभूति थे। महाकवि कालिदास को विश्व के सर्वोत्कृष्ट कवियों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।''[4] जिस विषय पर भी महाकवि की लेखनी चली उसमें कोई दूसरा उनकी समता नहीं कर सकता। उनके ग्रन्थों में कौन सा ग्रन्थ सर्वश्रेष्ठ है, नही ं कहा जा सकता। 'कुमारसम्भवम्' और रघुवंश महाकवि के दो महाकाव्य है ं, 'मेघदूत' और 'ऋतु संहार' उनके दो खण्ड काव्य हैं और 'विक्रमोर्वर्शीयम्' 'मालविकाग्निमित्रा' तथा 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' उनके तीन नाटक हैं। इनके अध्ययन करते समय हृदय इतना आनन्दित हो उठता है कि समालोचना कुछ समय के लिए मूक हो जाती है। ''शुद्रक गुप्त युग के दूसरे साहित्यकार हैं जिन्होंने 'मृच्छकटिकम्' नामक एक उत्कृष्ट नाटक लिखा।''[5] इस नाटक की विशेषता यह है कि नाटककार ने समाज में निम्न कहे जाने वाले लोगों को अपने नाटक का 'पात्र बनाया है और सहानुभूति के साथ उसके चरित्र की विशेषताएँ प्रदर्शित की है। ''मुद्राराक्षस का रचयिता'' विशाखदत्त भी गुप्त-काल में ही हुआ था।''[6] 'मुद्राराक्षस' नाटक में चाणक्य का चरित्र बड़ा ही प्रभावशाली है। विशाखदत्त ने 'देवीचन्द्रगुप्तम्' नाटक भी लिखा था, इनका यह नाटक अपने मूल रूप में उपलब्ध नहीं है। ''सुबन्धु इस काल के प्रसिद्ध लेखक थे जिन्होंने 'वासवदत्ता' नामक ग्रन्थ की रचना की थी।'' रीतिशास्त्र काव्यालंकार के लेखक भामह भी इसी युग में हुए थे।'' संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रंथ 'पंचतंत्र' की रचना भी गुप्तकाल में हुई थी।''[7] गुप्तकाल में धर्मिक साहित्य का सृजन भी हुआ था।''

अतएव विष्णु और शिव की स्तुति में कई परिच्छेद जोड़ दिए गए।'' संस्कारों एवं भक्तिवादी तत्वों के समन्वय का सर्वप्रथम संकलन इस पुराणों में ही किया गया है। मनु स्मृति के आधार पर इस युग में स्मृतियाँ भी लिखी गई। ''याज्ञवल्क्य, नारद, कात्यायन और बृहस्पति ने अपने स्मृति ग्रंथों का प्रणयन इसी युग में किया था।'' याज्ञवल्यक्य की स्मृति में आचार, रीति-रिवाज और संस्कार, व्यवहार, सिविल कानून इन पर समुचित ध्यान दिया गया है। इस ग्रंथ के अध्ययन से पता चलता है कि इस काल में न्याय सम्बन्धी नियमों का भी विकास हो रहा था। ''कौटिल्य के अर्थशास्त्र के आधार पर गुप्त-युग में कामन्दक ने 'नीति सार' की रचना की थी।''[8] ''गुप्तकाल में ब्राह्मण आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करते थे। उन्हें सांसारिक वस्तुओं में कोई सरोकार न था।'' योगी ब्राह्मण सिद्धि और मोक्ष की प्राप्ति के लिए ध्यान या चिन्तन करते थे। मुनि लोग कठिन तपस्या करते थे। 'भक्ति ही उनके जीवन का एकमात्र कर्म था। तप, स्वाध्याय वैदिक ज्ञान, मन्त्रों, सूत्राों, भाष्यों तथा प्रवचनों में प्रवीण होने के लिए वे प्रसिद्ध थे। ''आम जनता भी धर्म में विश्वास रखकर धर्मिक आचरण करते थे। सोलह संस्कारों का उपयोग किया जाता था।''[9]

गुप्त युग में दार्शनिक साहित्य का भी प्रचुर मात्राा में सृजन हुआ। हिन्दुओं, बौद्धों और जैनियों ने अपने-अपने सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिए अनेक ग्रन्थों की रचना की थी। ''सांख्य दर्शन पर सबसे पहले टीका लिखने वाले ईश्वर कृष्ण थे। जिन्होंने

'सांख्य कारिका' नामक ग्रंथ लिखा।'' न्याय-दर्शन पर भी अनेक ग्रंथों का प्रणयन किया गया। ''वात्स्यायन ने न्याय सूत्रों पर एक टीका लिखी।'' बौद्ध और जैन धर्मों में भी दार्शनिक साहित्य का सृजन हुआ। ''बौद्ध आचार्य वसुबन्धु ने हीनयान और महायान दोनों पर ग्रन्थ लिखे जिनमें 'अभिधर्मकोष' इनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध कृति है।'' गुप्तकालीन सभ्यता और संस्कृति का विवरण ललितकलाओं के वर्णन के बिना पूर्ण नहीं माना जा सकता, क्योंकि गुप्त-कालीन जीवन की स्वर्णिमता ओर समाज की सम्पन्नता को 'ललितकला' के द्वारा ही आंका जा सकता है। संगीत के विभिन्न अंग नृत्य और वाद्य के साथ-साथ अभिनय व चित्राकला भी ललितकला के अंग हैं एवं सांसारिक जीवन की कठोर शुष्कता को दूर करने और जीव और जगत् के बीच रागात्मक तथा भावात्मक सम्बन्ध स्थापित करने में संगीत बड़ा साधन माना जाता था।[10]

गुप्तकालीन संस्कृत-साहित्य के मनीषियों में कालक्रम से भास का नाम प्रथम आता है। अधिकतर विद्वानों ने इनका समय 300 ईसवी के आस-पास स्वीकार किया है। भास के तेरह नाटक उपलब्ध होने की बात स्वीकार की जाती है। हालांकि विद्वानों का एक वर्ग मानता है कि ये नाटक भास के नहीं अपितु किसी दूसरे दर्जे के नाटकार के हैं। यह पक्ष यह निर्देश करता है कि इनमें से किसी नाटक का लेखक भास नहीं है, जबकि विद्वानों का दूसरा वर्ग मानता है कि त्रिवेन्द्रम-नाटकों के स्वप्नवासवदत्ता में, वे अधिकांश विशेषताएँ पायी जाती हैं, जिनका प्राचीन आलोचकों एवं कवियों ने भास के इस नाम के नाटक के बारे में उल्लेख किया है, और तेरह त्रिवेंद्रम नाटकों की भाषा तथा नाटकीय पद्धति में इतना विलक्षण साम्य है कि इन सबका लेखक भास ही होना चाहिए।[11] भास के तेरह नाटकों के नाम हैं- मध्यमव्यायोग, दूत घटोत्कच, कर्णभार, ऊरुभंग पंचारात्र, दूतवाक्य, बालचरित, प्रतिमा, अभिषेक, अविमारक, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, स्वप्नवासवदत्ता तथा चारुदत्त। इनमें से अधिकांश नाटकों के विषय रामायण, महाभारत से लिये गये हैं किंतु भास ने उन्हें नाटकीय बनाने में पर्याप्त कौशल दिखाया है। पात्र चित्रण बड़ा प्रभावजनक है और भाषा शैली सरल और सरस है।

इसप्रकार साहित्यों से पता चलता है कि कालिदास ने राजा प्रवरसेन के सेतुबंध काव्य का संशोधन किया था। अधिक संभावना है कि सेतुबंध का लेखक वाकाटक राजा प्रवरसेन द्वितीय के अतिरिक्त कोई और नही ं था। यह अधिक संभव है कि कालिदास कुछ समय के लिए उसका अध्यापक रहा हो। वाकाटकों में रामगिरि के रामगिरि स्वामी की बड़ी पूजा होती थी और यह संभव है कि राजपरिवार के साथ इस स्थान की यात्रा में कालिदास को यह विचार आया कि वह इस पर्वत को अपने मेघदूत के नायक के निर्वासन का स्थान बनाये। फिर भी यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि कालिदास को गुप्त युग में रखने के लिए हमारे पास अब तक कोई निर्णायक प्रत्यक्ष एवं निश्चित साक्ष्य नहीं है।

गुप्तकालीन काल सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिवर्तन के लिए काफी महत्वपूर्ण था। वस्तुतः आठवीं से बारहवीं शताब्दी का काल अनेक महत्वपूर्ण सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिवर्तनों की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण था। यद्यपि यह काल व्यापारिक एवं आर्थिक सम्पन्नता के मामले में काफी समृद्ध था। परन्तु यह कहना सर्वथा उचित नहीं होगा कि यह काल सामाजिक एवं सांस्कृति रूप से भी उतना ही समृद्ध था।

इस समय सामाजिक तौर पर कई प्रकार के परिवर्तन दिखने को मिलते हैं। इन परिवर्त्तनों के बावजूद सामाजिक कुरीतियाँ ज्यों-के-त्यों कायम थी। छूआछुत 'जाति व्यवस्था दलित वर्ग आज भी अपना अस्तित्व समाज में बनाये हुए थे।[13]

यद्यपि गुप्तकाल को भारतीय इतिहास का स्वर्णकाल माना जाता है फिर भी उस समय के हालात् को देखने के बाद यह कहना सही नहीं होगा कि गुप्तकाल का समाज एवं प्रशासनिक व्यवस्था उच्च कोटि की थी। यह अलग बात है कि इस काल में भारत ने राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक साहित्यिक एवं कला के क्षेत्र में काफी उन्नति की, सामान्य लोगों का जीवन सुखमय एवं शांतिपूर्ण था। शहरों में ऊँची-ऊँची इमारतें दिखने को मिलती थी। शहरों की व्यवस्था काफी समृद्ध थी जो लोगों की आर्थिक समृद्वता को दर्शाता था। लेकिन वास्तविक स्थिति ऐसी नहीं थी। उस समय भी गाँवों के लोगों का जीवन परम्परागत ढंग से था।

निष्कर्षत : गुप्तकाल इतिहास में 'स्वर्ण काल' के रूप में जाना जाता है। बावजूद इसके, व्यापारिक स्तर पर एवं व्यापारियों के लिए यह काल स्वर्ण युग नहीं माना जा सकता। ऐसा नहीं था कि इस काल में व्यापारी धनी और सम्पन्न नहीं थे। शहरी संरचना को देखने के बाद यही कहा जा सकता है कि उस समय के व्यवसायी विशेष रूप से वैश्य समुदाय काफी सम्पन्न था। इसका सामाजिक प्रतिष्ठा भी काफी अधिक थी। परन्तु धीरे-धीरे व्यापार में गिरावट के कारण उनकी स्थिति भी गिरती चली गई। कभी-कभी उनकी तुलना निम्न वर्गीय समुदाय से भी की गई। इस तरह यह स्पष्ट हैं गुप्तकाल में वैश्य समुदाय की आर्थिक स्थिति में बदलाव को महसूस किया और यह बदलाव निश्चित रूप से नकारात्मक ही था। इस तरह गुप्तकाल में सामाजिक व्यवस्था के परिवर्तन निश्चित रूप से दर्ज किया गया। परिवर्तन कुछ सकारात्मक भी था तथा कुछ नकारात्मक भी। उस समय के कुछ सामाजिक परिदृश्य आज भी विद्यमान हैं। उनमें भी परिवर्तन की जरूरत है फिर भी आज भी समाज उस परिवर्तनों की चाह में इंतजार कर रहा है। जैसा कि हम जानते हैं कि परिवर्त्तन अच्छा लगता है लेकिन परिवर्तन हमेशा सकारात्मक हो ऐसा जरूरी नहीं है। लेकिन परिवर्तन की चाह हमेशा बनी रहनी चाहिए। परिवर्तन से यह उम्मीद करना कि सबकुछ बदल जायेगा, ऐसा ठीक नहीं है। यों तो परिवर्तन की दौर के कारण हम एक अच्छे सामाजिक स्वरूप को प्राप्त करते हैं। उम्मीद है कि मेरे शोध का निष्कर्ष साहित्य एवं सांस्कृति जगत को नया सोचने के लिए विवश करेगा। कहना न होगा कि कालिदास ने वंश में होने वाली के धान के बिचड़ों की रोपाई का वर्णन किया है, पर मालूम नहीं कि यह कृषि-परम्परा स्थानीय थी या मगध से सीखी हुई। उत्तरी बंगाल में ऊँची किस्म की ईख उपजाई जाती थी। इन सबों से पर्याप्त मात्रा में कृषि उत्पादन संभव हुआ, जिससे कि प्रजा और राजा दोनों का निर्वाह हो और गैर-आबाद और विरल आबादी वाले क्षेत्रों में ग्रामीण बस्तियों के प्रसार को बल मिला।

उस काल के राजाओं, राजवंशों और सामन्तों की तथा उन पर शासन करनेवाले केन्द्रीय सत्ता की स्पष्ट रूपरेखा खींच पाना तो संभव नहीं है, लेकिन पूर्वांचल के दूरवर्ती प्रान्तों में संस्कृति का विकास और सभ्यता का प्रकाश हुआ, इसके बारे में संदेह की गुंजाइश नहीं है।[15] गुप्तकालीन शासन-व्यवस्था पर समकालीन अभिलेखों एवं साहित्यिक स्त्रोतों से विस्तृत जानकारी मिलती है। इन्हीं माध्यमों से ज्ञात होता है कि गुप्तशासकों ने

अपने विस्तृत साम्राज्य में अत्यंत सृदृढ़ शासन की स्थापना करके अपनी विजयों को स्थायी बना दिया। गुप्त-राजाओं ने अपने पूर्वगामी शासकों के शासन-प्रबन्ध को अपनाते हुए उसमें कुछ आवश्यक परिवर्तन कर उसे समयानुकूल बनाया। इस प्रकार यद्यपि गुप्त-प्रशासन गुप्त राजाओं की मौलिक कृति नहीं थी, किन्तु उसमें समयानुसार किए गए परिवर्त्तनों एवं उसे कुशलतापूर्वक कार्यान्वित करने के कारण, बिना निरंकुश पुलिस व्यवस्था एवं कठोर दण्ड व्यवस्था के गुप्त शासक प्रसिद्ध 'गुप्तकालीन-शांति' की स्थापना करने में सफल हुए। इस कुशल प्रशासनिक व्यवस्था के परिणामस्वरूप ही जनता आर्थिक रूप से भी समृद्ध हो सकी। गुप्तकालीन अभिलेखों में भी इसका विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। जूनागढ़ अभिलेख में उल्लेख किया गया हैं कि उस समय कोई दुखी-दरिद्र व्यसनी, कठोर दण्ड से पीड़ित अथवा राजकीय नियंत्रणों से मुक्त था। चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासनकाल में भारत आये चीनी यात्री फाह्यान के वृतान्त से भी तत्कालीन प्रशासनिक व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है। प्रारंभिक गुप्त शासकों के विजयों के परिणामस्वरूप गुप्त-साम्राज्य पूर्वी समुद्र से पश्चिमी समुद्र तक तथा हिमालय से नर्मदा नदी तक विस्तृत हो गया था। गुप्त शासकों ने मौर्यों के समान समस्त विजित प्रदेशों को अपने साम्राज्य में विलीन नहीं किया तथा अपना राज्य आर्यावर्त्त तक ही सीमित रखा। गुप्त-साम्राज्य मौर्यों के साम्राज्य के समान केन्द्रित एवं विशाल नहीं था। अनेक सामन्त गणराज्य, अधीनस्थ राजा आदि थे, जो गुप्तों के आधिपत्य को स्वीकार करते थे।

गुप्त शासकों के अनेक सामन्तों का उल्लेख मिलता है। ये नृप महाराज, उपारिक महाराज आदि उपाधि धारण करते थे एवं अपने राज्य में स्वतंत्रतापूर्वक शासन करते थे। सामन्तों की अलग-अलग सेना होती थी। सामन्त समय-समय पर राजस्व एवं उपहार देते थे, युद्ध के समय सैनिक सहायता देते थे तथा राजकीय उत्सवों पर उपस्थित होकर सम्राट के वैभव को प्रदर्शित करते थे। गुप्त-साम्राज्य की अधीनता अनेक गणराज्यों ने भी स्वीकार की थी। दक्षिण-भारत के अभियान के समय समुद्रगुप्त ने अनेक शासकों को परास्त किया था, किन्तु उनके राज्यों को नहीं छीना था। ये शासक भी गुप्तों का आधिपत्य स्वीकार करते थे। इसके अलावा अनेक विदेशी एवं सीमावर्ती शासक भी गुप्तों का आधिपत्य स्वीकार करते थे।[16]

गुप्तों का प्रशासन तंत्र उतना लम्बा चौड़ा नहीं था जितना मौर्यों का। गुप्त साम्राज्य के सबसे बड़े अधिकारी कुमार मात्य होते थे। राजा उन्हें अपने प्रान्त में ही नियुक्त करता था। शायद वे नगद वेतन पाते थे। चूँकि गुप्त वंश वाले शायद वैश्य जाति से थे, इसलिए प्रशासनिक पदों पर नियुक्ति केवल उच्च वर्णों तक सीमित नहीं थी। परन्तु अनेक पदों का प्रभार एक ही व्यक्ति के हाथ में सौंपा जाने लगा और पद वंशगत हो गए। सहज ही इससे राजकीय नियंत्रण शिथिल हो गया। गुप्तवंशीय राजाओं ने प्रशासन की द्विस्तरीय व्यवस्था-पहला प्रान्तीय और दूसरा, स्थानीय शासन की पद्धति चलाई। राज्य के कई मुक्तियों अर्थात् प्रान्तों में विभाजित था और हर मुक्ति एक-एक उपारिक के प्रभार में रहती थी। इस प्रकार स्पष्ट रूप में कहा जा सकता है कि संस्कृत साहित्य का स्वर्ण युग भी कहा गया है। उपर्युक्त कवि अपने संरक्षकों तथा उनके पूर्वजों के विस्तृत और क्रमबद्ध इतिहास लिखने में अपने को लगाने के बजाय केवल लघु प्रशस्तियाँ लिखकर ही संतुष्ट हो गये।

====================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. गुप्त साम्राज्य का इतिहास, वासुदेव उपाध्याय, पृ. 97
2. गुप्त साम्राज्य का इतिहास, वासुदेव उपाध्याय, पृ. 105
3. प्राचीन भारत का इतिहास, विद्याधर महाजन, पृ. 540
4. गुप्त साम्राज्य का इतिहास, वासुदेव उपाध्याय, पृ. 109
5. उपरोक्त, पृ. 111
6. उपरोक्त
7. प्राचीन भारत का इतिहास, डॉ. कालूराम शर्मा, 1998, पृ. 295
8. गुप्त युग का भारत, सत्यकेतु विद्यालंकार, पृ. 401
9. प्राचीन भारत का इतिहास, डॉ. कालूराम शर्मा, पृ. 295
10. गुप्त साम्राज्य का इतिहास, वासुदेव उपाध्याय, पृ. 219-220
11. गुप्त युग का भारत, सत्यकेत ु विद्यालंकार, पृ. 401
12. प्राचीन भारत का इतिहास, विद्याधर महाजन, पृ. 541
13. गुप्त साम्राज्य का इतिहास, वासुदेव उपाध्याय, पृ. 165
14. उपरोक्त, पृ. 166
15. प्राचीन भारत का इतिहास, पृष्ठ 291
16. प्राचीन भारत, सत्यकेतु विद्यालंकार, पृ. 395

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

युवाओं में नशे की समस्या
(रीवा नगर के विशेष संदर्भ में)

* महेश शुक्ला
** मंजुल मयंक त्रिपाठी

सारांश– *नशे से तात्पर्य किसी व्यक्ति द्वारा दवा का डॉक्टरी इलाज के अलावा किसी और कारणो से बड़ी मात्रा व संख्या मे बार–बार हमेशा लेते रहना या ऐसे तरीको से है जिससे आप अक्सर इन दवाओं के आप आदी हो जाते है, नशा कहलाता है। सरल शब्दों में किसी व्यक्ति द्वारा दवा या अन्य पदार्थ का प्रयोग आवश्यकता से अधिक मात्रा में अकारण नियमित रुप लेते रहनें से है जो अति का कारण बन जाता है, नशा कहलाता है। प्राचीन युग मे नशा केवल उँचे कुल तथा खुशहाल वर्ग के प्रतिष्ठित व्यक्तियों एवं साधु सन्तो द्वारा मनोरंजन के रुप मे प्रयोग किया जाता था। परन्तु बदलते परिवेश एवं समय के साथ साथ नशा प्रवृत्ति का प्रचलन वर्तमान युग मे केवल उच्च कुल के व्यक्तियों द्वारा ही नही अपितु अब नशाखोरी अब समाज के प्रत्येक धर्म, जाति, समुदाय, वर्ग के युवाओं द्वारा बहुतायत मात्रा मे मनोरंजन के साधन तथा प्रतिष्ठा के रुप मे हर वर्गो के युवाओं द्वारा प्रयोग किया जा रहा है। आज युवा वर्ग मे नशा करना ''क्रेज'' प्रतिष्ठा का रुप धारण कर चुका है। आज के वर्तमान युग मे नशा करना एक आम बात है अब तो नशा करना एक प्रचलन है जो युवा लड़के एवं लड़कियां नशा नही करते उन्हे नशा करने वाले युवा लड़के एवं लड़कियां उन्हे बच्चा मानते है। युवा वर्ग के लोग नशा करने के लिए नित्य नये–नये तरीको का प्रयोग कर नशे का लुत्फ हमेशा लेते रहते है जो कि युवाओ मे मनोरंजन एवं समय व्यतीत करने का एक अच्छा साधन है।*

मुख्य शब्द– युवा वर्ग, नशाखोरी, ड्रगनोशी, सामाजिक समस्या।

प्रस्तावना– विभिन्न आयु वर्ग के युवाओं मे बढ़ती नशा प्रवृति से उत्पन्न विभिन्न प्रकार की अनेको सामाजिक समस्याओं के लगातार बढ़ते स्तर की और सामान्य जन समुदायो का ध्यान इस और दृष्टिगत करना है, कि किस प्रकार नशा खोरी की प्रवृति के कारण सम्पूर्ण भारत देश मे ही नही अपितु यह समस्या सम्पूर्ण विश्व मे लगातार फैलती जा रही है जिससे राष्ट्र के विकास मे बाधा उत्पन्न होती है अपितु युवाओ में भी नशाखोरी के कारण युवा वर्ग के लोग आज विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओ जैसे तनाव, चारित्रिक पतन, जीवन मूल्यो मे गिरावट, अपराधो मे वृद्धि कार्य क्षमता मे कमी परिवारिक विघटन, बीमारिया आदि अनेक समस्याओं में लगातार वृद्धि हो रही है,

* प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
** शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

जिससे नशाखोरी आज एक अत्यन्त महत्वपूर्ण गम्भीर सामाजिक समस्या का रुप धारण कर चुकी है।

एक अध्ययन मे यह पाया गया कि शहरों के रहने वाले कान्वेन्ट शिक्षा प्राप्त किये हुए बालक एवं बालिकाओं के विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने के बाद ड्रग की लत के शिकार होने की सम्भावना अधिक होती है। जो छात्र हॉस्टेल मे रहते है, उनके लिए यह सम्भावना और भी अधिक होती है। ज्यादा चिन्ता की बात यह है कि देहली और दूसरे बड़े शहरों और फैशनुएबल कालेजो के बालक बालिकाएँ इस लत के अधिक शिकार हो जाते है।

मादक पदार्थों के सेवन के लिऐ कोई आयु नही होती यह किसी भी आयु के व्यक्ति द्वारा लिया जा सकता है। लेकिन आजकल द्रव्य व्यसन किशोरों और युवाओं में एक सामान्य बात हो गयी है। भारत का युवा वर्ग आज नये परिवेश में प्रवेश कर रहा है जहॉ भौतिकता की चकाचौंध है, आधुनिकता के नये कीर्तिमान है और पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने की होड़ सी लगी है। ऐसे परिवेश मे आज के नवयुवक अपना स्थान बनाना चाहते है, अपने को अत्याधुनिक कहलाना चाहते है। इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए वे मादक पदार्थो का सेवन करने लगते है। यहॉ हम उन कारणों पर प्रकाश डालेंगे कि आज का युवावर्ग क्यो और कैसे मादक द्रव्यों के प्रयोग की ओर अग्रसर हो रहा है-

1. संगति का प्रभाव–

जब कोई किशोर या युवा अपने मित्र को मादक द्रव्य का सेवन करते हुए देखता है तो उससे अपनी अनुरुपता एवं मित्रता बनाये रखने के लिए स्वयं भी मादक द्रव्यों का उपयोग एक रोचक कार्य अथवा नये अनुभव के रुप में करने लगता है।

2. निराशापूर्ण जीवन–

आज की युवा पीढ़ी निराशाओं, कुण्ठाओं और तनावों से ग्रस्त है। शिक्षा की हीनता, बेरोजगारी, अत्याधुनिक आडम्बरपूर्ण जीवन, सांस्कृतिक मूल्यों का क्षरण और भौतिकता की चकाचौंध उसकी निराशा के मूल कारण है।

3. दोषपूर्ण आवास–

मकानों की स्थिति सही जगह पर न होने से अथवा घर का वातावरण अच्छा न होने के कारण भी प्रायः नव युवक लोग मादक द्रव्यों का सेवन आरम्भ कर देत हैं। गन्दी बस्ती, सिनेमा घर, स्टेशन अथवा मदिरालय के पास मकान होने से युवाओं में नशाखोरी की प्रवृत्ति बढ़ती है।

4. फैशन–

वर्तमान भौतिकवादी समाज मे युवा वर्ग का एक बड़ा समुदाय मादक द्रव्यो को फैशन के रुप मे स्वीकार करने लगा है। महानगरीय संस्कृति में प्रायः मादक द्रव्यों का सेवन न करने वाले युवक को पिछड़ा और दकियानूसी व्यक्ति वाला माना जाता है। इससे युवको मे हीन भावना उत्पन्न होती है।

5. नगरीकरण एवं औद्योगीकरण–

बढ़ती हुई नगरीय सभ्यता और औद्योगीकरण ने नयी जीवन पद्धति और नये मूल्यो को जन्म दिया है। आज व्यक्तिवाद बढ़ रहा है। शहरो मे रहने वाले अधिकांश लोग अतिव्यस्त और तनावग्रस्त दिखाई देते है। अपने तनावों को कम करने के लिए वे मादक

द्रव्यों का सेवन करते है।

6. **असामान्य व्यक्तित्व-**

व्यक्ति विकार वाले लोग सरलता से मादक-द्रव्यों की ओर आकर्षित होते हैं। इन्हें मनोविकारी कहा जाता है। ऐसे लोग अपनी कमजोरियों को छिपाने के लिए और अपनी कुशलता व लोकप्रियता बढ़ने के लिए मादक पदार्थो का सेवन करते है। कुछ लोग कुसमायोजित एवं अवसाद ग्रस्त होते है। इससे छुटकारा पाने के लिए वे नशीले पदार्थो का सेवन करते हैं।

7. **प्रतिकूल परिस्थितियाँ-**

कभी कभी युवाओं के सामने तरह-तरह की प्रतिकूल परिस्थितियाँ आ जाती है जिनसे वे तनाव ग्रस्त रहते है और उनका मानसिक सन्तुलन बिगड़ जाता है। उदाहरण के लिए बेरोजगारी, असुरक्षित भविष्य, पारिवारिक समस्याओं, निरन्तर असफलता, समाज से उपेक्षा, यौन समस्याओं, शैक्षिक समस्याये तथा संगी-साथियो का दबाव आदि।

8. **नैतिक मूल्यों में पतन-**

व्यक्ति अपने समाज और वातावरण से बहुत कुछ सीखता है वर्तमान समाज में नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। आज समाज में समय सदाचार और नैतिकता को दकियानूसी समझा जाता है। सामाजिक बन्धन ढीले होते जा रहे हैं। छोटे बड़े भाई बहन का कोई लिहाज नही रहा गया। समाज मे अश्लील साहित्य और निम्न कोटि मनोरंजन का प्रभाव बढ़ रहा है।

9. **समाज विरोधी तत्वों के निहित स्वार्थ-**

वे समाज विरोधी तत्वो जो अफीम हीरोइन स्मैक हशीश गॉजा और चरस के अवैध व्यापार मे लगे हुए है, वे सदैव यही प्रयास करते है कि इनकी खपत में वृद्धि हो। इनका ग्राहक बनाने मे वे माहिर होते है। महाविद्यालयों मे पढ़ने वाले छात्रों, फुटपाथों पर सोने वाले लोगो के मन मे नशीले पदार्थो के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न कर उन्हे इसका शिकार बनाते है।

उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त मादक द्रव्य व्यसन के अन्य बहुत से कारण है जैसे- कभी कभी लोग दर्द और बीमारी से आराम पाने के लिए मादक पदार्थो का सेवन करते है और धीरे धीरे इन पर उनकी निर्भरता बढ़ जाती है। कभी कभी लोग अपनी हीन भावना को छिपाने के लिये दैनिक जीवन मे आराम पाने के लिए अथवा बालकों पर जब माता-पिता का नियंत्रण नहीं रहता है तब वे मादक द्रव्यों की ओर आकर्षित होते है।

शोध का उद्देश्य-

मेरे अध्ययन का उददेश्य लोगो को नशाखोरी से उत्पन्न समस्याओं से अवगत कराना तथा उन्हे नशा मुक्ति के लिए प्रेरित करना है। इसके अतिरिक्त अध्ययन का उददेश्य इस बात की जानकारी एकत्र करना है कि :-

1. विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा नशा मुक्ति कार्यक्रम योजनायें,क्या सही तरीके से क्रियान्वित हो रही है, इसकी जानकारी प्राप्त करना।
2. क्या लोगों को इन योजनाओं का पूरा लाभ मिल रहा है इसका ज्ञान प्राप्त करना।
3. सरकारी एवं गैर सरकारी संस्था द्वारा संचालित योजनाओं के प्रभाव की जानकारी

प्राप्त करना।

4. नशा मुक्ति केन्द्रों द्वारा चलित कार्यक्रमों का क्रियान्वयन कहाँ तक हो रहा है उन कार्यक्रमों का लाभ कहाँ तक नशाखोर व्यक्यिो को प्राप्त हो रहा है, इस बात की जानकारी प्राप्त करना है।
5. रीवा नगर के अन्तर्गत युवाओं में बढ़ती नशाखोरी के विशिष्ट कारणो को जानना।
6. ड्रगएडिक्ट (नशाखोरी) के समस्याओं के समाधान हेतु प्रयास करना।

अध्ययन का महत्व–

ड्रगनोशी (नशाखोरी) से संबंधित इतिहास का अध्ययन करने से पता चलता है कि उनकी स्थिति में कितना परिवर्तन आया है और उनके लिए शासन द्वारा संचालित योजनाओं का उन्हें कितना लाभ प्राप्त हो रहा है या अपेक्षित सुधार न होने के कारण है? अध्ययन का विषय वर्तमान समय में अति आवश्यक व महत्वपूर्ण है क्योंकि समाज में जब तक किसी योजना विशेष की सम्पूर्ण जानकारी लाभार्थी या सामाजिक प्राणी प्राप्त नहीं कर लेते तब तक वह ज्ञान का लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। शोधार्थी द्वारा चयनित किए गए अध्ययन विषय के महत्व को निम्न बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

1. युवाओं में बढ़ती ड्रगनोशी (नशाखोरी) की मुख्य वजह की जानकारी प्राप्त करना।
2. संस्थाओं द्वारा चलाए जा रहे नशा मुक्ति कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्त करना।
3. अध्ययन क्षेत्र में नशा करने वाले युवाओं की जानकारी प्राप्त करना, ताकि समस्याओं के समाधान हेतु प्रयास किया जा सके।
4. ड्रग एडिक्ट (नशाखोर) व्यक्तियों को योजनाओं से क्या लाभ प्राप्त हो रहा है, इसकी जानकारियॉ प्राप्त करना।

अध्ययन क्षेत्र एंव शोध प्रविधि–

अध्ययन क्षेत्र के रूप में म.प्र. स्थित रीवा नगर को लिया गया है। रीवा नगर विकास की ओर तेजी से बढ़ रहा है। अतः नशे की जड़ यहॉ भी फैलती जा रही है नगर के युवाओं में नशे का प्रचलन देखने को मिलता हैं, अतः रीवा नगर के 50 युवाओं को दैवपूर्ण निदर्शन के माध्यम से चयनित किया हैं। ये न्यादर्श किसी न किसी रूप में नशे का प्रयोग करते हैं

शोध कार्य में रीवा नगर में युवाओं में बढ़ते नशाखोरी से सम्बन्धित आंकड़ो को प्राप्त करने के लिये प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आकड़ों को एकत्र किया गया है। प्राथमिक आकड़े स्वयं कार्य स्थल पर जाकर मादक पदार्थ का किसी न किसी रूप में सेवन करने वाले व्यक्तियो से साक्षात्कार अनुसूची पद्धति के माध्यम से एकत्र किये गये हैं कि वह नशा क्यों करते है इसका कारण क्या है कि जानकारी प्राप्त कर आँकड़े प्रस्तुत किए है। जबकि द्वितीयक आंकड़े युवाओं में नशाखोरी से संबंधित विभिन्न प्रकाशित- अप्रकाशित पुस्तकों, शोध पत्र-पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, शासकीय प्रतिवेदनों आदि से एकत्र कर प्रयोग किये गये हैं।

उपकल्पना– युवाओं में नशे के रूप में तम्बाकू व गुटखे का प्रयोग सर्वाधिक किया जाता है।

तथ्यों का वर्गीकरण व विश्लेषण–

अध्ययन क्षेत्र रीवा नगर के अन्तर्गत निवास करने वाले युवाओं में ड्रगनोशी (नशाखोरी) के सन्दर्भ में शोधार्थी द्वारा साक्षात्कार के दौरान मादक पदार्थो का प्रयोग करने वाले उत्तर दाताओं द्वारा प्राप्त जानकारी निम्नानुसार है-

सारणी

1. नशा सीखने सम्बन्धी जानकारी

क्रमांक	विवरण	पुरूष	महिला	प्रतिशत
1	बाल्यावस्था	10	01	22%
2	किशोरावस्था	14	03	34%
3	युवावस्था	18	04	44%
			योग 42+08=50	100%

उपरोक्त सारणी में रीवा नगर के 50 युवा लड़के एवं लड़कियों से साक्षात्कार किया गया जिससे स्पष्ट होता है कि बाल्यावस्था में 22 प्रतिशत, किशोरावस्था में आते-आते 34 प्रतिशत एवं युवावस्था में 44 प्रतिशत व्यक्ति नशा करना प्रारम्भ करते है।

2. पहली बार मादक पदार्थ का प्रयोग सम्बन्धी जानकारी

क्रमांक	विवरण	पुरूष	महिला	प्रतिशत
1	तम्बाकू गुटका	22	08	60%
2	बीड़ी सिगरेट	08	01	18%
3	शराब	06	01	14%
4	नशीली दबा	04	00	08%
			योग 40+10=50	100%

उपरोक्त सारणी में रीवा नगर के 50 युवा लड़के एवं लड़कियों से साक्षात्कार किया गया जिससे स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत लोगो ने तम्बाकू गुटका का प्रयोग पहली बार किया 16 प्रतिशत लोग बीड़ी सिगरेट, 18 प्रतिशत शराब, 08 प्रतिशत नशीली दबा 04 प्रतिशत का प्रयोग पहली बार किया।

3. आप ने नशा करना कहाँ से प्रारम्भ किया

क्रमांक	विवरण	पुरूष	महिला	प्रतिशत
1	फिल्म	03	01	08%
2	दोस्तो के द्वारा	17	02	48%
3	परिजन	03	00	6%
4	स्वयं	14	07	32%
5	अन्य	02	01	06%
			योग 39+11=50	100%

उपरोक्त सारणी में रीवा नगर के 50 युवा लड़के एवं लड़कियों से साक्षात्कार किया गया जिससे स्पष्ट होता है कि नशा करने वालों में अधिकांश 48 प्रतिशत युवा दोस्तों के द्वारा नशा करने की वजह से, 32 प्रतिशत स्वयं के द्वारा, 8 प्रतिशत फिल्म वगैरह, 6 प्रतिशत परिजन के द्वारा एवं 6 प्रतिशत अन्य कारणों से नशा करना प्रारम्भ

किया है।

4. नशे से उत्पन्न समस्या सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	विवरण	पुरूष	महिला	प्रतिशत
1	पारिवारिक	18	8	52%
2	लालन पालन	02	1	6%
3	आर्थिक	05	3	16%
4	अन्य	10	3	26 %
			योग 35+15=50	100%

उपरोक्त सारणी में रीवा नगर के 50 युवा लड़के एवं लड़कियों से साक्षात्कार किया गया जिससे स्पष्ट होता है कि नशे की लत की वजह से 52 प्रतिशत उत्तरदाताओं को परिवारिक समस्या उत्पन्न हुई 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं को आर्थिक समस्या, 6 प्रतिशत को लालन-पालन में एवं 26 प्रतिशत को अन्य समस्या उत्पन्न हुई है।

5. नशा सीखने की आयु सम्बन्धी जानकारी

क्रमांक	विवरण	पुरूष	महिला	प्रतिशत
1	08 से 18	13	02	30%
2	18 से 45	17	8	50%
3	45 से अधिक	8	2	20%
			योग 38+12=50	100%

उपरोक्त सारणी में रीवा नगर के 50 युवा लड़के एवं लड़कियों से साक्षात्कार किया गया जिससे स्पष्ट होता है कि 30 प्रतिशत लोग 08 से 18 वर्ष की उम्र से नशा करते चले आ रहे है उसी प्रकार 50 प्रतिशत लोग 18 से 45 एवं 20 प्रतिशत लोग 45 से अधिक को उम्र में नशा करना प्रारम्भ किया।

उपकल्पना का परीक्षण–

प्राप्त तथ्य बताते हैं कि 60 प्रतिशत उत्तरदाता तम्बाकू व गुटका आदि का प्रयोग सबसे अधिक करते हैं। अतः ऑकडों के माध्यम से परीक्षण के पश्चात् हमारी उपकल्पना सत्य साबित होती हैं युवाओं में नशे के रूप में तम्बाकू व गुटके का प्रयोग सार्वधिक किया जाता हैं।

निष्कर्ष– निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि -

1. 78 प्रतिशत न्यादर्श किशोरावस्था एवं युवावस्था में नशे का प्रयोग करना प्रारंभ किये हैं। अर्थात युवाओं में दिशा से भटकने के लिये यह महत्वपूर्ण कारण है।
2. सर्वाधिक उत्तरदाता तंबाकू व गुटके को नशे के रूप में प्रयोग करते हैं। इनका प्रतिशत 60 है। शेष अन्य नशीले पदार्थों का उपयोग करते हैं।
3. दोस्तों व संगी साथी के कहने पर 48 प्रतिशत उत्तरदाता तथा स्वयं के द्वारा सीखकर 32 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नशा किया है। यह एक विचारणीय तथ्य है।
4. पारिवारिक जीवन 52 प्रतिशत न्यादर्शो को नशे के कारण समस्यायें उत्पन्न होती है।
5. 70 प्रतिशत न्यादर्श 18 वर्ष के उम्र के लगभग नशा करना सीखते हैं।

किशोरावस्था में युवाओं को नशे में धकेलने के लिये घातक आयु है।

सुझाव– इस विषय का अध्ययन करने तथा प्राप्त तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि -

1. औषधीय दुरुपयोग वर्तमान तथा भावी पीढ़ियो के लिए उतना ही विनाशक है जितना की प्लेग रोग समस्त विश्व मे फैल गया था।
2. यदि इस पर नियन्त्रण ना पाया गया तो इसके बहुत ही विनाशक एवं भयंकर दुष्परिणाम होगे तथापि औषधि दुरुपयोग के इस अभिशाप को रोकने के लिए कोई तात्कालिक अथवा अर्थकालीन उपाय नही है।
3. इस समस्या के समाधान के लिए निश्चित किए जाने वाले उपायों में किसी देश के ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं को भी ध्यान में रखना होगा इसके अधिकतम प्रभाव सुनिश्चित करने हेतु ऐसे सभी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासो का प्रादेशिक स्तरो पर सतत समन्यवय करना चाहिए एवं निजी तौर पर नशे के विरुद्ध जन जागरुकता अभियानो को बढावा दिया जाना चाहिए।
4. नशे का व्यापार करने वाले लोगो के विरुद्ध सख्त कानूनी कार्यवाही की जानी चाहिए एव हमें संकल्प लेना चाहिए की हम ना तो नशा करेगे और ना ही करने देंगे।
5. नशाखोरी को सर्वप्रथम समाज विरोधी कार्य मानना चाहिये क्योंकि नशाखोर जहाँ युवा लड़के एवं लडकियाँ स्वयं को हानि पहुँचाते है वही समाज को भी नुकसान पहुँचाते है। अतः नशाखोरो के खिलाफ कठोर कार्यवाही करनी चाहिये।
6. इसे व्यक्तिगत रोग मानकर इसका चिकित्सकीय और मनोवैज्ञानिक इलाज करना चाहिये और अन्त में ऐसी सामाजिक और सांस्कृतिक बुराइयों को समाप्त किया जाते जिसके कारण लोग दिग्भ्रमित और कुंठित होकर नशाखोर हो जाते हैं। इस प्रकार नशाखोरी का मुकाबला करने के लिए आवश्यक है कि इसके विरूद्ध कानूनी चिकित्सकीय मनोवैज्ञानिक और सामाजिक स्तर पर कार्यवाही की जाये, क्योंकि नशाखोरी की समस्या एक की या व्यक्तिगत अथवा परिवार की न होकर संपूर्ण समाज की है जिसमें हम या आप किसी भी प्रकार से पृथक नही है।
7. नशाखोरी की समस्या को हल करने के लिए आवश्यक है कि नशाखोर स्वयं महसूस करे कि नशे का प्रभाव हमेशा बुरा ही होता है, जो व्यक्ति के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालता है।
8. दवाओं में मादक पदार्थो (ड्रग) के बारे में व्याप्त भ्रम को दूर किया जाना ही हमारा नैतिक कर्तव्य एवं दायित्व है। नव युवको को सचेत किया जाये कि ड्रग्स के सेवन से न तो अदभुत आनन्द की प्राप्ति और न तनाव से मुक्ति और न ही शरीरिक मानसिक कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।
9. नशे से मुक्ति पाने के लिए आज जरूरत है कि सामाजिक संस्थाये-
   * नशाखोरी के खिलाफ जन जाग्रति पैदा करें।
   * नशा मुक्ति शिविरो का आयोजन करें।
   * नशे से मुक्ति के बाद व्यक्तियो के पूर्नर्वास की व्यवस्था भी की जाये।

नशीले पदार्थो की बिक्री और इस्तेमाल पर दिन- प्रतिदिन सख्त कानून बनाने

मात्र से ही हम समस्या से छुटकारा नही या सकते। इसके लिए आवश्यक है कि इन कानूनो पर निष्पक्ष रूप से अमल किया जाये।

===================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ. बघेल, किरण, जनांकिकी एवं भारत में जनस्वास्थ्य पुष्पराज प्रकाशन, 1978
2. डॉ. सक्सेना, आर.एन., भारतीय समाज तथा सामाजिक संस्थाएँ
3. डॉ. बघेल, डी.यस., भारतीय समाज, पुष्पराज प्रकाशन 1986-87
4. महिला स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं का मैनुअल, स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण मंत्रालय भारत सरकार - 1978
5. म0प्र0 राज्य एड्स नियंत्रण समिति के द्वारा नशे के लिए उपयोग की जाने वाली सुई और सीरिंजो से होने वाले एच.आई.वी सक्रमण संबधी मार्गदशिका के माध्यम से।
6. टी0वी0 के द्वारा सन्चालित नशा मुक्ति कार्यक्रम के माध्यम से रेडियो धारावाहिक नशा मुक्ति कार्यक्रम से।
7. अध्ययन क्षेत्र के निवासियो के व्यक्तिगत विचार के माध्यम से।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

स्वच्छता अभियान में सामाजिक संगठनों की भूमिकाः समाजशास्त्रीय अध्ययन (रीवा शहर के विशेष सन्दर्भ में)

* अखिलेश शुक्ल
** शिवबिहारी कुशवाहा

सारांश– *स्वच्छता पर जोर देने के पीछे गांधी जी का साफ–सफाई के लिए केवल व्यक्तिगत जुनून नहीं था, बल्कि भविष्य के भारत के लिए उनका वृहद् दर्शन था। देश की मिट्टी के सपूत होने के नाते वे उन परिस्थितियों से भलीभाँति परिचित थे, जिनमें अधिकतर भारतीय, विशेषकर गाँवों के गरीब लोग अपना जीवन जी रहे थे। इन लोगों का जीवन अत्यंत गंदगी–भरे माहौल में बीत रहा था, जिसकी वजह से गांधी अत्यंत निराश एवं दुःखी थे। जैसा कि आज भी देखने को मिलता है, उनके समय में भी जानवरों एवं मानव का मल, उन प्रमुख घटकों में शामिल थे, जिनकी वजह से पूरे देश में लोग, विशेषकर बच्चे, अनेकों बीमारियों जैसे–कॉलरा, डायरिया आदि से संक्रमित होते थे। पूरे देश के गाँवों तथा नगरों में अपने प्रवासों के दौरान गांधी ने ऐसे बच्चे भी देखे थे, जो अपनी स्वस्थ–परिस्थिति में तो ज्यादा खुशहाल रहे थे, किंतु अब रोगग्रस्त होने के कारण उनमें इतनी शक्ति भी नहीं बची कि वे स्वयं पर बैठी मक्खी को भी हटा सकें। स्वच्छता को प्राथमिकता देने का प्रमुख कारण था कि गांधी अपने देशवासियों को यह सिखाना चाह रहे थे कि स्वस्थ जीवन की शुरुआत स्वच्छता से ही हो सकती है। उन्होंने अपने संपूर्ण सार्वजनिक जीवन में स्वच्छता को एक जन–आंदोलन बनाने के लिए हर संभव प्रयास किया, जो आज के संदर्भ में करोना जैसे वैश्विक महामारी जैसे बीमारियों से बचने के लिए स्वच्छता एक प्रमुख कड़ी के रूप में है। इस बीमारी की आज तक किसी प्रकार की दवाई या वैक्सीन की खोज नहीं हुई है इससे बचने के लिए स्वच्छता, आइसोलेशन, कन्टेनमेन्ट, सेनेटाइज, मास्क, सोशल डिस्टेंसिंग करके अपने आपको बचने का सुगम रास्ता है।*

मुख्य शब्द– स्वच्छता, कन्टेनमेन्ट, कोरेनटीन, सेनेटाइज, मास्क, सोशल डिस्टेंसिंग सामाजिक संगठन

प्रस्तावना– स्वच्छता मानव-समाज की जीवन-रेखा है। यह मानव-सभ्यता के निर्माण का मूल आधार है। हमारे स्वास्थ्य एवं कल्याण के लिए स्वच्छता से महत्त्वपूर्ण कुछ भी नहीं है। यह एक सार्वभौमिक तथ्य है कि जो राष्ट्र स्वच्छता के महत्त्व को समझते हुए उसे स्वीकार करता है, उनमें विकास की गति तेज होती है, बजाय उन देशों के जो इसे

* प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
** शोध छात्र, शा0 ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म0प्र0)

नजर अंदाज करते हैं। इस तथ्य को महात्मा गांधी से बेहतर कोई नहीं समझ सका, जिन्होंने स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान यहाँ तक कह दिया कि 'यदि मुझे स्वतंत्रता एवं स्वच्छता में से किसी एक को चुनना हो तो मैं स्वतंत्रता से पूर्व स्वच्छता का चुनाव करूँगा। आज, जबकि संपूर्ण परिवेश परिवर्तित हो चुका है, हमारे पास एक ऐसी सरकार है, जिसके पास स्वच्छता एवं विकास को जन-आंदोलन बनाने के लिए योजनाएँ हैं। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी का विचार कि मन्दिर-निर्माण से अधिक प्राथमिकता शौचालय-निर्माण को देनी चाहिए, गांधी के स्वच्छ एवं स्वस्थ भारत के स्वप्न का ही प्रतिबिंब है। उनका मानना है भारत-जैसे एक बड़े एवं अधिक आबादी वाले देश के लिए, जो कि अभी भी सामूहिक वंचन, स्वच्छता, स्वस्थ पेयजल एवं शौचालयों की कमी को दलदल से बाहर निकलने के लिए संघर्ष कर रहा है, वहाँ स्वच्छता को प्राथमिकताओं की सूची में सबसे ऊपर रखना होगा। उन्होंने गंदगी-भरे इस सत्य की चुनौती को स्वीकार किया और 'स्वच्छ भारत अभियान' के अंतर्गत देश को खुले में शौच से मुक्त करने का बीड़ा उठाया। गांधी के समान ही प्रधानमंत्री मोदी का 'स्वच्छता एवं स्वच्छ पर्यावरण' का समर्थन, इनकी नीतियों एवं कार्य-शैली में स्पष्ट प्रतिबिंबित होता है। गाँधी की तरह इनका भी मानना है कि स्वच्छता-सुविधाओं की उपलब्धता लोगों को विशेषकर स्त्रियों एवं गरीबों को सशक्त बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। एक ऐसे व्यक्ति के रूप में, जिसने सुलभ-स्वच्छता-आंदोलन के द्वारा भारत को खुले में शौच से मुक्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, मेरा विचार है कि यह पहली सरकार है, जिसने इस तथ्य को महसूस किया कि सब समस्याओं में से अस्वच्छता की समस्या को सबसे अधिक नजरअंदाज किया गया है, जिससे साधारण व्यक्ति त्रस्त है और जो उनके स्वास्थ्य और अर्जित संपति को बुरी तरह प्रभावित करती है। इसके साथ ही शौचालयों का अभाव महिलाओं के सम्मान एवं निजता को भी खतरे में डालता है। खुले में किए गए शौच से कॉलरा एवं डायरिया-जैसे रोगों का संक्रमण भी होता है। वर्तमान में कोरोना वैश्विक महामारी से विश्व ग्रसित है, इस वैश्विक महामारी से भारत देश अछूता नहीं है। यहाँ पर इस बीमारी के बचाव के लिए देश के प्रत्येक हिस्से में सम्पूर्ण लाकडाउन किया गया, इस दौरान देश के अलग-अलग बड़े शहरों से मजदूरों का बीमारी के भय तथा काम-काज के बन्द हो जाने के कारण उनका अपने गांवों की तरफ लगातार घर जाने का पलायन हुआ है। लाकडाउन 01, 02, 03 एवं 04 के दौरान देश के समस्त वर्गों के मदद के लिए 20 लाख करोड़ रुपये के प्रावधाव किये गये हैं, जिसका वितरण केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों के सहयोग से किया गया है, जिससे आम जनता तक इस बजट लाभान्वित किया जा सके, इसके अलावा भू-जल के संपर्क में आने से कॉलरा और एन्सेफलाइटिस-जैसे रोग बरसात के मौसम में प्रायः होते ही रहते हैं, किंतु इससे अधिक खतरनाक है, ऐसे किसी स्थान पर जन्म लेना और बड़ा होना, जहाँ खुले में शौच की प्रथा आमतौर पर अधिक हो, क्योंकि ऐसे हालात में मल आदि के कीटाणु पेट में लगातार पहुंचते रहते हैं, जिनके कारण एंटेरोपैथी-जैसे रोग होते हैं, जिसके प्रभाव से शरीर पोषक-तत्त्वों का शोषण नहीं कर सकता। इससे स्पष्ट होता है कि आय के बढ़ने और पोषक-तत्त्वों सहित आहार लेने के बावजूद भारत में कुपोषित बच्चों की संख्या में कमी आने की दर कम है। यूनिसेफ/डब्ल्यू.एच.ओ. एवं अन्य सर्वे रिपोर्ट के अनुसार, भारत

में रहने वाले पचास प्रतिशत बच्चे कुपोषण के शिकार हो जाते हैं।

शोध का उद्देश्य–

1. स्वच्छता अभियान में सामाजिक संगठनों की भूमिका का पता लगाना।
2. स्वच्छता अभियान में आने वाली समस्याओं की जानकारी प्राप्त करना।
3. कूड़ा कचड़ा एवं गंदगी के निदान में सामाजिक संगठनों की भूमिका का पता लगाना।
4. कोरोना एक वैश्विक महामारी है इसके प्रति आम लोगों को जागरूक होने की आवश्यकता है।
5. इस बीमारी के बचाव के लिए सोशल डिस्टेंसिंग रखना और चेहरे पर मॉस्क पहनने की नितान्त आवश्यकता है क्योंकि इस बीमारी की आज दिनांक तक किसी प्रकार की बैक्सीन अभी तक उपलब्ध नहीं है।
6. यह एक खतरनाक बीमारी है जिससे सम्पूर्ण विश्व परेशानी के दौर से गुजर रहा है।
7. सामाजिक संगठनों की समाज में उपादेयता और प्रभावशीलता की जानकारी प्राप्त करना।
8. सामाजिक संगठनों के कारण समाज में आये परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त करना।

निदर्शन पद्धति– शोध पत्र अध्ययन को स्वरूप देने के लिए उद्देश्यपरक निर्देशन के अन्तर्गत रीवा शहर का चयन किया गया। रीवा शहर के शहरी इलाकों में निवास कर रहे 50 लोगों का चयन निदर्शन के माध्यम से किया गया है।

शोध उपकरण–

प्रश्नावली– अध्ययन को स्वरूप प्रदान करने के लिए रीवा के शहरी क्षेत्रों में निवास कर रहे लोगों से प्रश्नावली के माध्यम से उनकी राय और विचारों को जानने के प्रयास किया गया है। तथ्य संकलन के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया है। जिसके माध्यम से प्रतिभागियों के विचारों को भी शोध में शामिल किया गया है।

अनुसूची- कुछ प्रतिभागियों को प्रश्नावली समझने में समस्या होने के कारण, उनसे राय और विचार जानने के लिए प्रश्नावली का उपयोग यहाँ अनुसूची के रूप में भी किया गया है।

तथ्य विश्लेषण एवं आंकड़ों का प्रस्तुतिकरण–

प्रस्तुत शोध में अध्ययन के माध्यम से यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। समाज में स्वच्छता अभियान की स्थिति, इसकी लोकप्रियता और कार्य पद्धति को केन्द्र में रखकर यह शोध कार्य किया गया है। तथ्यों और आंकड़ों को प्रश्नावली, अनूसूची के माध्यम से एकत्रित कर उनका विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत शोध रीवा शहरी क्षेत्र में रहने वाले नागरिकों पर विशेष रूप से केन्द्रित है। अध्ययन में महिला एवं पुरूष नागरिकों को शामिल किया गया है। जिनमे विषय से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई है। तथ्य संकलन हेतु पचास से अधिक प्रश्नावली, अनुसूची को भरवाया गया है। लेकिन तथ्य विश्लेषण में पचास प्रतिभागियों के मतो को शामिल किया गया है। तथ्य संकलन का कार्य फरवरी 2020 में किया गया है।

साक्षात्कार अनुसूची में कुल 05 प्रश्नों को शामिल किया गया है। साक्षात्कार

अनुसूची में बहुविकल्पीय प्रश्नों के माध्यम से प्राप्त तथ्यों को अध्ययन हेतु केन्द्र में रखा गया है। साक्षात्कार अनुसूची में विकल्प के रूप मे हॉ, नही और पता नही को तथ्य संकलन हेतु आधार बनाया गया है। जो इस प्रकार है-

तालिका क्रमांक-01

क्या आप आपने शहर के ओडीएफ की स्थिति के बारे में जानते हैं?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	50	33	66
2	नही	50	12	24
3	पता नही	50	05	10
योग –		50	50	100

उक्त तालिका से ज्ञात होता है कि रीवा शहर के ओडीएफ की स्थिति के बारे में जानते है, में कुल न्यादर्शो की संख्या 50 में से 33 (66 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ओडीएफ के बारे में जानते है। 12 (24 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा के ओडीएफ की स्थिति के बारे में नही जानते है, 05 (10 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि रीवा शहर शिक्षित होने के कारण ओडिएफ के सम्बंध में जानकारी रखते है।

तालिका क्रमांक-02

क्या आपसे कूड़ा लेने आने वाला व्यक्ति हमेशा सूखा और गीला कूड़ा अलग-अलग करके देने के लिए कहता है?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	50	35	70
2	नही	50	12	24
3	पता नही	50	03	06
योग –		50	50	100

उक्त तालिका से ज्ञात होता है कि रीवा शहर के कूड़ा लेने आने वाला व्यक्ति हमेशा सूखा और गीला कूड़ा अलग-अलग करके देने के लिए कहता है। कुल न्यादर्शो की संख्या 50 में से 35 (70 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा कूड़ा लेने आने वाला व्यक्ति हमेशा सूखा और गीला कूड़ा अलग - अलग करके देने के लिए कहता है। 12 (24 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा के कूड़ा लेने आने वाला व्यक्ति हमेशा सूखा और गीला कूड़ा अलग - अलग करके देने के लिए नही कहता है। 03 (06 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि रीवा शहर के लोगों में जागरूकता होने के कारण कूड़ा लेने आने वाला व्यक्ति हमेशा सूखा और गीला कूड़ा अलग - अलग करके देने के लिए कहता है।

तालिका क्रमांक-03

स्वच्छता अभियान के तहत कचरा परिवहन के लिये वाहन का प्रयोग किया जा रहा है?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शों की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	50	40	80
2	नही	50	08	16
3	पता नही	50	02	04
योग –		50	50	100

उक्त तालिका से ज्ञात होता है कि रीवा शहर के स्वच्छता अभियान के तहत कचरा परिवहन के लिये वाहन का प्रयोग किया जा रहा है में कुल न्यादर्शो की संख्या 50 में से 40 (80 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा स्वच्छता अभियान के तहत कचरा परिवहन के लिये वाहन का प्रयोग किया जा रहा है। 08 (16 प्रतिशत) स्वच्छता अभियान के तहत कचरा परिवहन के लिये वाहन का प्रयोग नही किया जा रहा है। 02 (04 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि रीवा शहर के लोगों में जागरूकता होने के कारण स्वच्छता अभियान के तहत कचरा परिवहन के लिये वाहन का प्रयोग किया जा रहा है।

तालिका क्रमांक-04

क्या आप कोरोना वायरस के बारे में जानते हैं?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शों की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	50	27	54
2	नही	50	16	32
3	पता नही	50	07	14
योग –		50	50	100

उक्त तालिका से स्पष्ट होता है रीवा शहर में कोरोना वायरस के बारे मे जानते है में कुल न्यादर्शो की संख्या 50 में 27 (54 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा कोरोना वायरस के बारे में जानते है। 16 (32 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा कोरोना वायरस के बारे में नही जानते है। 07 (14 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। इससे स्पष्ट होता है कि रीवा शहर के लोग कोरोना महामारी के बारे में जानते है।

तालिका क्रमांक-05

कोरोना वायरस किस बीमारी से सम्बन्धित है?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शों की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	वायरस	50	25	50
2	फ्लू	50	18	36
3	पता नही	50	7	14
योग –		50	50	100

उक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कोरोना वायरस किस बीमारी से सम्बन्धित है में कुल न्यादर्शो की संख्या 50 में से 25 (50 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा कोरोना

(कोविड-19) किस बीमारी से सम्बन्धित है के बारे मे जानते है। 18 (36 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा कोरोना किस बीमारी से सम्बन्धित है, के बारे में नही जानते है। 07 (14 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि रीवा शहर के नागरिकों में कोरोना किस बीमारी से सम्बन्धित है के बारे में जानकारी है।

निष्कर्ष– प्राप्त तथ्यों के अनुसार 54 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि आपने शहर के ओडीएफ की स्थिति के बारे में जानकारी है। 70 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि कूड़ा लेने आने वाला व्यक्ति हमेशा सूखा और गीला कूड़ा अलग-अलग करके देने के लिए कहता है। 80 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि स्वच्छता अभियान के तहत कचरा परिवहन के लिये वाहन का प्रयोग किया जाता है। 54 प्रतिशत उत्तरदाता कोरोना वायरस के बारे में जानते है। 50 प्रतिशत नागरिकों का मानना है कि कोरोना वायरस किस बीमारी से सम्बन्धित है, के बारे में जानते है।

सुझाव–

1. स्वच्छता अभियान के माध्यम से लोगों की भागीदारी और जन जागरूकता फैलाने की आवश्यकता है।
2. कोरोना महामारी से बचाव के लिए सामाजिक दूरी, मास्क, सेनेटाइजर का उपयोग करना आवश्यक है।
3. कोरोना महामारी से बचाव के लिए स्वच्छता आवश्यक है।
4. स्वच्छता अभियान की सफलता के लिए सरकार की भागीदारी होना आवश्यक है।
5. स्वच्छता अभियान को सफल बानने के लिए मीडिया को जोड़ने की आवश्यकता है।
6. स्वच्छता अभियान चला कर शहर के लोगों को जोड़ने की चाहिए।
7. स्वच्छता अभियान जन जागरूकता फैलाने के लिए शार्ट फिल्म, पोस्टर, वैनर, चित्र आदि दिखाकर शहर के लोगों को अपने आस - पास साफ स्वच्छ रखने का सन्देश देने की आवश्यकता है।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. योजना अक्टूबर 2019
2. कुरुक्षेत्र जनवरी 2020
3. दैनिक जागरण रीवा माह मार्च 25.03.2020 से 15 मई 2020
4. दैनिक भास्कर रीवा माह मार्च 30.03.2020 से 18 मई 2020
5. दैनिक पत्रिका रीवा माह मार्च 19.03.2020 से 22 मई 2020
6. माया पत्रिका माह मार्च 2020

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

गॉधी जी और उनकी अहिंसात्मक दृष्टि

* रिचा मिश्रा

सारांश– *गॉधी जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन स्वतन्त्रता संग्राम के लिए अर्पित कर दिया। रामधारी सिंह दिनकर ने ठीक ही लिखा है ''गॉधी जी अंहिसा'' के प्रयोग पर एक समय सारा संसार हॅसता था और बड़े–बड़े लोग शंका से यह कहकर सिर हिलाया करते थे कि इतिहास में कभी भी अहिंसक क्रातिं नहीं हुई, किन्तु अंहिसा मे जो शक्ति छिपी थी उसे केवल गॉधी जी की दृष्टि देख सकती थी, जिसका व्यावहारिक प्रयोग गॉधी ने कर दिखाया। राष्ट्रीय आन्दोलन में गॉधी के योगदान को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता। यही कारण है कि राष्ट्र ने गॉधी जी को 'राष्ट्रपिता' की संज्ञा से विभूषित किया।*

मुख्य शब्द– अहिंसात्मक दृष्टि, सत्याग्रह, सांकेतिक चिन्ह, शब्दावली

गॉधी जी महान सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक मनीषी थे, किन्तु गॉधी के सत्याग्रह को एक सिद्धान्त के रूप में उसकी व्यावहारिक को लेकर समय-समय पर विभिन्न विद्वानों की विभिन्न प्रतिक्रियाएॅ रही है। यदि कुछ लोगों ने उन्हें 'महात्मा' की उपाधि से विभूषित किया है तो कुछ ने उन्हें एक जिद्दी राजनीतिक कह कर भी पुकारा है।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में गॉधी का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है। गॉधी के नेतृत्व में पराधीन भारत अपनी चिर राजनीतिक निद्रा त्यागकर जाग उठा। उनके जैसी वेशभूषा, उन जैसा आचरण, उन जैसी बोली व शब्दावली उनके सुपरिचित सांकेतिक चिन्ह एवम् रीति-रिवाज को अपनाने व अंगीकृत करने वाले अपने समय की उच्चतम कोटि की विदेशी शिक्षा प्राप्त इस राजनीतिक आन्दोलनकर्ता तथा समाज-सुधारक ने जिस सरलता से अपने आपको जनमानस की अपेक्षाओं तथा आकांक्षाओं के अनुरूप ढाल लिया, वह अपने आप में एक ऐसा अनूठा प्रयत्न था जिसे सबने सराहा तथा सहर्ष अपनाया।

गॉधी जी के राष्ट्रीय आन्दोलन में प्रवेश से पूर्व से भारत की राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था अत्यन्त दयनीय थी। मुख्यतः गॉधी जी के आह्वान पर प्रथम विश्व युद्ध में भारतीयों ने तन-मन-धन से अंग्रेजों की सहायता की। क्रांतिकारियों को छोड़कर, अन्य सभी राजनितिज्ञों तथा दलों ने दिल खोलकर ब्रिटेन की विजय के लिए युद्ध में भाग लिया। गॉधी की सत्याग्रह की अवधारणा को विभिन्न दार्शनिकों, धर्मो एवं कृतियों ने प्रभावित किया। 'सत्याग्रह' शब्द की उत्पत्ति रंगभेद की नीति तथा दिखावे के सन्दर्भ में हुई और उसका विकास भारत के स्वराज सघर्ष के संदर्भ

=========================

* एम.फिल. (राजनीति विज्ञान) रीवा, मध्यप्रदेश

में हुआ।

'सत्याग्रह' शब्द 'सत्य' तथा आग्रह शब्दों की संधि से बना है, जिसका अर्थ है सत्य के लिए दृढ़तापूर्वक आग्रह करना। यदि कोई व्यक्ति स्वार्थरहित होकर निष्पक्ष रूप से विचार करने के पश्चात किसी विचार या सिद्धान्त का सत्य मानता है तो कष्टों तथा कठिनाइयों की चिन्ता किए बिना उसे इसी सिद्धान्त अथवा विचार के अनुरूप दृढ़तापूर्वक आचरण करना चाहिए और इसमें बाधा डालने वाले व्यक्तियों तथा संगठनों का अहिसांत्मक उपायों द्वारा सक्रिय रूप से प्रतिरोध करना चाहिए। इस प्रकार भय तथा प्रलोभन से प्रभावित हुए बिना स्वयं कष्ट सहन करते हुए केवल अहिसांत्मक उपायों की सहायता से सदैव सत्य पर दृढ़ रहना और मन, वचन तथा कर्म से उसी के अनुसार आचरण करना सत्याग्रह है। गॉधी जी ने सत्याग्रह को इसी व्यापक रूप से स्वीकार किया और व्यापक अर्थ में वे पर्याप्त समय तक दक्षिण अफ्रीका तथा भारत में सत्याग्रह का प्रयोग करते रहे।

गॉधी जी सत्य को सर्वाधिक महत्व देते थे और इसी कारण वे सत्य को ईश्वर की संज्ञा देते थे। उनका सत्याग्रह का समूचा दर्शन इसी दृढ़ सत्य निष्ठा का परिणाम था।[1] सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में अन्याय तथा अत्याचार के विरूद्ध सत्याग्रह करने की प्रेरणा गॉधी जी को सम्भवतः हेनरी थोरो के 'सिविल डिसओबिडिएंस' नामक निबन्ध से प्राप्त हुई थी।[2] बाद में उन्होनें अपने व्यापक अनुभव तथा अपनी दार्शनिक मान्यताओं के आधार पर सत्याग्रह के सिद्धान्त को अधिक विकसित एवं परिष्कृत किया।

नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों के लिए संघर्ष करने का अजेय संकल्प तथा साहस होना चाहिए तभी वह अपनी सच्ची नैतिक भावना का प्रमाण दे सकता है।[3] गॉधी जी के अनुसार सत्याग्रह मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है।[4] यह पवित्र अधिकार ही नहीं अपितु पुनीत कर्तव्य भी है। यदि सरकार जनता का प्रतिनिधित्व नही करती और बेईमानी तथा आंतकवाद का समर्थन करती है तो उसकी अवज्ञा करना आवश्यक हो जाता है।

सब प्रकार के अन्याय, उत्पीड़न और शोषण के विरूद्ध शुद्धतम आत्मबल का प्रयोग ही सत्याग्रह है।[5] कष्ट सहन तथा विश्वास आत्मबल के गुण है। 'तेजस्वी दीन' के सक्रिय अहिसांत्मक प्रतिरोध का हृदय पर तत्काल प्रभाव होता है।

गॉधी जी जिस सत्याग्रह की कल्पना की वह सामाजिक तथा राजनीतिक विघटन का सूत्र नही था। सत्याग्रही वही हो सकता है जिसने पहले स्वेच्छा से बुद्धिमानी के साथ और स्वतः राज्य के कानूनों का पालन किया हो।

इण्डियन ओपियन में गॉधी जी ने लिखा था कि सत्याग्रह की विधि से लड़ने वालों के मार्ग को बाहरी कारणों से विल्कुल अड़चन नही आ सकती । उनके लिए तो केवल उनकी अपनी कमजोरी ही बाधक होती है।[6]

गॉधी जी का कहना था कि सत्याग्रह में सत्य का आग्रह, सत्य का बल होना चाहिए, अर्थात उसके केवल सत्य पर ही निर्भर रहना चाहिए। सत्याग्रह कोई गाजर की पीपनी नही है कि वह बजेगी तो बजाएँगे और नही तो खॉ जायेगें।[7] ऐसा मानने वाला व्यक्ति भटक-भटक कर परेशान ही होता रहेगा। यह बिल्कुल बेकार है कि सत्याग्रह की बड़ाई वही व्यक्ति करता है जिसमें शरीर बल की कमी हो अथवा जो यह मानता हो कि शरीर-बल काम नही देता, इसलिए मजबूरन सत्याग्रही बनना पड़ता है। सत्याग्रह शारीरिक

बल में मुख्य बात यह है कि शक्तिशाली पुरूष अपने शरीर की परवाह न करके संग्राम में जूझता है, अर्थात वह डरपोक नही होता। सत्याग्रही तो अपने शरीर को कुछ भी नही गिनता। वह डर तो सकता ही नही। इसीलिए वह न तो बाहरी हथियार का सहारा लेता है और न ही मौत से डरता है।

गॉधी जी ने सर्वप्रथम जब 1906 में दक्षिण अफ्रिका में गोरे शासकों के अन्याय, अत्याचार तथा सर्वाजनिक दिखावे के विरूद्ध अपना अहिसांत्मक आन्दोलन आरम्भ किया था तो उस समय उन्होनें उस आन्दोलन का 'पैसिवरेजिस्टेंस' का नाम दिया, किन्तु बाद में उन्होनें सोचा कि उनके आन्दोलन की यह नाम उचित नही है। इसका कारण था कि पाश्चात्य देशों से निष्क्रिय प्रतिरोध (पैसिवरेजिस्टेंस) को केवल असहाय और दुर्बल व्यक्तियों का हथियार माना जाता जिसका वे अपने कष्ट-निवारण के लिए शक्तिशाली व्यक्तियों का विरोध न कर सकने की अवस्था में करते थे।

गॉधी जी सत्याग्रह को जीवन का मार्ग मानते थे। उनका कहना था कि मेरे लिए सत्याग्रह का नियम अर्थात प्रेम का नियम शाश्वत सिद्धान्त है। मै अच्छाई के साथ सहयोग करता हूँ तथा बुराई के साथ असहयोग। इस सन्दर्भ में गॉधी जी ने सत्याग्रह का प्रयोग करने वाले अर्थात सत्याग्रही के लिए कुछ नियम निर्धारित किए है, जिसका पालन उसे दैनिक जीवन में अनिवार्य रूप से करना चाहिए।

सत्याग्रह की उपर्युक्त आधारभूत मान्यताओं के अतिरिक्त गॉधी सत्याग्रही की आत्मशुद्धि को भी बहुत आवश्यक मानते थे, अतः अन्याय, अत्याचार, शोषण तथा ढोंग जैसी बुराइयों के विरूद्ध सत्याग्रह करने से पूर्व स्वयं सत्याग्रही को इन बुराइयों से मुक्त हो जाना चाहिए। यदि सत्याग्रही स्वयं इन बुराइयों से मुक्त नही है तो वह सत्याग्रह द्वारा अपने विरोधी को कभी प्रभावित नही कर सकता। इसके अतिरिक्त, सत्याग्रह की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि सत्याग्रही अपने देश अथवा समाज की निःस्वार्थ भाव से सेवा करे और उसके कल्याण के लिए अपने देश अपने जीवन तक का बलिदान करने को तैयार रहे। परन्तु यह सब वह तभी कर सकता है जब उसमें सत्य व अंहिसा के प्रति निष्ठा, आत्मानुसरण की भावना, समग्र नैतिक आचरण की अनिर्वायता में आस्था, आत्मत्याग, आत्म-संयम आचरण की पवित्रता, निर्भयता, एवं प्राणी मात्र के प्रति स्नेह एवं करूणा जैसे सदुगुण हों।

गॉधी जी ने सत्याग्रह के माध्यम से विश्व को संदेश दिया है कि अन्याय व अत्याचार को चुपचाप सहन करना ईश्वर एवं मानवता के प्रति अपराध है। अतः जहॉ अन्याय होता है उसका विरोध अवश्य सत्य एवं अंहिसा के आधार पर करना चाहिए, इनके लिए चाहे मृत्यु का भी अलिगंन क्यों न करना पड़े। गॉधी जी मृत्यु से नही डरते थे, उनका कहना था कि सत्याग्रह के सम्बन्ध में अपने सत्य का आग्रह रखते हुए अनायास सत्याग्रही मृत्यु का आलिंगन करे, इसमें अधिक मंगलमय परिणाम की कल्पना वह कर ही नहीं सकता।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. वेद प्रकाश वर्मा, महात्मा गॉधी का नैतिक दर्शन, दिल्ली' बी0 एल0 प्रिटर्स 1979,142
2. वही, पृ0 142

3. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, आगराः लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, 1988-59
4. यंग इण्डिया, जनवरी 5,1922
5. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा, उपरोक्त सं0 5, 359
6. सम्पूर्ण गॉधी वाड्मय, दिल्लीः निर्देशक प्रकाश विभाग द्वारा प्रकाशित, 1962, प 25
7. सम्पूर्ण गॉधी वाड्मय, दिल्लीः निर्देशक प्रकाश विभाग द्वारा प्रकाशित, 1962,प 227

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

रीवा जिले में लोक अदालतों की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

* एस.पी. सिंह
** सविता मिश्रा

सारांश– *वैकल्पिक न्याय परिदान के अन्तर्गत मध्यप्रदेश विधिक सेवा प्राधिकरण, 1987 के आधीन समय समय पर रीवा जिले में भी स्थायी तथा अस्थायी लोक अदालतों का आयोजन किया जाता रहा। लोक अदालतों के सुनवाई की प्रक्रिया नियमित न्यायालयों की अपेक्षा सस्ती, सुलभ तथा त्वरित होती है। इसके अन्तर्गत किसी पक्षकार की जीत हार नही होती है तथा पक्षकारों के सहमति के आधार पर समझौता किया जाता है जिससे दोनो पक्ष खुसी–खुसी स्वीकार कर लेते है। 2013 से 2020 तक विभिन्न प्रकृति के मामले यथा बिजली विल, बीमा, बैंकिंग, चिकित्सा, पारिवारिक मामले, शमनीय अपराध वाले मामले व अन्य प्रकृति के समय समय पर लोक अदालतों द्वारा निपटारा किया जाता रहा है।*

मुख्य शब्द– लोक अदालत, पक्षकार, पारिवारिक मामले, बीमा, बैंकिंग

शोध का उद्देश्य–

1. लोक अदालत के क्रियाविधि का अध्ययन।
2. लोक अदालतों द्वारा प्रदान की जाने वाली सहायता।
3. लोक अदालतों के प्रति लोगों के दृष्टिकोण का अध्ययन।

शोध का क्षेत्र एवं प्रविधि–

प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु रीवा जिले के स्थानीय क्षेत्राधिकाार में आयोजित लोक अदालतों के द्वारा किये गये कार्यो का चयन किया गया है। अध्ययन में मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों समस्याओं को सम्मिलित करते हुए प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों के द्वारा विश्लेषणात्मक विधि द्वारा पूर्ण किया गया है। प्राथमिक आंकड़े निहित प्रश्नावली द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से प्रयोजित विधि द्वारा प्राप्त किये गये है जबकि द्वितीयक आंकड़े जिला एवं सत्र न्यायालय रीवा, भोपाल, विधिक सेवा प्राधिकरण केन्द्र जबलपुर तथा अन्य स्रोतों से प्राप्त किये गये हैं।

अध्ययन क्षेत्र– रीवा जिला भारत के मानचित्र में $24^{0}32'$ उत्तरी अक्षांश तथा $81^{0}24'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 1045 फिट है। इस जिले

* प्राध्यापक, विधि, शासकीय विधि महाविद्यालय रीवा, मध्यप्रदेश
** शोध छात्रा, विधि, अवधेश प्रताप सिंह महाविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश

के दक्षिण पूर्व की ओर बिछिया और दक्षिण पश्चिम से आती हुई बीहर नदी है। रीवा नगर पूर्व रीवा रियासत की राजधानी रहा है। रीवा जिले के कुल जनसंख्या 2363744 है। जिसमें पुरुषों की संख्या 1224918 तथा महिलाओं की संख्या 1138826 है। यहाँ पुरुष और महिलाओं का अनुपात लगभग 1000: 930 है।

रीवा जिले में लोक अदालत–

सर्व-साधारण को त्वरित न्याय उपलब्ध कराने के उद्देश्य से न्यायपालिका उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालय, जिला एवं सत्र न्यायालय आदि में खण्डों में बटी है। इस प्रक्रिया के अर्न्तगत उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालय और उसके अधीन अन्य जिला एवं सत्र न्यायालय आदि रखे गये है।

विधि सबके लिए है एवं संविधान के प्रावधानों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता तथा कानून के द्वारा बराबर संरक्षण प्राप्त है। इस दृष्टि से जहां कहीं पक्षकारों के बीच विवाद की स्थिति निर्मित होती है, वहां दोनों पक्ष न्यायालय से न्याय हेतु जाते हैं और अपने-अपने साधनों द्वारा न्यायालय में होने वाले खर्च का वहन करते हैं।

भारत गरीब देश है। अधिकांश जनता गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करती है। इसके साथ ही न्यायालयों में मुकदमों का बोझ कम से कम करने के उद्देश्य से संविधान में वर्णित न्याय संबन्धी उद्देश्यों को प्राप्त करने के प्रयासों से (लोक अदालत) का विचार अस्तित्व में आया। इस प्रकार जनता को सस्ता, सुलभ एवं शीघ्र न्याय दिलाने के उद्देश्य से विधिक सेवा प्राधिकरण, 1987 के अध्याय 6 में धारा 19 से लेकर 22 तक के नियमों के आधार पर लोक अदालत की स्थापना की गई है। इससे छोटे मुकदमों का निपटारा जल्दी, सौहाद्रपूर्ण तरीके से तथा स्थायी रूप से होता है। यह लोक हितवाद के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण प्रयोग है।

लोक अदालत ऐसा मंच है जहां विवादों, अदालत में लंबित मामलो या दायर किये जाने से पहले वादों का आदि का सद्भावना-पूर्ण ढंग से निपटारा किया जाता है। पहली लोक अदालत की शुरूआत 14 मार्च 1982 को जूनागढ़ गुजरात में की गई है एवं इसके जन्मदाता जस्टिस पी. एन. भगवती थे। लोक अदालतों को विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 19 के तहत विधिक दर्जा दिया गया है। लोक अदालत के आयोजन के लिये, लोक अदालत के न्यायिक अधिकारियों और इसमे सम्मीलित किये जाने वाले प्रकरणों के सम्बन्ध में वर्णन किया गया है। राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम के अधीन तीन प्रकार के प्राधिकरण कार्य करते हैं -

1. राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (नालसा) बनाया गया है। इस प्राधिकरण के संरक्षक भारत के मुख्य न्यायाधीश एवं कार्यकारी अध्यक्ष भारत के उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश हैं। इनकी सदस्य संख्या 22 है।
2. राज्य स्तर पर राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण (सालसा) बनाया गया है। राज्य विधिक सेवा प्राधिकारण में कार्यकारी अध्यक्ष के रूप में उच्च न्यायालय के सेवा निवृत्त अथवा सेवारत न्यायाधीश या सदस्य सचिव के रूप में की जाती है। इनकी सदस्य संख्या 15 है।
3. जिला स्तर पर जिला विधिक सेवा प्राधिकरण का गठन किया गया है। जिसके

अध्यक्ष जिला न्यायाधीश हैं और अपर जिला न्यायाधीश स्तर के अधिकारी को जिला प्राधिकरण का सचिव बनाया जाता है। इसकी सदस्य संख्या 08 है।

इस अधिनियम के तहत लोक अदालत द्वारा दिये गये निर्णय को वही मान्यता प्राप्त है, जो कि दीवानी न्यायालयों की फैसले का होता है। वह अंतिम एवं सभी पक्षों पर बाध्यकारी होता है और उसके विरूद्ध कोई अपील नही की जा सकती है।

लोक अदालत का सिद्धान्त लोगों के विवादो को बातचीत से, सहमति से, समझा-बुझाकर और सान्त्वना देकर सुलझाने पर बल देता है और लोगों की इच्छानुसार जल्दी और किफायती तरीके से न्याय दिलाता है। संक्षेप में लोक अदालत का सिद्धान्त जल्दी और सस्ते तरीके से न्याय दिलाना है।

वर्तमान समय में मध्यप्रदेश में प्रत्येक जिलों मे लोक अदालतों की संख्या बढ़ती जा रही है और इसमे लिये जा रहे निर्णय भी कारगर साबित हो रहे है। मध्यप्रदेश के अन्य जिलों की भांति रीवा जिले में भी लोक अदालतों का आयोजन समय समय पर होता रहा है।

रीवा जिले में लोक अदालतों द्वारा किये गये कार्य-

रीवा जिले में लोक अदालत विधिक सेवा प्राधिकरण, 1987 की धारा 19 के तहत आयोजित की जाती है इसमें सामान्य रूप से निम्न प्रकार के मामले आते रहे है -

1. वैवाहिक मामले पारिवारिक मामले
2. आपराधिक मामले जो बढ़ सकते है
3. भूमि अधिग्रहण संबंधी मामले
4. श्रम विवाद
5. मुआवजा सम्बन्धी
6. कामगारों को मुआवजा सम्बन्धी
7. गैर वसूली मामले
8. पेंशन संबंधी मामले
9. ऋण मामले
10. आवास बोर्ड एवं मलीन बस्ती
11. निपटारा मामले
12. उपभोक्ता शिकायत मामले
13. बिजली संबंधी मामले
14. टेलीफोन बिल के मामले
15. गृहकर सहित नगर पालिका संबंधित मामले।

वैचारिक दृष्टिकोण-

लोक अदालत के संबंध में समाज में रहने वाले विभिन्न वर्ग के लोगों से निहित प्रश्नावली के द्वारा जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया। साक्षात्कार में सभी वर्ग के लोगों की कुल संख्या 100 थी, जिनमें 10 न्यायाधीश, 30 अधिवक्ता, 40 पक्षकार व 20 अन्य व्यक्तियों को सम्मिलित किया गया था। जैसा कि सारणी क्र.01 में प्रदर्शित है।

सारणी क्र.01

क्रमांक	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1	न्यायाधीश	10	10
2	अधिवक्ता	30	30
3	पक्षकार	40	40
4	अन्य	20	20

आरेख क्र.1

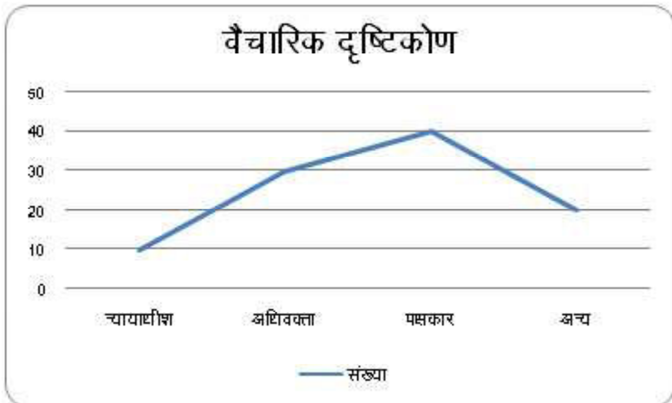

उपर्युक्त सारणी क्र.01 से स्पष्ट होता है कि साक्षात्कार में सम्मिलित कुल व्यक्ति मे से 10 प्रतिशत न्यायाधीश, 30 प्रतिशत अधिवक्ता, 40 प्रतिशत पक्षकार व 20 प्रतिशत अन्य लोग सम्मिलित हुए। साक्षात्कार में सम्मिलित सभी व्यक्तियों मे से न्यायाधीश को छोड़कर सभी जानकारी दैव निदर्शन विधि द्वारा प्राप्त की गई।

विभिन्न प्रकार के लोगों से साक्षात्कार लेने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि पक्षकारों का लोक अदालत के प्रति जागरूकता का शिक्षा या स्थान से उतना गहरा संबंध नही है। सभी स्थानों में विभिन्न प्रकृति के वाद लाने वाले पक्षकार इतना अवश्य जानते है कि लोग समय समय पर लोक अदालतों का आयोजन किया जाता है। अधिवक्ताओं के सतत सम्पर्क में रहने वाले व्यक्ति स्वाभाविक रूप से लोक अदालत के प्रति अधिक जागरूक हैं। न्यायाधीशों का मत लोक अदालत के प्रति काफी सकारात्मक है उनका मानना है कि लोक अदालत के कार्यशील होने के कारण न्यायालयों के मामलों का बोझ काफी हद तक कम हुआ है जिससे वो अन्य विशिष्ट मामलों में ध्यान दे पाते हैं। अधिवक्ताओं का मत भी लोक अदालत के प्रति सकारात्मक है। इनके अनुसार लोक अदालत के द्वारा किये गये समझौतों के कारण पक्षकारों के बीच आपसी वैमनस्य काफी कम होता है तथा पारिवारिक मामले व दाम्पत्य अधिकर संबंधी मामलों में लोग प्रसन्नतापूर्वक साथ साथ जीवन व्यतीत करते हैं।

शोधार्थी द्वारा लिये गये साक्षात्कार में कुछ ऐसे व्यक्ति भी मिले जिन्हे लोक अदालत के संबंध में कोई जानकारी नही थी न ही इसके संबंध में जानने के लिये उत्सुक ही थे ऐसे व्यक्तियों की उदासीनता को विधिक साक्षरता के द्वारा दूर किया जाना आवश्यक है।

प्रभावित पक्षकारों का अध्ययन–

लोक अदालत मंच के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिये उन पक्षकारों का अध्ययन निहित प्रश्नावली द्वारा किया गया जिनके मामले लोक अदालत में समझौता हेतु प्रेषित किया गया था। साक्षात्कार में सभी प्रकार के पक्षकारों को शामिल किया गया ऐसे पक्षकार जो स्वयं लोक अदालत में उपस्थित हुए या अपने अभिकर्ता/अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित हुए।

प्रभावित पक्षकरों का अध्ययन करने पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए-

1. ऐसे पक्षकार जो लोक अदालत की क्रियाविधि से संतुष्ट व खुश थे।
2. ऐसे पक्षकार जिनका लम्बे समय से नियमित न्यायालयों में मामला चल रहा था जो कि उससे ऊब चुके थे उनके लिए लोक अदालत काफी राहत भरा रहा।
3. ऐसे पक्षकार जो लोक अदालत के निर्णय से संतुष्ट नही हैं।

ऐसे पक्षकार जिनके मामले न्यायालय में लम्बे समय से चल रहे थे जिनका वाद करण तुच्छ था या ऐसे पक्षकार जिनका व्यवसाय, कृषि, नौकरी व मजदूरी थी तथा वह मुख्यालय से दूर निवास करते थे, ऐसे पक्षकार लोक अदालत द्वारा शीघ्र, सस्ती, सुगम प्रक्रिया मामले को निपटाये जाने से काफी खुश व राहत महसूस कर रहे हैं।

रीवा लोक अदालत की आनलाईन सुनवाई–

5 जुलाई 2020 को रीवा जिले में आनलाईन विशेष लोक अदालत का आयोजन रीवा न्यायालय के साथ साथ तहसील न्यायालय सिरमौर, त्योंथर, मऊगंज एवं हनुमना में किया गया। रीवा न्यायालय में 02 खण्डपीठ तथा तहसील न्यायालयों में कुल 07 खण्डपीठें गठित की गई थी।2 आनलाईन विशेष लोक अदालत का आयोजन जिला एवं सत्र न्यायाधीश मान्नीय अरुण कुमार सिंह जी ने किया।

सारणी क्र.02

खण्डपीठों की संख्या	प्रकरण	प्रकरणों की संख्या	लाभान्वित व्यक्तियों की संख्या	समझौता राशि (रु.) में
09	मोटर क्लेम	21	42	**2788000**
	दाण्डिक प्रकरण	03		
	सिविल प्रकरण	02		
	चेक बाउंस	06		
	अन्य प्रकरण	02		
कुल		**34**		**2788000**

आरेख क्र.2

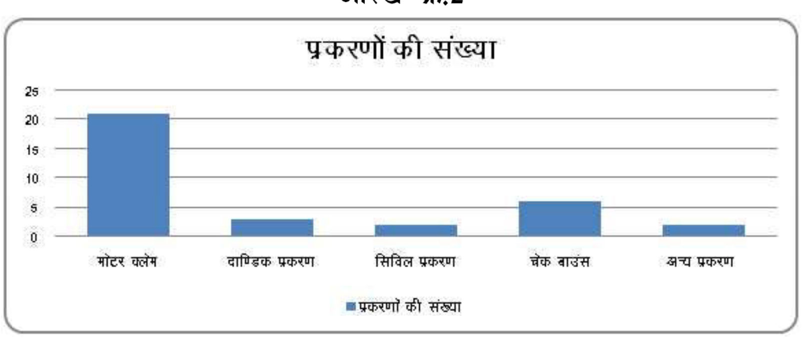

रीवा जिला विधिक सेवा प्राधिकरण रीवा द्वारा 5 जुलाई 2020 को ऑनलाइन विशेष लोक अदालत का आयोजन किया गया। ऑनलाइन लोक अदालत में मोटरयान संबंधी क्लेम के 21 प्रकरण में 42 व्यक्ति लाभांवित हुए। दांडिक प्रकरण 03, सिविल प्रकरण 02, चेक बाउंस प्रकरण 06 एवं 02 अन्य प्रकरण समेत कुल 34 प्रकरणों का निराकरण आपसी सुलह समझौते से किया गया एवं कुल समझौता राशि 2788000 के अवार्ड पारित किया गया।

निष्कर्ष– रीवा में आयोजित लोक अदालत अत्याधिक सफल रहा है। यहाँ समय समय पर सर्वाधिक मामलों को निराकृत किया गया है। सर्वाधिक मामले विद्युत विभाग, बीमा कंपनी, मोटरयान क्लेम, पारिवारिक मामले, दाम्पत्य संबंधी मामले, चेक संबधी मामले लोक अदालत के द्वारा निराकृत किये गये। लोक अदालत के रूप में पक्षकारों को एक ऐसा मंच प्राप्त हो गया है जहाँ उन्हे सस्ता, सरल एवं त्वरित न्याय प्राप्त हो जाता है। रीवा जिला में आयोजित होने वाले लोक अदालत पीठ के समझौता दर शत प्रतिशत रहा।

भारत में लम्बे समय से कार्य के बोझ के तले दबी पारम्परिक न्याय व्यवस्था के कारण देश में अधीनस्थ न्यायालयों में ही दो करोड़ से अधिक मामलों का अम्बार लगा है। भारत के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक परिदृश्य पर न्याय में हो रही देरी तथा कार्य के पड़ते बोझ का दुष्प्रभाव बढ़ता जा रहा है। इसके अलावा पारम्परिक न्याय व्यवस्था लम्बी, उबाऊ एवं खर्चीली हो रही है। जिससे न्याय सामान्य व्यक्ति से दूर होता जा रहा है। इसलिये आज वैकल्पिक न्याय व्यवस्था लोक - अदालत के माध्यम से की जाना आवश्यक है।

लोक अदालत के माध्यम से मामले की पूरी प्रक्रिया के दौरान पक्षकारों का अपने मामले पर पूर्ण नियंत्रण रहता है। विवादों के निराकरण में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया सरल एवं सस्ती होती है। इसमें चूंकि पक्षकार मामले के निराकरण में आपसी विचार - विमर्श द्वारा सहमत होते हैं। वैकल्पिक न्याय व्यवस्था को विकसित करने में विधिशास्त्री, समाजशास्त्री सभी का योगदान हो।

लोक अदालतों का उपयोग समाज को सुविधा एवं न्याय प्रदान करने के लिए किया जाना चाहिए न कि मात्र प्रकरणों की संख्या कम हो।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि लोक-अदालतों का आयोजन कर बहुसंख्यक वादों को निपटाया जा सकता है।

===================

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. विधिक सेवा प्राधिकरण, 1987
2. https://www.patrika.com/rewa-news/online-special-lok-adalat-award-passed-in-34-cases-6245261/
3. जिला विधिक सहायता अधिकारी अभय कुमार मिश्र जी से प्राप्त जानकारी
4. श्रीमती सुखवंती , प्र.क्र. 211/16
5. रामेश्वर मिश्रा, उम्र 24 वर्ष, प्र.क्र. 32/2019
6. मो. इस्लाम, एम.एल.एल.बी., अधिवक्ता, अनुभव 10 वर्ष
7. कामता प्रसाद पुत्र चन्द्रवली, उम्र 45 वर्ष
8. रावेन्द्र प्रसाद पुत्र चन्द्रवली उम्र 40 वर्ष

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

गुप्त युग की वेशभूषा

* चन्द्रमौलि शुक्ल

सारांश– *लगभग 275 ईसवी में श्री गुप्त द्वारा राजवंश की स्थापना की गई थी, गुप्त राजवंश ने 550 ईसवी तक भारत के विस्तृत भू भाग में शासन किया, उनका लगभग 275 वर्ष का शासन काल उनकी उपलब्धियों के कारण स्वर्ण युग के नाम से भी जाना जाता है, यह युग आर्थिक संपन्नता, सांस्कृतिक वैभव, संस्कृत भाषा साहित्य के विकास, कला की उन्नति के लिए जाना जाता है। गुप्त युग भारतीय वेश भूषा के इतिहास में बहुत अधिक महत्व रखता है, इस काल के लोग सम्पन्न होने के साथ साथ सौन्दर्य प्रिय भी थे, अपने वस्त्र आभूषण तथा वेश भूषा के प्रति विशेष ध्यान देते थे, गुप्त युग की वेशभूषा की जानकारी तत्कालीन साहित्य, तथा पुरातात्विक स्रोतों से प्राप्त होती है।*

मुख्य शब्द– आर्थिक संपन्नता, सांस्कृतिक वैभव, संस्कृत भाषा, साहित्य, पुरातात्विक स्रोत

लगभग 275 ईसवी में श्री गुप्त द्वारा राजवंश की स्थापना की गई थी, गुप्त राजबंश ने 550 ईसवी तक भारत के विस्तृत भू भाग में शासन किया, उनका लगभग 275 वर्ष का शासन काल उनकी उपलब्धियों के कारण स्वर्ण युग के नाम से भी जाना जाता है, यह युग आर्थिक संपन्नता, सांस्कृतिक वैभव, संस्कृत भाषा साहित्य के विकास, कला की उन्नति के लिए जाना जाता है, डॉ. मोतीचंद्र ने लिखा है ''सांस्कृतिक दृष्टिकोण से गुप्तयुग भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग माना जाता है''।[1] गुप्त युग भारतीय वेश भूषा के इतिहास में बहुत अधिक महत्व रखता है, इस काल के लोग सम्पन्न होने के साथ साथ सौन्दर्य प्रिय भी थे, अपने वस्त्र आभूषण तथा वेश भूषा के प्रति विशेष ध्यान देते थे, गुप्त युग की वेशभूषा की जानकारी तत्कालीन साहित्य, तथा पुरातात्विक स्रोतों से प्राप्त होती है, वाकाटक राजवंश के साथ गुप्त राजवंश के वैवाहिक सम्बंन्ध थे अतः वाकाटकों के ऐतिहासिक स्रोतों से भी जानकारी प्राप्त होती है। डॉ मोतीचंद्र लिखते हैं, ''इस युग की वेशभूषा के अध्ययन के लिए प्रचुर सामग्री हमें सारनाथ, देवगढ़ इत्यादि से मिली मूर्तियों और अजन्ता की 17 नम्बर की गुफा से मिलती है''।[2] उत्तर भारत में विकसित गुप्तकला का भारत के कोने कोने में समावेश हुआ और उसकी सौंदर्य भावना और अंकन शैली का प्रभाव देश में सर्वत्र पड़ा, इस युग की पत्थर, मिट्टी की मूर्तियों, सिक्कों और चित्रों से भारतीय कपड़ों एवं पहरावे की सटीक जानकारी मिलती है। डॉ मोतीचंद्र लिखते हैं '' अजंता के भित्तिचित्रों में राजमहलों के सजीव चित्रण हमें प्राचीन महलों की सजावट की छोटी छोटी वस्तुओं का भी पता देते हैं। साफ सुथरे और हल्के कपड़े पहने हुये

==========================

* प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय महाराजा महाविद्यालय-छतरपुर

राजाओं की प्रशांत मूर्तियां, ... सिले कपड़े पहने हुए नर्तक, नर्तिकाएं और समाजी, सुसज्जित सैनिकों से युक्त जुलूस, राजा के जीवन के यह सब पहलू, गुप्त युग में भौतिक संस्कृति के विजय चिन्ह के समान हैं''।[3]

गुप्त युग की वेशभूषा की विशेषताएं-

1. विविध प्रकार के कपड़े जैसे- वल्क अर्थात छालों और रेशों से बने कपड़े, फल के रेशों से जिसमें कपास भी आता था से बने कपड़े, रेशम से बने कपड़े, ऊनी कपड़े, चमड़े के कपड़े, इत्यादि।
2. साफ-सुथरे एवं हल्के कपड़े।
3. विविध प्रकार के रंगों से रंगना।
4. साड़ियों एवं धोतियों में कलात्मक ढंग से चुन्नटों एवं सिलवटों का निर्माण।
5. पुरूष एवं स्त्रियों का वेश भूषा विन्यास की कला में पारंगत होना।
6. सिले एवं वगैर सिले दोनों प्रकार के वस्त्रों का प्रचलन।
7. रंगीन एवं नक्काशीदार कपड़ों का प्रयोग।
8. पतले, बारीक एवं पारदर्शी कपड़ों का प्रचलन।
9. कुछ लोगों द्वारा विदेशी शैली के वस्त्र धारण करना।
10. कपड़ों की छपाई उन्नत होना।
11. भारतीय जलवायु के अनुकूल वस्त्र धारण करना।

इस युग में अच्छे एवं अच्छी तरह के कपड़े पहनने का इतना अधिक महत्व था कि तत्कालीन संस्कृत साहित्य में इसके लिए पांच शब्द- आकल्प, वेश, नेपथ्य, प्रतिकर्म, एवं प्रसाधन आये हैं।[4] गुप्त शासनकाल में कुषाण युग के मोटे ऊनी अथवा रूई भरे सूती कपड़ों की जगह पतले और पारदर्शी कपड़ों का व्यवहार शुरू हुआ।

वस्त्रों के प्रकार- गुप्त युग विविध प्रकार के वस्त्रों का प्रचलन था इनमें से कुछ निम्नानुसार थे।

1. वल्क- यानी छालों और रेशों से बने कपड़े।
2. फाल- यह फलों के रेखों से बने वस्त्र होते थे, इसमें कपास भी आता था।
3. कौशेय- यह रेशमी कपड़े होते थे।
4. ऊनी- इन्हें रांकव भी कहा जाता था।
5. जंगिय- यह ऊंट के बाल से बनता था,
6. भंगिय- यह अलमोड़ा से बनता था,
7. पोतग- यह ताड़ के पत्तों से बना वस्त्र था,
8. खोमिय- यह अलसी की छाल के रेशों से बनता था,
9. तूलकड- यह सेमल के सूत से बनता था,
10. आइणगण- मृगचर्म से बने वस्त्र,
11. दूकूल- दुकूल वृक्ष की छाल से बने कपड़े, आचारांग सूत्र में कहा गया है की वह इतना हल्का था कि हवा का मामूली झटका उसे उड़ा ले जा सकता था।

8\. आयाणि- बकरे के रोएं से बने वस्त्र,
9\. मलय- यह रेशमी कपड़ा था,
10\. चीनॉशुक- कोशकार नामक कीड़े के रेशम से बना वस्त्र,

11. सुवर्ण- ब्रहदकल्पसूत्र भाष्य की टीका में इसे सुनहरे रंग वाला रेशमी वस्त्र कहा गया हैं।[5]

वस्त्र बनाने की विधियां-

अनेक ग्रंथों से उस समय की वस्त्र निर्माण की विधियों की जानकारी मिलती है। ब्रहदकल्पसूत्र भाष्य में रूई कातने की विधि दी गई है। इसके अनुसार कपास के फल से बिनौले निकाल लिये जाते थे, इसके बाद इसकी धुनाई की जाती थी फिर इसकी सफाई कर कातने के लिए पोलियां बना ली जाती थीं।[6] अमरकोश में कपड़े बुनने की प्रक्रिया का वर्णन मिलता है इसके अनुसार करधे पर बुनने के बाद माड़ी दी जाती थी और फिर कुंदी की जाती थी, रंगाई एवं छपाई का कार्य भी होता था, कपड़े के छोरों को वसति, लम्बाई को आयाम और आरोह चौड़ाई को परिणाह कहते थे।[7] वस्त्र निर्माण की कताई, बुनाई, रंगाई छपाई, सिलाई, सभी प्रक्रियाओं में गुप्त काल के लोग पारंगत थे तथा वस्त्र निर्माण का कार्य करने वाले लोग इस कार्य में गर्व का अनुभव करते थे, मन्दसौर अभिलेख में कारीगरों ने अपने व्यवसाय एवं कारीगरी के प्रति गर्व का अनुभव प्रकट किया है। इसमें वे कहते हैं ''तारूण्य एवं कान्ति से युक्त होने पर भी तब तक स्त्रियां प्रिय नहीं बनती जब तक वे रेशमी वस्त्र न पहनें''।[8]

विभिन्न लोगों की वेशभूषा-

1. **सामान्य लोगों की वेशभूषा-**

अजंता की 17वीं गुफा के एक चित्र से साधारण लोगों की वेशभूषा का पता चलता है इसमें साधारण जन की वेशभूषा को निम्नानुसार विभाजित किया जा सकता है (1) छोटी धोती और पूरे बदन को ढकने वाली चादर, (2) पूरी धोती और किनारों पर गोट लगा कमर बन्द, (3) छोटी धोती और बैकक्षय, (4) धोती के ऊपर करधनी से लगा हुआ गमछा, (5) केवल जांघिया,

2. **उच्च्च पद वाले लोगों की वेशभूषा-**

उच्चवर्ग के लोग जिनमें बड़े पदाधिकारी, राजकुमार, राजपरिवार एवं सम्पन्न के लोग सम्मिलित थे मकरबंद से बंधी धोती, पगड़ी, एवं कमर के ऊपर उत्तरीय धारण करते थे, अंशुक की धोती और दुपट्टा रंगीन, महीन एवं मुलायम होते थे, इनके किनारों पर सुनहरा काम होता था।

3. **राजाओं की वेशभूषा-**

राजाओं के वस्त्रों की जानकारी मुख्यतः तत्कालीन साहित्य, सिक्कों, एव चित्रों से मिलती है, राजाओं के वस्त्र विशिष्ट होते थे, समुद्रगुप्त के सिक्कों पर उसे आधी बांह का कंचुक अथवा कोट पहने प्रदर्शित किया गया है, इसके चाकदार नुकीले कोने नीचे लटक रहे हैं। इनमें आगे कसीदे का काम है, कुछ सिक्कों में कंचुक पूरी बांह का है, पैरों में जंधा किस्म के जूते हैं। चन्द्रगुप्त कुमार देवी प्रकार के सिक्कों में चन्द्रगुप्त चाकदार जामा पहने है उसके गले पर घुंडीदार काम है इसके फुंदने लटक रहे हैं, साथ में पाजामा पहनें है। राजा सिर में पगड़ी या मुकुट धारण करते थे। कंचुक, कमरबन्द, धोती, पगड़ी, पाजामा, जूते पहनते थे, कुमारगुप्त को चाकदार कंचुक एवं घुटनों तक धोती पहने दिखाया गया है, उसके चांदी के सिक्कों पर सजी पगड़ी, पहने दिखाया गया है।

4. रानियों की वेशभूषा–

गुप्त युग में रानियों की वेशभूषा की जानकारी साहित्य एवं सिक्कों, चित्रों, एवं मूर्तियों से मिलती है, समुद्रगुप्त के साधारण प्रकार के सिक्कों में लक्ष्मी जी को एड़ी तक साड़ी एवं घुटने तक पहुंचते पूरे बांह की कचुंक पहने प्रदर्शित किया गया है। अजन्ता के चित्रों में रानियां एड़ी तक पहुंचती साड़ी या धारीदार घघरी पहनती दिखलाई गई है, दर्पण में अपना मुख देख रही राजकुमारी तीन लड़ियों की करधनी और सुनहरे किनारों वाले कमरबन्द से बंधी हुई साड़ी पहने हुए है। एक अन्य रानी धारीदार घघरी और पगड़ी पहने हुए है, एक चित्र में रानी बुंदकीदार चोली पहने है इसका कपड़ा बहुत महीन दिख रहा है, रानियों के वस्त्रों में साड़ी, चोली, कंचुक, शाल, घघरी, टोपी, पगड़ी, स्तनपट्ट , लंहगा, कमरबन्द, चादर इत्यादि प्रमुख थे, इनके कपड़े हल्के, महीन एवं मुलायम होते थे, इनको विविध प्रकार के रंगों से रंगा जाता था और यह देखने में बहुत सुन्दर होते थे, रानियों के अनेक वस्त्र मोतियों, सोने के दानों, बहुमूल्य रत्नों से अलंकृत किये जाते थे।

5. स्त्रियों की वेशभूषा–

गुप्तकाल में अधिकांश स्त्रियां सुन्दर, महीन एवं मुलायम कपड़े पहनती थीं, स्त्रियां साड़ी, चोली, लहंगा, लबादा, शाल, कचुंक, चूनर इत्यादि वस्त्र पहनती थीं, उनके कपडे सुन्दर तथा नक्काशीदार होते थे, बाणभट्ट ने एक स्त्री के वस्त्रों का वर्णन करते हुए लिखा है'' मलमल के वस्त्र में सैकड़ों तरह तरह पुष्प एवं चिड़िया बनी हुई थीं जो मन्द वायु के धीमें झोकों में तरंगित हो रही थीं ।''[9]

गुजरात एवं राजस्थान की बांधनी या चूनरी अभी भी प्रसिद्ध है इसे हर्षचरित में पुलक बंध कहा गया है।[10] कभी कभी कुछ स्त्रियां टोपी या पगड़ी भी पहनती थीं, वे ऋतुओं के अनुसार कपड़े धारण करती थीं, ऋतुसंहार से ज्ञात होता है कि ग्रीष्म ऋतु में वे दुकूल की बनी हल्की साड़ी एवं बसन्त ऋतु में केसरिया साड़ी एवं लाल केसरिया स्तनपट्ट पहनती थीं।[11]

6. सैनिकों की वेशभूषा–

सैनिक भरी बांह के कचुंक, धोती, कमरपेटी, पगड़ी पहनते थे, युद्ध यात्रा के समय सुरक्षा की दृष्टि से कुछ और भी कपड़े पहनते थे, अजंता के चित्रों से ज्ञात होता है कि घुड़सवार पूरी बाहों वाला कचुंक पहनत थे और उसमें बुंदकियों से सजावट की गई है वे कचुंक, धोती, कमरबन्द, पाजामा, पगड़ी, पैरों में बूट पहनते थे।

7. द्वारपालों एवं राजसेवकों की वेशभूषा–

गुप्त युग में द्वारपाल एवं राजभृत्य प्रायः सिले हुए कपड़े पहनते थे, उनके वस्त्रों में धोती, कमरबन्द, कोट, कचुंक प्रमुख थे, उनके कपड़े अलंकृत होते थे।

8. बच्चों के वस्त्र–

अजंता के चित्रों में कुछ बच्चों के भी चित्र हैं। इनसे उस समय बच्चों के वस्त्रों की जानकारी मिलती है। 17 नम्बर की गुफा में एक चित्र में बच्चा धारीदार धोती एवं छन्नवीर पहने है। बालों को व्यवस्थित करने के लिए उन्हें फीतों से बांधा गया है।[12] बच्चे टोपी, कमरपेटी, जांघिया, छन्नवीर, जूते, मोजे, धोती, इत्यादि वस्त्र पहनते थे।

9. दासियों की वेशभूषा–

दासियों की वेशभूषा में कंचुक, जाकेट, चोली, चुंदरी, टोपी, चादर, कमरबन्द, घघरी, साड़ियां प्रमुख रूप से थीं, यह कपड़े अधिक चड़क भड़क वाले होते थे, दासिंया बुंदकीदार चोली, चुंदरी, घघरी प्रमुख रूप से पहनती थीं।

कपड़े बदलने का समय–

गुप्त काल में समय समय पर कपड़ों को उतार कर दूसरे कपड़े पहने जाते थे, ब्रहदकल्पसूत्र में चार समय कपड़े बदलने का वर्णन किया गया है। (1) नित्य निवसन (2) नहाने के बाद(निमज्जनिक) (3) उत्सवों पर पहने जाने वाले कपड़े, (क्षणोत्सविक) (4) राजाओं, राजकुमारों, सभासदों इत्यादि से मिलने के समय के कपड़े, (राजद्वारिक)[13] इससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय समयानुसार कपड़े पहनने का प्रचलन था।

कपड़े स्वच्छ करना–

गुप्तयुग में कपड़ों की स्वच्छता पर भी विशेष ध्यान दिया जाता था, कपड़ों को धोकर माड़ी दी जाती थी उसे सुगन्धित धूप से सुवासित किया जाता था- स्पष्ट है कि गुप्त युग का समाज वेश- विन्यास की कला में पारंगत था, वे विविध प्रकार से अपने वस्त्रों को अधिक सुन्दर, आरामदायक बनाते थे, इस युग में कपड़ों की नक्काशी कला भी उन्नत अवस्था में थी, स्त्री और पुरूष दोनों ही कपड़ों के शौकीन थे और वह कपड़ों की स्वच्छता एवं सुन्दरता का ध्यान रखते थे, गुप्त कालीन वेश विन्यास लम्बे समय तक आगामी पीढ़ियों द्वारा अपनाई जाती रही।

==================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ मोतीचंद्र ''प्राचीन भारतीय वेश भूषा ''पृष्ठ 139
2. मोतीचंद्र ''प्राचीन भारतीय वेशभूषा'' पृष्ठ 138
3. डॉ मोतीचंद्र ''प्राचीन भारतीय वेशभूषा'' पृष्ठ 139
4. अमरकोश 2,6,9
5. ब्रहदकल्पसूत्र 4 ,3661
6. ब्रहदकल्पसूत्र भाष्य 3,2996
7. अमरकोश 2,6,114
8. इंडि.एंटी.15 पृष्ठ 176
9. बाणभट्ट हर्ष चरित, पृष्ठ 96
10. बाणभट्ट हर्षचरित पृष्ठ 261
11. कालिदास ;तुसंहार 1,4,6
12. हेरिगम प्ले, 67
13. ब्रहदकल्पसूत्र भाष्य1, 644

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

भारतीय चिंतन परम्परा में कबीर की वैचारिकी

* नरेन्द्र कुमार बौद्ध

सारांश– *उनका मूल उद्देश्य एक समानान्तर सामाज का निर्माण, दलित मुक्ति और मानवतावाद है। साधारण, अदना, पत्राधारी ब्राह्मण कबीर का निशाना कभी नहीं था, क्योंकि दमनमूलक सामन्ती वर्ण–व्यवस्था का मुख्य संरक्षक कभी भी अदना गरीब ब्राह्मण नहीं है। तत्त्वज्ञान का दम्भ भरने वाला 'मनुस्मृति' जैसे शास्त्रों से बार–बार उद्धरण देकर विधि–निषेधों का निर्देश करने वाला, वर्णाश्रम एवं मोक्ष की दार्शनिक व्याख्या देने वाला उच्च धार्मिक आसनों पर बैठा सम्पन्न ब्राह्मण है। दलित का शत्रु गरीब अदना ब्राह्मण कभी नहीं है। धार्मिक सत्ता का फायदा उठानेवाला चतुर ब्राह्मण है। कबीर का विरोध सिर्फ उन ब्राह्मणों से है, जो मिथ्या–चेतनाओं के बल पर जनता को सुलाकर रखना चाहते हैं। कबीर के विद्रोह की खूबी यह है कि यह इकहरा नहीं है। वे ब्राह्मणों के साथ उसी उग्रता से मुल्लाओं की आलोचना भी करते हैं। वे बड़े साहस से ऐसा करते हैं। कबीर की दलित चेतना को भक्ति ने साहस से भर दिया था, तभी वे बोले–'हम न मरैं मरिहैं संसारा, हम कूँ मिल्या जियावन हारा।' यदि भगवान मर जाएँगे, तब जरूर हम भी मर जाएँगे। भगवान ही नहीं मरेंगे तो हम क्यों मरेंगे। कबीर आगे मन के पूरे जोर से कहते हैं, 'शाक्त मरेंगे, सन्त नहीं, क्योंकि हम राम का रसायन पीते हैं।'*

मुख्य शब्द– दलित, आत्म पहचान, पृथकवाद, परजीवी, संस्कृति।

कबीर में दलित आत्मपहचान की अवधारणा एक खास तरह की वैयक्तिकता के मानवीय अहसास की ओर भी ले जाती थी, लेकिन वहाँ कोई पृथकतावाद न था। आत्मपहचान की पश्चिमी अवधारणा पृथकता के बोध पर जोर देती है, जबकि कबीर की आत्मपहचान का सम्बन्ध अपृथकता से है। जिय भारतीय समाज में भेद के सैकड़ों स्तर-उपस्तर हों, वही अपृथकता की सही आत्मपहचान है।

कबीर की भक्ति वैयक्तिक, मिश्रण शील और सहज थी। लेकिन ध्यान में रखना होगा कि वह मुख्यतः यह सामाजिक अनुभव देती है कि हम सभी एक समग्र के अंश हैं, इस प्रकार अन्तःसम्पर्कित और परस्पर एक-दूसरे से प्रभावित हैं।

वे जितना ज्ञान पर जोर देते हैं, उतना ही प्रेम और श्रम पर भी। वे संन्यास और वैराग्य को लताड़ते हैं और श्रम पर जोर देते हैं।

कबीर दलित आत्मपहचान के संघर्ष को एक तरफ 'जाति न पूछौ साधु की' कहकर जाति-प्रथा-विरोध से जोड़ते हैं, दूसरी तरफ, जब वर्ग की अवधारणा का ऐतिहासिक अस्तित्व नहीं था, 'सूरा सो पहचानिए जो लरै दीन के हेत' कहकर जाति को

* अतिथि व्याख्याता, दर्शनशास्त्र विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

अस्पष्ट रूप से ही सही वर्ग संघर्ष की ओर ले जाते हैं।

वे परमुखापेक्षिता और परजीवी संस्कृति का विरोध करते हैं। कहते हैं, परायों से आशा करना छोड़कर अपने हाथों में छिपी ताकत पर भरोसा करो। आश्चर्य है, जिसके आँगन में नदी बहती है, वही प्यासा मर रहा है।

कर बहियाँ बल आपनी, छाँड़ बिरानी आस।
जाके आँगन नदी बहे, सौ बात मरत पियास ।।

कबीर का दलित आत्मपहचान के संघर्ष का एक मुख्य वैचारिक स्त्रोत बन सकता है।

कबीर जिस समय भारतीय समाज में पैदा हुए थे, वह बहुत उथल-पुथल का समय था। उस समय भारतीय समाज तीन रूपों में बँटा हुआ था - एक रूप यहाँ का विशाल जनसमूह जो अनेक मत-मतान्तरों जैसे सनातनी, गैर-सनातनी, ब्रह्मवादी, पौराणिक, कर्मकाण्डी, शैव, वैष्णव, शाक्त, स्मार्त, जैन एवं बौद्ध आदि में विभक्त था, जिसका एक संयुक्त नाम था- हिन्दू।

भारतीय समाज अपनी व्यवस्थाजनित खामियों को नई व्यवस्था के विकास के माध्यम से दूर कर सकता था किन्तु आत्म स्वतंत्रता के अभाव में उसके लिये ऐसा कर पाना असम्भव था। क्योंकि कोई एक समाज व्यवस्था किसी न किसी वैचारिकी पर आधारित होती है और वैचारिकी का विकल्प स्वतंत्र मन से ही खोजा जा सकता है। जब तक वैचारिकी का विकल्प नहीं खोजा जाता, तब तक उस पर आधारित समाज व्यवस्था का विकल्प ढूँढ़ना सम्भव नहीं होता। यदि व्यवस्था का विकल्प ढूँढ़ भी लिया जाये तो उसे लागू करने के लिये जिस अधिकार की आवश्यकता होती है वह स्वतंत्रता के अभाव में नहीं मिल पाता। अर्थात् पराधीनता के चलते तत्कालीन भारतीय समाज में गतिशीलता एवं नवाचार की कोई गुंजाइश नहीं थी, केवल आत्मरक्षा ही उसकी नियति बन गयी थी। परिणामस्वरूप यह लचीला होने की जगह कठोर हो गया।

दूसरा रूप यह कि तत्कालीन समाज जातियों में सिकुड़कर अपनी परम्परा और पहचान बनाये रखने में ही लगा रहा। जिसकी शक्ति का स्त्रोत शास्त्रीय धर्म था। परम्परा और जाति की खोल से बाहर निकलकर नवाचार का खतरा मोल लेने की उसमें ताकत नहीं थी, जिस कारण वह बहिर्मुखी, प्रभावशील और खुला बनने की जगह अधिक अंतर्मुखी, अप्रगतिशील और संकीर्ण हो गया।

दूसरी ओर इस्लाम था, जिसने मूर्तिपूजा, बहुदेवतावाद, अवतारवाद तथा जन्मगत असमानता, भेदभाव व ऊँच-नीच सम्बन्धी ब्राह्मणवादी सिद्धान्त एवं आचार व्यवस्था को खुली चुनौती दी और राहतस्वरूप इस्लाम में सम्मिलित होने का विकल्प भी प्रस्तुत किया। उसमें धार्मिक स्तर पर समानता के बावजूद सामाजिक विषमता थी।

भारतीय समाज का तीसरा रूप हिन्दू एवं मुस्लिम की प्रतिक्रिया के स्वरूप अभ्युदय के रूप में अभिप्रकट हुई, जिन्होंने दोनों संस्कृतियों में आक्रमण-प्रत्याक्रमण से उत्पन्न गतिरोध को कम करने की कोशिश की और उनके बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया। सांस्कृतिक संघर्ष और समन्वय के इस दौर में रैदास, कबीर, नानक आदि भारतीय समाज में सन्तों का आविर्भाव हुआ, उनमें निर्गुणपंथी परम्परा के सर्वाधिक महत्वपूर्ण महान संत कबीर हैं। जिन्होंने दोनों समुदायों का ध्यान उनके आचारों

एवं क्रियाओं में व्याप्त विसंगतियों की ओर आकृष्ट किया।[1]

हिन्दू जनता जिस तरह जाति-व्यवस्था के भेदभाव और धार्मिक कर्मकाण्ड की चक्की में पिस रही थी उसी तरह मुस्लिम जनता भी इस्लाम की कट्टरता और कर्मकाण्ड की चक्की में। इन दोनों के ऊपर राजसत्ता और शोषण का चक्र चल रहा था। ऐसी सर्वग्रासी चक्की में पीसी जाती हुई जनता को देखकर कबीर ने कहा होगा :

चलती चक्की देखकर, दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में, साबुत बचा न कोय।।

उस कठिन समय में भारतीय मनुष्य की मनुष्यता खतरे में थी। वह हिन्दू या मुसलमान होकर अपनी चेतना और संवेदना को धर्म के हाथों गिरवी रखकर ही बच सकता था। उसकी स्वतन्त्रता और मनुष्यता की रक्षा का कोई मार्ग नहीं दिखाई दे रहा था।

ऐसे समय में एक ऐसे व्यक्ति की जरूरत थी जो उस काल के भारतीय समाज की समग्रता को जानता हो। दोनों धर्मों की वास्तविकता को पहचानता हो और लोकधर्म के भ्रमों से भी परिचित हो। साथ ही मनुष्य की मनुष्यता में जिसकी अटूट आस्था हो। ऐसे ही व्यक्ति थे कबीर। उनमें हिन्दू और इस्लाम की रूढ़ियों संकीर्णताओं और कट्टरताओं के विरूद्ध खड़े होने की जैसी दृढ़ता थी वैसी ही सच को कहने और गहने की निर्भीकता भी थी।[2]

कबीर ने उस समय के भारतीय समाज में मनुष्य की पहले से बनी-बनाई पहचान को अस्वीकार किया। उस समय के समाज में मनुष्य की पहचान के दो आधार थे - एक था धर्म, जिसके अनुसार प्रत्येक मनुष्य हिन्दू या मुसलमान था। दूसरा आधार जाति-भेद का था, जिसके अनुसार मनुष्य ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र था। कबीर ने न तो किसी धर्म को अपनी पहचान का आधार माना और न जाति को। उन्होंने केवल मनुष्य के रूप में अपनी पहचान समाज के सामने रखते हुए कहा थाः

हिन्दू कहो तो मैं नहीं, मुसलमान भी नाहिं।
पाँच तत्त्व का पूतला, गैबी खेलै माहिं।।

कबीर जिस साँच को कहने और गहने की घोषणा करते हैं वह मूलतः मानुष-सत्य है। कबीर को यह सत्य किसी ग्रन्थ-वेद या कुरान से नहीं मिला था। वह उन्हें अपने समय और समाज के मानव जीवन के अनुभव से मिला था, इसीलिए उसे वे 'अनभै साँचा' कहते हैं। जिस का अर्थ है- अनुभव का सत्य और अनभय सत्य भी।[3] असल में अनुभव से पाया हुआ सत्य ही अनभय या निर्भय सत्य होता है, किसी से मिला हुआ सत्य नहीं। जीवन के विभिन्न प्रसंगों में सत्य का अनुभव तो बहुत लोगों को होता है, लेकिन कभी शास्त्र के भय से और कभी लोक के डर से उसे कहने का साहस सबमें नहीं होता। बिरला ही कोई निर्भय होकर अपने अनुभव का सत्य सबसे कहता है, वही कबीर होता है।

इस प्रकार कबीर की वैचारिकी की दो बुनियादी विशेषताएँ हैं - एक अथक आलोचनात्मक चेतना और प्रश्न की प्रवृत्ति।[4] जो सुकरात आदि महान दार्शनिकों में देखी जा सकती है। उनकी आलोचनात्मक चेतना मूलगामी है। वह जनता को जगाने वाली है और रूढ़ियों को चुनौती देने वाली। इस आलोचना की एक विशेषता है- प्रश्न करने की प्रवृत्ति। यह प्रवृत्ति इतनी प्रखर है कि उस समय का समाज उसका धर्म और उसकी

व्यवस्था का कोई ऐसा पक्ष नहीं है जो कबीर के प्रश्नों से बच पाया हो। वे कभी-कभी सुकरात की तरह अज्ञानी बनकर प्रश्न करते हैं और बड़े-बड़े पंडितों तथा मुल्लाओं के ज्ञान की पोल खोल देते हैं।[5]

कबीर की मूलगामी आलोचनात्मक दृष्टि केवल प्रश्न करने तक सीमित नहीं है, उनकी दृष्टि समाज में मनुष्यत्व की भावना विकसित करने के लक्ष्य पर भी रहती है। प्रश्न करने की पद्धति उस लक्ष्य का साधन है। वे समाज में मनुष्यत्व के विकास के लिए हृदय के धर्म अर्थात् मानवीय भावों को लोकधर्म बनाने पर जोर देते हैं, इसलिए वे एक ओर ईर्ष्या, क्रूरता, कामुकता, कपट, अहंकार आदि की आलोचना करते हैं तो दूसरी ओर प्रेम, करूणा, दया, उदारता, अहिंसा और समता का विकास चाहते हैं।

कबीर की इच्छा है कि इन मानवीय भावों और गुणों के अनुसार मनुष्य स्वयं आचरण करे न कि उसके लिए कोई अवतारी राम या कृष्ण। वे अवतारवाद की आलोचना करते हैं, क्योंकि अवतारवाद मनुष्य की निरीहता और परावलम्बन की माँग करता है।[6] वे मनुष्य की स्वतन्त्रता के पक्षधर हैं। वे चाहते हैं कि मनुष्य अपनी आस्था, विश्वास और क्षमता के अनुसार अपना जीवन जिए या भक्ति करे। वे मनुष्य की स्वतंत्रता को सीमित करने वाली हर बात का विरोध करते हैं, चाहे वह सामाजिक हो या धार्मिक। वे गौतम बुद्ध की तरह कहते हैं कि अपना दीपक स्वयं बनो।

यही कारण है कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कबीर को 'मुक्तिदूत' और 'भारत पथिक' कहा था और उन्हें राजा राममोहन राय का 'अग्र पथिक' घोषित किया था। कबीर केवल अपने युग की नई चेतना के जागरण के प्रेरणा-स्त्रोत ही न थे, वे आधुनिक भारतीय नवजागरण के अग्रदूत भी हैं।[7]

मानव जीवन की सार्थकता के लिये कबीर तीन सूत्र निरूपित करते हैं - पहला सूत्र यह कि संसार में रहते हुये मनुष्य को सांसारिक राग-द्वेष, लोभ, ईर्ष्या, मोह और अहंकार से बचना चाहिये। अगर वह ऐसा नहीं करता है तो जीवित रहते हुये भी मरे के समान है। राग द्वेष से मुक्ति सद्ज्ञान और मन को वश में करके ही प्राप्त की जा सकती है। दूसरा सूत्र जो सांसारिक आचरण से सम्बन्धित है। वे कहते हैं कि व्यक्ति को विद्वान, बलवान और धनवान बनने की जगह आचरण पर अडिग रहना चाहिए। क्योंकि यह युग अन्य युगों से भिन्न है, इसलिये इस युग में दुरात्माओं का सत्कार होते देखकर आश्चर्य नहीं करना चाहिये।

कबिरा कलियुग कठिन है, साधु न माने कोय।
कामी क्रोधी मसखरा, तिन कर आदर होय।।

अर्थात् दुराचरण वालों का समाज में आदर सम्मान होते देखकर सद्पुरूषों को सदाचरण करना नहीं छोड़ना चाहिये। क्योंकि दुराचरण से अंततः दुःख ही मिलता है, दूसरों को ठगने से तो खुद ठगा जाना अच्छा है, क्योंकि खुद ठगा जाने से सुख मिलता है, जबकि दूसरों को ठगने से दुःख होता है। उनकी दृष्टि में जो दूसरों के दुःख-दर्द को समझता है और उनकी मदद करता है, उसी का जीवन सार्थक है। सार्थकता का तीसरा और सर्वाधिक महत्वपूर्ण सूत्र प्रेम है, क्योंकि प्रेम ही भक्ति को सरस व सजीव करता है और मनुष्य को माया रूपी भवजाल से मुक्ति दिलाता है। उनके अनुसार प्रेम सबको सुलभ है किन्तु इसके लिये व्यक्ति में त्याग करने की वृत्ति का होना जरूरी है। प्रेम से

ही मुक्ति और निर्भय मुक्ति सम्भव है। सच्चे प्रेम एवं ईश्वर से अनन्य प्रेम की दशा में मृत्यु, भय आदि की वस्तु नहीं अपितु आनन्द का विषय बन जाती हैं।

सामाजिक वैचारिकी–

साधारणतः समाज वैचारिकी से आशय विचारों की एक ऐसी व्यवस्था से है जो समाज के लिये एक विशिष्ट ढ़ाँचे का प्रतिपादन करती है एवं उसका सैद्धान्तिक व तार्किक औचित्य दर्शाती है। इस प्रकार समाज वैचारिकी में दो बातें अन्तर्निहित होती हैं - पहली सामाजिक संरचना की एक रूपरेखा का रेखांकन और दूसरी एक सामाजिक वैचारिकी अर्थात् जिसमें विचार, विश्वास एवं मूल्यों की एक व्यवस्था जो सामाजिक संरचना की सैद्धान्तिक औचित्य का प्रतिपादन करती है, उसका निरूपण।

कबीर की सामाजिक वैचारिकी वस्तुतः भक्तिपरक है जो ईश्वर के सन्दर्भ में एक औचित्यपूर्ण समाज व व्यक्ति की कल्पना करता है, जिसमें सम्पत्ति, सत्ता एवं जन्मगत आधार पर गुण व व्यवसाय सम्बन्धी भेद नहीं हैं। वे तो केवल ब्रह्म और जीव की एकात्मता के आधार पर समाज में व्यक्तियों के बीच स्वतंत्रता, समानता व भाईचारे की बात करते हैं। समता, सामाजिक न्याय व साम्प्रदायिक सद्भाव का उनका दर्शन वस्तुतः उनकी निर्गुण भक्ति का उपोत्पाद है।

वस्तुतः उनकी भक्तिपूर्ण वैचारिकी समाज के आर्थिक व राजनैतिक ढ़ाँचे में बुनियादी परिवर्तन की कोई रचनात्मक योजना प्रस्तुत नहीं करती, जिससे तत्कालीन समाज वैचारिक, आर्थिक, राजनैतिक व तकनीकी प्रगति के उस स्तर तक पहुँच पाये। जिससे सामाजिक जीवन के विविध क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन को व्यवहारिक स्वरूप दिया जा सके। लेकिन सामान्यजनों के विचार, दृष्टिकोण एवं सोच में निश्चित रूप से प्रभावकारी परिवर्तन अवश्य ला देती है, जिससे परम्परागत सामाजिक बन्धन शिथिल हुए और निश्चित रूप से आधुनिक युग में मौखिक परिवर्तन का मार्ग भी प्रशस्त हुआ।

जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण यथार्थवादी था। उनके अनुसार तो केवल ब्रह्म जो कि निराकार एवं सर्वव्यापी है, वही सत्य है। उसे राम कहें, अल्लाह कहें, कृष्ण या खुदा कहें, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। वे कहते हैं कि इस लोक से तो सभी अपनी-अपनी करनी लेकर जाते हैं लेकिन उस लोक से कोई नहीं आता, जिससे उस लोक के बारे में पूछा जा सके।

बाह्याचारों का परिहास करते हुये कहते हैं कि माला फेरने से कुछ नहीं होता। असली चीज तो मन का फेर मिटाना है, बाल मुड़ाने से हरि नहीं मिलते। अगर ऐसा होता तो अब तक सब भेड़ें बैकुण्ठ चली गई होतीं। नंगे फिरने, मृगचर्म धारण करने और सिर मुड़ाने से सिद्धि नहीं होती और न ही स्वर्ग मिलता है। वे जोगी, जती व संन्यासी सबको समझाते हैं कि केवल राम का नाम ही असली सहारा है। सच्चे मन और भक्ति भाव से राम का स्मरण करने से ही मुक्ति मिलती है।

कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों से पूछते हैं कि तुम्हारा साहिब कैसा है? क्या बांग देने से ही वह सुनता है और रोजा रखने, नमाज गुजारने या आसन मार कर लम्बी माला जपने से ही वह मिलता है? तुम्हारे मन में जो छल कपट है क्या साहिब वह नहीं देखता है। दरअसल, साहिब तो सभी के भीतर रहता है चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान हो। जब हिन्दू और मुसलमान दोनों में एक ही साहिब बसता है तो दोनों में भेद किस बात का है।

कबीर की समाज वैचारिकी का अन्य महत्वपूर्ण पक्ष साम्प्रदायिक सद्भाव एवं सर्वधर्म समन्वय है। हालाँकि कबीर का विभिन्न सम्प्रदायों में सद्भाव पैदा करना और उनमें एकता लाना मूल उद्देश्य नहीं था, यह तो तत्कालीन समाज की एक ज्वलन्त समस्या थी, जिसका मूल कारण लोगों का अज्ञान था।

अज्ञान के कारण ही लोगों में सामाजिक भेदभाव व्याप्त है। इसके उन्मूलन के लिये एक भक्त के रूप में उन्होंने अनुभव किया कि मूल तत्त्व तो ईश्वर है, व्यक्ति की मुक्ति जीव का ईश्वर से एकात्म होने में है, जो ईश्वर के प्रति प्रेम भक्ति से सम्भव है। धर्म और सम्प्रदाय के नाम पर पाखण्डपूर्ण विधि विधान एवं अन्धविश्वास धर्म के तथाकथित रहनुमाओं ने बना रखे हैं। जिनके माध्यम से वे आम जनता को गुमराह कर अपना स्वार्थसिद्ध करते हैं। मूल रूप से सभी धर्मों का सारतत्त्व जीवन का ब्रह्म से साक्षात्कार है, जो निर्गुण भक्ति के द्वारा ही सम्भव है। इसके लिये बाह्याचार की आवश्यकता नहीं। यदि हिन्दुओं के भगवान मन्दिर में और मुसलमानों के खुदा मस्जिद में रहते हैं तो जहाँ मन्दिर, मस्जिद नहीं हैं वहाँ कौन रहता है? किसकी सत्ता है? वास्तव में कबीर के अनुसार हिन्दू और मुसलमान दोनों के मार्ग ठीक नहीं हैं। इसलिये इनमें किसी को भी स्वीकार नहीं किया जा सकता। वे कहते हैं राम और रहीम, हिन्दू और तुर्क एक हैं, क्योंकि सभी का सृजनहार ईश्वर है। वही सभी जगह वास करता है।

कबीर के अनुसार सर्वधर्म समन्वय के लिये जिस मजबूत आधार की जरूरत है, वह है भगवान के प्रति अहेतुक प्रेम और मनुष्य मात्र को उसके निर्विशिष्ट के रूप में समझना। यही उनके सर्वधर्म समन्वय की विधा थी। वे केवल मनुष्यता को ही प्रेम भक्ति का ही पात्र मानते हैं। वे कहते हैं कि सन्तों की कोई जाति नहीं होती, जो ईश्वर को भजता है, वह ईश्वर का होता है। इसलिये केवल एक ही पहचान (जाति)[8] होती है, वह है - ईश्वर भक्त की। कबीर का छुआछूत का विरोध भक्तों के दायरे तक ही सीमित नहीं है। वे इसे वृहद्तर करते हुये कहते हैं एक ही पवन, एक ही पानी, और एक ही जाति से सारा संसार बना है। सभी बर्तन एक ही मिट्टी से बने होते हैं और उनको बनाने वाला भी एक ही होता है।[9] काठ में अग्नि के समान सबके भीतर एक ही तत्व समान रूप से व्याप्त है। एक ही जननी ने सबको जन्म दिया है तो फिर वह कौन सा ज्ञान है और उसका क्या तार्किक आधार है जो सबको एक-दूसरे से अलग करता है, जब सब लोग एक ही माँ से एक ही तरह से पैदा होते हैं तो आपस में सभी समान हैं ऐसे में यदि कोई अपने को औरों से भिन्न मानता है तो वह अलग ढ़ंग से क्यों नहीं पैदा होते?

उनकी सामाजिक वैचारिकी को निम्न रूप में रेखांकित किया जा सकता है :-

* वे वैकल्पिक समाज व्यवस्था का कोई निश्चित स्वरूप प्रस्तुत नहीं करते, लेकिन तत्कालीन सामाजिक संरचना की कमियों पर प्रहार करते हुये विसंगतियों के विरूद्ध जन-जागृति को जन्म देते हैं।
* वे सामाजिक विषयों से सम्बन्धित लोगों में अंधविश्वास व कर्मकाण्ड की जगह तार्किक व नैतिक सोच का विकास करते हैं, जिससे जनमानस में व्यापक उदारवादी व मानवतावादी दृष्टि विकसित होने की संभावना बनती है।
* कबीर लोगों में जीवन में आत्मनिर्भरता व स्वावलम्बन का आदर्श प्रस्तुत करते हैं, जिससे लोगों में सामाजिक विषमताओं को सूक्ष्म रूप में देखने का नजरिया पैदा होता

है।

* वे प्रेम भक्ति के माध्यम से सामाजिक वैषम्य दूर कर समाज में सौहार्द्र व सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास करते हैं।

* वे व्यक्तिवादिता एवं स्वार्थपरता से ऊपर उठकर प्रेमभाव के विकास पर बल देते हैं, क्योंकि वे मानते हैं कि प्रेम में ही मानव जीवन व व्यक्तित्व की पूर्णता सम्भव है। आधुनिक सन्दर्भ में कबीर की वैचारिकी की प्रासंगिकता हमें स्पष्ट दिखाई पड़ती है :-

* वे बाह्य और आंतरिक जगत के बीच प्राथमिकता के विषय पर जो नजरिया रखते हैं वह मध्ययुगीन समाज के आदमी की तुलना में आधुनिक उच्च तकनीकी समाज के आदमी का पथ-प्रदर्शन करने और उनकी समस्याओं को सुलझाने में कहीं अधिक उपयोगी है।

* धर्म के मामले में तत्कालीन समाज में विद्यमान कर्मकाण्डों, पाखण्डों एवं आडम्बरों की सार्थकता पर कबीर ने जो सवाल उठाये हैं, वे आज भी समीचीन हैं। यह सही है कि विगत 600 वर्षों के दौरान सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों में सुधार अवश्य हुआ है किन्तु जिस स्तर से धर्म एवं समाज में लचीलापन व सुधार स्थापित होना चाहिये था, उसकी कमी आज भी है, जिस कारण विभिन्न जातियों व सम्प्रदायों के बीच परस्पर सद्भाव और विश्वास पैदा होने की जगह कटुता ही बढ़ी है। आज पहले से कहीं ज्यादा समाज से इन बुराईयों को दूर करने के लिये कबीर के संदेशों को प्रसारित करना आवश्यक हो गया है। भले ही इस तीव्र तकनीकी युग में कबीर प्रासंगिक हों, ना हों, लेकिन जीवन को समझने और परखने की उनकी अपनी सत्यान्वेषक दृष्टि, आदर्श व मूल्य आज भी प्रासंगिक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. धर्मकीर्ति, महान बुद्ध दार्शनिक, नई दिल्ली, सम्यक् प्रकाशन, 2003
2. कीर, धनंजय, डॉ. अम्बेडकर : लाइफ एण्ड मिशन, बॉम्बे, पापुलर प्रकाशन, 1981
3. सतेन्द्र, जीवन परिचय, पृष्ठ 1-10, कबीर (सम्पादित) नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग (भारत सरकार) 2000
4. शाह, आर.सी. भारत की दुर्दशा की नायपाली धारणा, धर्मयुग, 45(11) : पृ. 25-28, 1994
5. सिंह, मोती, कबीर की भक्ति : आस्था और साधना, पृ. 129-57 (सम्पादित) कबीर दिल्ली, राधाकृष्ण
6. सिंह, रामगोपाल, सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1994
7. देवा, पूर्व : कबीर का सामाजिक दर्शन, 2(5) : पृ. 23-26, 1996
8. देवा, पूर्व : कबीर की प्रासंगिकता, 3(11) : पृ. 72-84, 1997

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

अज्ञेय द्वारा लिखित 'गैंग्रीन' कहानी की सम्यक आलोचना

* मधुकर राठोड

सारांश– *'गैंग्रीन' अज्ञेय की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से है। साथ ही हिंदी की उत्कृष्ट कहानियों में इसका स्थान है। यह कहानी अज्ञेय ने अपनी बीस वर्ष की आयु में लिखी थी और यह विभिन्न स्थानों पर 'गैंग्रीन' तथा 'रोज'दो नाम से छपी। कहानी उत्कृष्ट कोटि की मानी गई और आलोचकों ने इसे प्रभाववादी कहानी की संज्ञा दी। इस प्रकार कहानी लेखक किसी सामयिक सत्य को ऐसी अनुगूंज ध्वनित कर देना चाहता है जो बहुत समय तक उसे प्रकम्पित करती रहे। इस प्रकार की कहानियों में कथानक गौण होता है और वातावरण सजीव चित्रण के सहारे प्रभाव की अभिव्यंजना की जाती है। 'गैंगीन' कहानी का कथानक भी बहुत सूक्ष्म है और लेखक ने उस संक्षिप्त कथानक को वातावरण के सहारे प्रभावशाली बना डाला है।*

मुख्य शब्द– गैग्रीन, आलोचक, अनुगूंज, ध्वनित

कथावस्तुः अज्ञेय की 'गैंग्रीन' कहानी कथानक की दृष्टि से एक ऐसे वैशिष्टय से युक्त है जो प्रेमचंदोंत्तर हिंदी कहानी साहित्य की उल्लेखनीय विशेषता है। हिंदी कहानी में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के आगमन के कारण जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी और अज्ञेय ने कथावस्तु की स्थूलता को छोडकर सूक्ष्मता पर अपना ध्यान केंद्रित किया। यही सूक्ष्मता गैंग्रीन कहानी की प्राणशक्ति है।

स्पष्ट ही गैंग्रीन कहानी में यही परिस्थितियॉ है, मनोदशाएं है और उनसे उत्पन्न क्रिया प्रतिक्रिया आदि का समावेश है। जहॉ तक कहानी के कथानक का प्रश्न है,वह इस प्रकार है -कहानी लेखक अपने रिश्ते कि एक बहन मालती के घर बहुत लंबी अवधि के पश्चात मिलने कि आकांक्षा लिए पहुंचता है। बचपन से मालती बडे नटखट स्वभाव की थी। विवाह के पश्चात् वह अपने पति डॉ.महेश्वर के साथ एक पहाड़ी स्थान पर स्थित छोटे से सरकारी अस्पताल के क्वार्टर में रहती है। यहॉ उसका जीवन नीरस और यंत्रवत हो गया जैसे जीवन सुख ही गया हो। लेखक घर में प्रवेश करते ही वातावरण की बोझिलता और जीवन की नीरसता का अनुभव होने लगता है। वह उससे बड़े लंबे समय के बाद मिलता है किंतु देखता है कि इतने लंबे समय के पश्चात् मिलनेवालों में जिस उत्साह की अपेक्षा होती है वह मालती में नहीं है। पति तीन बजे डिसपेन्सरी से लौटते है तब खाना बनाकर एक सच्ची हिंदू पत्नी की भॉति वह भूखी ही बैठी रहती है। इसका भी उसमें कोई उत्साह नहीं है। डॉ.महेश्वर खाना खाकर वापिस डिसपेन्सरी लौट जाते है

---

* हिंदी विभाग प्रमुख, अनुसंधान केंद्र, प्रा.रामकृष्ण मोरे महाविदयालय, आकुर्डी-पुणे-44

वह खाना खाकर घर का काम यंत्रवत निपटाने लगती है। घडी की सुई खिसकती जाती है और वह भी एक एक घंटे के साथ निश्वास फेंकती हुई आगे बढती जाती है। इस एकांत में उसका अकेलापन ही उसका साथी है। उनका छोटा बच्चा जो बचपन में बहुत नटखट और उत्साही होना चाहिए वह बेकार ही चिड़चिड़ा बन गया है और दम्पति का इस ओर ध्यान ही नहीं है 'हो ही गया है चिड़चिड़ासा, हमेशा ही ऐसा रहता है। वातावरण की ऐसी नीरसता में लेखक भी घुटता रहता है। मालती तीन बज गए,चार बज गए, कहकर नीरवता को यदा कदा भंग करती रहती है। 'गैंग्रीन' ही ऐसा होता है उसका मुहावरा बन गया है। बचपन से मालती बड़ी नटखट और उद्धत थी। आम के बगीचे से कच्ची आमिया तोड़कर खाना, पढ़ने की पुस्तक को फाड़कर फेक देना आदि की घटना से लेखक उसके विद्रोही व्यक्तित्व का चित्र खींचता है, किंतु विवाह के बाद यहाँ आकर मालती खो सी गयी है। अखबार के टुकड़े को भी तरसती है। मालती चुप है, डॉ. महेश्वर चुप है। दोनों निरर्थक भाव से जीवन के बोझ को ढोते रहते है। लेखक ने उनके खाने-पीने, सोने-बैठने, बातचीत करने तक में इस नीरसता को लक्ष्य किया है। संपूर्ण घर पर कोई उदासी की ऐसी घटा छाई हुई है जो उनकी गृहस्थी को तिल -तिल कर निगलती जा रही है और लेखक इस उदास नीरसता और टूटी -हदयहीनता की चरम सीमा का अनुभव करता है। जबकि नव दम्पति का एक मात्र पुत्र खाट पर से गिर जाता है और उसकी युवा माता बंधे कम से आकर उठा लेती है, उस पर किसी प्रकार कि प्रतिक्रिया नही होती वह मात्र यह कहकर अपनी नीरसता का परिचय देती है। इसको चोटे लगती ही रहती है,रोज ही गिर पड़ता है। कहानी वक्ता यह सुनकर स्तब्ध रह जाता है। युवती माँ का हदय एकदम सूख गया लगता है और तभी वह महसूस करता है कि सचमुच उस कुंटुब पर कोई भयंकर छाया घर कर गई है जो 'गैंग्रीन' ही उन्हें उसी तरह धीरे-धीरे निगलती जा रही है।

कथानक बड़ा संक्षिप्त सूक्ष्म और महत्वहीन सा है, किंतु उसकी संगठना और कलात्मक विन्यास की दृष्टि से यह कहानी उत्कृष्ट कोटि की है। लेखक ने मध्यवर्ग के साधारण परिवार में व्याप्त जीवन की नीरसता और उत्साहहीनता का सजीव चित्र खींचा है। इसे आलोचकों ने मध्यवर्गीय भारतीय समाज जीवन का एक कारूणिक खंड चित्र माना है। 'गैंग्रीन' ही ऐसा होता है,जीवन एक बंधी घिसी पिटी लकीर पर बिना किसी जीवन शक्ति के यंत्रवत चला जा रहा है। सुबह बिना किसी उत्साह के उठकर काम में लग जाना और धीरे धीरे सुई की चाल को गिनते हुए रात को ग्यारह के घंटे की आवाज को दुहराकर सो जाना बस इन दो घरघराहट के बीच जीवन भी एक मशीन की तरह है कि स्विच ऑन किया तो चल पडा और स्विच ऑफ किया तो बंद हो गया। इसी कहानी का दूसरा शीर्षक 'गैग्रीन' और भी मार्मिक अभिव्यंजना को प्रस्तुत करता है। छोटा-सा कॉटा लगता है और धीरे-धीरे शरीर को गलाता हुआ बढता रहता है। ऐसे ही वातावरण की उब समाज को तिल-तिलकर, तड़पा-तड़पाकर निगले जा रही है। मालती का जीवन 'गैंग्रीन' से हुए घाव की भाँति धीरे -धीरे गलता जा रहा है,वह निश्चेष्ट सा होता जा रहा है। शायद अब तो कोई ऑपरेशन भी ठीक नहीं कर सकता। उसका विद्रोही अहं इस उबास भरी घुटन में दम तोडकर मर रहा है। रोज ही जो बात होती है उसके बंधे हुए साये में मालती में विद्रोह करने की न तो क्षमता रह गयी है और न ही ऐसी कोई आकांक्षा। जीवन को गति देने की आकांक्षा भी मर जाती है वहाँ जीवन सड़ने लग जाता

है। मालती घरेलू कामों को एकरसता नीरसता के साथ किए जा रही है क्योंकि उन्हें करना है। यदि उस यंत्रवत जीवन में मृत्यु भी आ खड़ी होगी तो भी उदासी और बेलगाव के साथ वह उसे भी स्वीकारती जाएगी। उसकी सारी साधे नारी जीवन की सारी कामनाएँ इस बोझिल वातावरण के नीचे दम घोट कर मर चुकी है।

संवेदनाः लेखक ने इस कहानी के माध्यम से वर्तमान सभ्यता यंत्र से चलित जीवन का करारा व्यंग्य किया है। भारतीय नारी जीवन शोचनीय स्थिति और नीरस दुर्दशा का चित्र खींचा है। आहार, निद्रा और मैथुन जैसे बंधे हुए कत्यों के अतिरिक्त भी जीवन का कुछ उदेश्य है, इसे समाज भूला हुआ है और यहीं जीवन की उदासी का कारण है। ऐसे जीवन में न स्वस्थ मनोविनोद है, न जिंदादिली का रेला। पिटी -पिटाई जिंदगी को घसीटते रहना भर है। मनोवैज्ञानिकता कहानीकार ने पात्रों के चरित्रांकन में मनोवैज्ञानिक रेखाओं का सहारा लिया है। ये रेखाएँ यद्यपि बहुत विरल है, किंतु कहानी के नायक नायिका और डॉ. महेश्वर के चरित्र की झांकियों को प्रस्तुत करती है। मालती कहानी लेखक की किसी दूर के रिश्ते में बहन लगती है, किंतु उन दोनों के उस सामाजिक संबंध को इतना महत्व नहीं दिया और उसे सखी कहना ही समीचीन समझा। इससे उनके बीच रोमांस का हल्का और अस्पष्ट परिचय उभरता है। लेखक का मत है- ''हमारे व्यवहार में सदा सख्य की स्वेच्छा से स्वच्छदता रही है, वह कभी भ्रातृत्व के, या बड़े-छोटे पन के बन्धनों मे नहीं धिरा।'' अर्थात् उन दोनों के मध्य किशोर कालीन प्रणय के अंकुर जमे हुए थे। समाज के रुढिग्रस्त नियमो को उन्होंने चाहे न तोड़ा हो, किन्तु उनके मन पूरसार अनुरक्त थे जो बाद में पृथक-पृथक धाराओं में बह चले।

अज्ञेय ने 'शेखर : एक जीवनी' में भी शेखर और शशि के मध्य भ्रातृभाव को अस्फुट प्रेम का सस्पर्श दिया है। इस प्रकार मूक विद्रोहात्मक सम्बंध यद्यपि असामाजिक है,किन्तु निरन्तर साहचर्य में पलनेवाला यह फेम अमनोंवैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। मालती के जीवन से नायक जिस घुटन भरी उदासी को महसूस करता है कौन कह सकता है कि उसके मूल में इस अज्ञात प्रणय कि छाया नहीं पड रही हो। लेखक उसे देखने पहुँचता है किन्तु जो कुछ देखता है उससे उसका-हृदय असंतुष्ट हो जाता है और मालती भी अपनी उब को छिपाती नही। डॉ. महेश्वर भी उसी उब के शिकार है। यदि इससे यह निष्कष निकाला जाए कि तीनो! की जिन्दगी में बपचन की उस अकुंठित प्रणाय -वल्लरी की मनोंवैज्ञानिक छाया पड़ रही थी, तो कोई बहुत बड़ी भूल नहीं होगी। मालती और लेखक के- हदय में उभरने वाले अन्तद्वंद्वो का कहानी में महत्वपूर्णस्थान है। ''ग्यारह के पहले घंटे कि खडकम् के साथ ही मालती की छाती एकाएक फफोले की भाँति उठी और धीरे-धीरे बैठने लगी। इन शब्दों में मानस-द्वंद्व का चित्र साकार हो उठता है। लेखक मालती और महेश्वरी उखड़ी-उखड़ी बाते करते है। किसी भी को पूरी तरह कह डालने लायक मानसिक क्षमता उनमें नही दिखाई देती। गैंग्रीन को लेकर मालती जिस निरर्थक ढंग के तर्क पेश करती है, डॉक्टर जिस प्रकार बरबस की धक्का देकर निकाले गए शब्दों में अपने कृत्य का औचित्य सिद्ध करते है और लेखक इनके बीच घुटता-सा अभिनय करता है, उनसे तीनों का मानसिक अशान्ति का चित्र सामने आ जाता है।

मनोविश्लेषणात्मकता और वातावरणः 'गैंग्रीन' में पात्रों का चरित्र मनोविश्लेषणात्मक ढंग से अंकित हुआ है , किन्तु 'गैंग्रीन'कहानी न तो चरित्र-प्रधान

कहानी है और न चरित्र-चित्रण की ओर लेखक का विशेष ध्यान है। उसे तो कथानक, चरित्र, वार्तालाप और वातावरण सबको मिलाकर एक प्रभाव की सृष्टि करनी है, क्योंकि 'गैंग्रीन' प्रभाव-प्रधान कहानी है। इसके लिए लेखक का ध्यान वातावरण को बोझिल से बोझिलतम बनाने में लगा हुआ है ताकि बोझिल प्रभाव की सृष्टि हो सके। लेखक के घर में प्रवेश करते ही जिस वातावरण से कहानी का आरम्भ होता है वह अन्त तक भीगता ही जाता है। लेखक और मालती के अनमने वार्तालाप से ,मालती के यन्त्रवत कार्य-व्यापक से डॉ.महेश्वर और लेखक की मुलाकात से और भिन्न-भिन्न छोटी-छोटी घटनाओं से मालती की अखबार के टुकडे के लिए तरसना, घडी के घण्टो को गिनते रहना उस वातावरण को बोझिलतम बनाते रहते है। इस बोझिलपन की चरम सीमा का लेखक को भान होता है, जब युवती माँ इकलौते बेटे के खाट पर से गिर पडने और चोट तो लगती ही रही है, रोज ही गिर पड़ता है। '' उदासी और घुटन के कारण युवती माँ के -हृदय का वात्सल्य सूख चुका है और लेखक इस सारे ताने -बाने को आवाक होकर सुलझाता रहता है। कहानी के अन्त में पाठक के मन पर भी ऊब इस बुरी तरह छा जाती है कि कहानी पढ़कर वह भी अन्त में निश्वास फैक कह उठता है 'ग्यारह बज गए।' लेखक ने कहानी के प्रारम्भ में जिस बोझिलता की सृष्टि की थी अन्त में उसने एक भीषण फफोले का रुप धारण कर लिया है। रात्रि की सारी नीरवता के साथ पाठक भी किसी उदास बेचैनी में डूबने लगता है। यहीं कहानी की प्रभाव मूलकता है। डॉ. जगन्नाथ प्रसाद के शब्दों में, इस पूर्णाहुति में पहले के सब वातावरएण संबंधी प्रभाव आन्वित होकर एक हो उठते है, सिसकती-सी कहानी पाठक को एकद्म डुबा देती है।

प्रभावान्वित व लक्ष्यपूर्णताः कहानी के इस प्रभाव को आन्वित करने के लिए लेखक ने कहानी को कलात्मक विकास दिया है। वातावरण को प्रतिपल गहरा करता गया है और इतने हलके हाथों में तूलिका फेरता चला है कि पाठक डूबता हुआ चला जाता है और उसे पता भी नहीं लगता। एक- एक घटना में परिस्थिति को और गहराई में उतारने की क्षमता है। उदासी के जिस बादल को कहानी के प्रारंभ में एक छोटे आकार में दिखाया गया है वह शनै-शनै सारे आकाश को ढक लेता है और कलात्मकता यह है कि सब यकायक नहीं होता बल्कि पता भी अंत में जाकर लगता है कि कितने गहरे में उतार दिया गया है। ऐसा कलात्मक सौष्ठव बहुत कम कहानियों में मिला करता है। संवादों ने भी कहानी को उदेश्य तक पहुँचाने में बडी सहायता की है। इतने चुटीले, मार्मिक, संक्षिप्त और सारगर्भित संवाद कहानी की संवेदना को गूढ से गूढतर करते चलते है। संवादों का उखडापन, उनकी समय काटने की व्यर्थता में वातावरण को बोझिल करने की शक्ति है। घटना को अस्पष्टता से सामने रखने के साथ- साथ वे तीनों प्राणियों की मानसिक द्वंद्वात्मक स्थितियों को सामने रखने की क्षमता रखते है।

भाषा शिल्पः भाषा तो अज्ञेय की अपनी ही है। शब्दों का इतना साधिकार एवं साधिप्राय प्रयोग बहुत कम लेखक कर पाते है। 'गैंग्रीन' और 'रोज 'जैसे शब्दों में कहानी की सारी संवेदना को अनावृत करने की क्षमता है। वाक्यों के गठन और भाषा के शब्द चयन ने वातावरण को और अधिक बोझिल बनाने में सहयोग दिया है। किंतु कलात्मकता इसमें है कि इसके बावजूद भी पाठक कहानी पढ़ने से मन नहीं हटा पाता। कहानी में कुतूहल या जिज्ञासा की सृष्टि नहीं है, भाषा या शैली के बल पर ही कहानी में पाठक

को रमा सकने की क्षमता पैदा कर दी है। यह लेखक की अदभुत सफलता है। व्यंजना के आधार पर कहानी की भाव प्रवणता बनी रहती है और उब एवं उदासी वातावरण में भी पाठक कहानी को पढने से विरक्त नहीं हो पाता।

महत्वांकन: अज्ञेय की यह कहानी उसके अपने कथा साहित्य में ही नहीं अपितु हिंदी कथासाहित्य में भी अपनी विशिष्ट स्थान रखती है। श्री. राय कृष्णदास ने इस कहानी की प्रशंसा करते हुए लिखा था ''अज्ञेय ने गैंग्रीन में भारतीय कुटुंब की इस बडी गहरी त्रुटी का विश्लेषण किया है,जिसे दूर किये बिना वह श्मशान बना जा रहा है मुर्दो की बस्ती ,फिर ऐसा कुटुंबों की समष्टि समाज में जीवन कहीं से आये। हमारे जीवन में तो दिन -रात वहीं पसीना,वहीं पसीना। साधारण युरोप के कुटुंब जीवन का रस बनाये रखने के लिए अपनी व्यस्तता में भी किसी प्रकार समय निकाल लेते है। इसमें विभाजन और सुव्यवस्था तो है ही वे इसका महत्व भी समझते है,इसी प्रयासपूर्वक इसका साधन जुटाते है। कोई स्वस्थ विनोद कोई बौद्धिक मनोरंजन जीवन का एक अंग हुए बिना अपने यहाँ कुटुंबों की यहीं दशा हो रही है जो हम 'गैंग्रीन 'के कुटुंब में पाते है। सचमुच 'गैंग्रीन 'कहानी हमारी सामाजिक व्यवस्था और रूढिग्रस्त बंधी हुई जिंदगी की ओर गहरा प्रभाव डालती है।

चरित्र चित्रण : अज्ञेय की 'गैंग्रीन' चरित्र सृष्टि कि दृष्टि से प्रभावी कहानी है। इस कहानी में दो पात्र है-मालती और डॉ. महेश्वर। दोनों के चरित्र एक दूसरे के विरोधी प्रतीत होते है। मालती अपने पति की इच्छा के अनुसार कार्य करती रही है और कभी भी किसी बात का विरोध नहीं करती है। वह न तो महेश्वर को दोष देती है और न कुछ कहती है। किंतु उसकी उदासी और उसकी कुछ भाव भंगिमाएँ यह संकेत देती है कि उसे अपने पति से बहुत-सी शिकायतें है। मालती का चरित्र ऐसी नारी का चरित्र है,जो अपनी परिस्थितियों के समक्ष विवश है। उसकी विवशता,उदासी और अकेलेपन की स्थिति को कहानी द्धारा समझा जा सकता है। मालती की थकान, टूटन और घुटन को कहानीकार ने प्रतीकों द्धारा स्पष्ट किया है।

संवाद योजना : अज्ञेय की कहानी कला में संवादों का विशेष स्थान है। 'गैंग्रीन कहानी को ले तो स्पष्ट होता है कि इसमें आये संवाद कथा को आगे बढाते है। पात्रों के चरित्र को प्रकाशित करते है। अज्ञेय की संवाद योजना के संबंध में एक समीक्षक का कथन ध्यान देने योग्य है। 'गैंग्रीन की संवाद योजना सौदेश्य होते है और कथानक का विकास करने तथा पात्रों के मनोंभावों, द्वंद्वों एवं चरित्रों को स्पष्ट करने में पूर्णतया सफल होते है।'अज्ञेय के संवादों में कहीं कहीं विश्लेषणात्मता दिखाई देती है।

उदेश्य और नामकरण : कहानी का शीर्षक 'गैंग्रीन'मालती जो कथानायिका है,के जीवन की नित्यप्रति की उदासी और अकेलेपन की स्थिति को प्रकट करता है। पूरी कहानी में 'गैंग्रीन' शीर्षक छाया है। मालती बच्चे का गिर जाने पर, पति के देर से आने पर और अन्य घरेलू काम करते हुए कथानक को कहें कि कहानीकार की जो उत्तर देती है, वहाँ यही है कि 'गैंग्रीन'ही ऐसा होता है।

निष्कर्ष : संक्षेप में कह सकते है कि अज्ञेय एक विशिष्ट कहानी कला के प्रयोक्ता है. उन्होंने अपनी कहानियों में नए प्रयोग किए है, जिंदगी को निकट से देखा है और स्त्री-पुरूष के संबंधों की सूक्ष्म परीक्षा की है। 'गैंग्रीन' कहानी इसका उदाहरण हैं कहानी

कला की दृष्टि से भी 'गैंग्रीन' कहानी अपने आप में न केवल नवीन है, अपितु विशिष्ट और अद्‌भुत भी हैं। वास्तव में यह कहा जा सकता है कि अज्ञेय 'गैंग्रीन' कहानी में न सफल हुए है, अपितु एक तरह से शैल्पिक क्षेत्र में नया मोड़ भी प्रस्तुत कर सके है। भीतर के अकेलेपन, टूटन और एकरसत्ता की अनुभूति, बाहरी जीवन की मोनोटोनी में साकार और सजीव हो उठी है। बाहरी और भीतरी परिवेश का सामंजस्य 'गैंग्रीन'कहानी की विषेशता है।

===================

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. गैंग्रीन कहानी -अज्ञेय
2. शेखर : एक जीवनी-अज्ञेय
3. हिन्दी कथांतर -डॉ. परमानंद श्रीवास्तव

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- XXX-XXXI, Hindi Edition, Year-15, Dec. 2019- March 2020

संस्कृतसाहित्ये स्वात्मव्यवस्थायाः विवेचनम्

* प्राची आर्या

आत्मप्रबधनस्य अर्थोऽस्ति स्वात्मानं नियन्त्रणम् अर्थात् आत्मेन्द्रिय निग्रहणम्। भारतीय दर्शनानुसारम् इन्द्रिय निग्रहणम् अतिकठिनमस्ति।

दर्शनम् आत्मप्रबन्धस्य एकअंग मन्यते, यतो हि दर्शनस्य प्रमुखं लक्ष्यं मनुष्याणामात्मप्रबन्धनमेवास्ति। आत्मप्रबन्धनमेव अस्ति मानवाः स्वान्तरिक बाह्येन्द्रियश्च अनेकैः साधनैः स्वाधीनं कुर्वन्ति। अतो एते द्वे मिथः सहाय्यं स्वीकर्तुं शक्यते।

आधुनिकप्रबन्धतन्त्रानुसारं भौतिकोन्नतिः सर्वश्रेष्ठा उपलब्धिरस्ति चेत् समाजवर्गेषु कतिधा असमानता आगच्छेत्। अपरतः शास्त्रीयसिद्धान्तेषु नैतिकपद्धतौऽपि एकं दीर्घपरिवर्तनं आगतवान्, अन्योन्यं प्रति विश्वासस्य न्यूनता आगतवती। केवलं वर्णितनियमानां पालनेन समस्याः समाधानं भवितुं न शक्यते, समस्या समाधानार्थं यस्य वस्तुनः आवश्यकता अस्ति, सा अस्ति व्यक्तिगतपरिवर्तनम्। यदा व्यक्ति कस्यापि उद्देश्यपूर्तये निश्चिताधारभूत मूल्यानां गुणानां च ध्यानं करोति तावदेव पारदर्शिता सत्यतायाश्च अर्थः पूर्णं भविष्यति। लाभप्राप्तये सुखप्राप्तये वा वास्तविकं प्रबन्धनं विलुप्यते स्म।

मानवब्रह्माण्डस्य अध्ययनवत् यं तु तं नित्यं आश्चर्यजनकं प्रेरणादायकं संघर्षपूर्णं चासीत्, अत्याधीरतया सह ज्ञानस्य प्राचीनभण्डारान् अन्वेषयति स्म। मानवमस्तिष्कं, बुद्धिं, जीवनरहस्यान् च ज्ञानार्थं प्राचीनज्ञानतत्त्वानां ज्ञानम् अत्यावश्यकमस्ति, कुत्रचित् तेषु काऽपि एतादृशी वस्तु अस्ति या आधुनिकमानव मानसिकचिन्तानां हार्दिकवेदनानां अनैतिकविचाराणां च स्थाने शान्ति–नैतिकता प्रदायन्ति। सिद्धान्तानां मुख्योद्देश्यः अयमेवास्ति यत् कस्यापि ज्ञानस्य मुख्योपयोगः केवलं तदैव भवति, यावत् तेन ज्ञानेन सम्पूर्णं संसारं लाभं न प्राप्यते।

वेदान्तदर्शनस्य ग्रन्थवेदान्तानुसारं शमदमोपरतितितिक्षासमाधान श्रद्धादयः षट्सम्पतयः सन्ति। एताभिः षट्सम्पतिभिः मनुष्यः आत्मेन्द्रियः ताभ्यः विषयेभ्यः विमुखं करोति [1] तथा चात्मनियन्त्रितो भवति।

[1] शमादयस्तु शमदमोपरतितितिक्षासमाधानश्रद्धाख्याः। वेदान्तसार–पृष्ठ ५३

=========================

* अतिथि व्याख्याता, कन्या गुरुकुल परिशर ज्वालापुर हरिद्वार।

भगवान श्रीकृष्णोऽपि 'शम' ब्रह्मज्ञानार्थम् आवश्यकं कथितवान्–

'योगारूढस्य शमः कारणमुच्यते'। गीता ६/३

वेदान्तसाराख्ये ग्रन्थे लिखितमस्ति यत्– प्रशान्तचित्ताय वशीनिर्दोषनिर्दुष्टजनाय आत्मज्ञानमिदं सर्वं प्रदेयम्।[1]

योगदर्शने आत्मनियन्त्रणार्थं अष्टांगयोगस्यान्तर्गते – 'यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यान समाधयश्च अनिवार्यं कथ्यते।[2]

आत्मनियन्त्रणं जनान् सामान्यतः श्रेष्ठं करोति। धर्मं तस्य एकं महत्त्वपूर्ण अंगमस्ति। धर्मः मनुष्यस्य आत्मचेतनायाः सम्बद्धोऽस्ति। अन्येभ्यः जीवेभ्यः मनुष्यस्य विभिन्नता तस्य अस्मिन्नेव मूलवैशिष्टयेन अस्ति। अनेन कारणेन न केवलं स इन्द्रियविषयान् प्रति आसक्तो भवति अपितु स तेभ्योऽपि सूक्ष्मतत्त्वविषये चिन्तयति।[3]

स्वात्मप्रबन्धनम् मनुष्यस्य सा मानसिका प्रक्रिया अस्ति या अस्मान् साधारणज्ञानाद् भिन्नं विरोधाभासरहितं निष्पक्षं सुव्यवस्थितं च ज्ञानप्राप्ति कारयति। अनेन माध्यमेन 'सर्वं दुःखम्' इत्ययं सर्वं सुखम् अर्थात पूर्णानन्दे परिवर्तनस्य प्रयासः क्रियते स्म। मनुस्मृतौऽपि कथितमस्ति।[4] अर्थात् येन आत्मदर्शनं क्रियेत्, स पुनः सांसारिकबन्धनेषु नाबद्धते, किन्तु येन आत्मदर्शनं नाकरोत् स जन्ममरणबन्धनेभ्यः कदापि न विमुच्यते।

याज्ञवल्क्यस्मृतौ कथ्यते– विषयरूपबाह्यजगतः लिप्तमनुष्यदृष्टिः

---

१. प्रशान्तचित्ताय जितेन्द्रियाय च प्रहीणदोषाय यथोक्तकारिणे।

गुणान्वितायानुगताय सर्वदा प्रदेयमेतत सततं मुमुक्षवे।। वेदान्तसार पृष्ठे ५६

२. यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावंगानि। योगदर्शनसाधनपाद २/२६

३. यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धि स धर्मः। वैशेषिकदर्शन कणाद १/१/१

४. सम्यग्दर्शनसम्पन्नः कर्मभिन्न निबद्धयते। दर्शनेन विहीनस्तु संसारं प्रतिपाद्यते। मनु0 ६/७४

भोगमाया भवति, यतोहि समाधानं जीवनस्य आत्मदर्शनेऽस्ति, यं परमपदसंज्ञाया अभिधीयते।[1]

अर्थात् दया, सदाचार, दानअहिंसास्वाध्यायादिभिश्च मनुष्यस्य चित्तवृतिः शुद्धा भवति, अर्थात् अनेन मनुष्यस्य इन्द्रियः अन्तर्मुखी भवन्ति।

श्रीमद्भगवदगीतायां कथ्यते यत् सदा मनुष्यः इन्द्रियविषयेषु कर्मसु च आसक्तो न भवति तथा सर्वान् संकल्पान् पूरयति, तदा तं योगरूढम् उच्यते – अयमेवात्मप्रबन्धनस्य स्थितिर्भवति।[2]

श्रीमद्भगवतगीतायाम् श्रीकृष्णः वदति – यत् यो जनः आत्मेन्द्रियविषयेषु विजयं प्राप्नोति स संसारेऽस्मिन् पूर्णशान्तेरनुभवति, एतादृशानां जनानामेव आत्मा महान् भवति, तथा महान् आत्मना युक्तः जनः मानापमान, सुखदुःखशीतोष्ण, सुहृदमित्रशत्रु, बान्धवः साधवः पापिनः इत्यादिषु या समबुद्धि प्राप्यते स योगी भवति अर्थात् एतेभ्यः तत्त्वेभ्यः रहिते सति स आत्मेन्द्रियः विजति।[3]

वाल्मीकिरामायणेऽपि धर्म–दर्शनस्य च सहजसमावेशः प्राप्यते। एतयोः द्वयोः तत्त्वयोः समावेशेनैव आत्मप्रबन्धनं आत्मनि परिपूर्णमस्ति। रामायणे आत्मप्रबन्धनतत्त्वस्य अनुशीलनेन वयं ज्ञायामः यत् आत्मप्रबन्धनमेव जीवनमूल्यानि स्थापयति। चेत् वयं जीवन–अर्थं सदर्थेषु ज्ञायामः तदा अस्य कृते आत्मप्रबन्धस्य अवलम्बनम् आवश्यकमस्ति।

---

१. सदाचारदया अहिंसा दान स्वाध्याय कर्मणाम्

अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम्।। याज्ञवल्क्यस्मृतौ १/८

२. यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्यते।

सर्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते।। श्रीमद्भगवद्गीतायाम् ६/४

३. जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः,

शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः।। गीता० ६/७/१०

अष्टांगयोगः – चित्तवृत्तिनिरोधः योगोऽस्ति,[1] अनियन्त्रित्वे सति चित्तवृत्तयः विषयभोगं प्रति प्रवर्तयन् अन्तःकरणं अशान्त (विचलित) कुर्वन्ति, तदैव मानवः अन्तर्विमुखं भूत्वा बाह्यविषयेषु भ्रमति, यतोहि योगस्तु बाह्यतः अन्तर्मुखी भवति मन एकाग्रस्योपायः मात्रैकयोगोऽस्ति।

योगदर्शने यमनियमऽपि इन्द्रियनिग्रहेण जीवनमूल्यस्थापने महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वहन्ति। यमान्तर्गतेषु अहिंसासत्यस्तेयब्रह्मचर्यअपरिग्रहः तथा नियमान्र्तगतेषु तत्त्वेषु शौचसन्तोषतपस्वाध्यायईश्वरोपासना चास्ति। शरीरबुद्धिनां कृते नित्याचरणीयस्नानादीन उपायान् शौचं कथ्यते। लब्धवस्तुभिरेव प्रसन्नता सन्तोष संज्ञया अभिधीयते।

सामान्यरूपेण धर्मादीनां जीवनमूल्यानां रक्षायै स्थूललिप्साभ्यः सूक्ष्मविकारेभ्यश्च मनादीन्द्रियान् संरक्ष्य तानुत्तरोत्तरसत्त्वान् मुखप्रयासस्य साधनस्य वा संज्ञा तपोऽस्ति। अनेन साधनेन शरीरेन्द्रिय मनादीनां शोधनं भवति। नियमव्रतयोश्च परिपालनेन आचरणेन चित्तशुद्धिः विषयाणां निवृतिश्च संभाव्यतेऽ। ऋग्वेदे मृतसत्यं च तपोद्भूतं कथ्यते।[2] ब्रह्मण ग्रन्थानुसारं सृष्टिरचनापूर्व प्रजापति तपः कृतवान् – स तपोऽतप्यत। उपनिषदानां मान्यताऽस्ति, यत् तपसा एव ब्रह्मज्ञानं साक्षात्कारं वा कर्तुं शक्यते।[3]

परमार्थेन तपसाधना एव सा सात्त्विकाग्निरस्ति या जीवनं सुवर्णवत् उज्जवलं निर्माति, जीवनस्य अयमेव रूपः मृत्युजयी भवति। यं लक्ष्ये विधाय एव कथ्यते यत् ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्योः विजितवन्तः।[4]

उपभोगवस्तूनि परित्यज्य शरीरमनादिकं दृढेन संतुलनमेव आत्म आत्मप्रबन्धनमस्ति। आत्मप्रबन्धनमेव समाध्यावस्थां यावत् आगते सति तपरूपे परिवर्तितो भवति। अनेन तस्य शक्तिः उदीप्ता भवति। तपरूपा विशुद्धाशक्त्या मनुष्य असाधारणकार्येषु समर्थो भवति एवं आत्मप्रबन्धनं योगस्य एकं रूपमस्ति। विश्वामित्रस्य

---

१. योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः। योगसूत्र

२. ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ऋग्वेदे १०/१९०/१

३. तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तैति० उपनिषदि० ३/२

४. ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। ब्रह्मचर्य सूक्त १०/१७

असाधारणकार्येषु समर्थो भवति एवं आत्मप्रबन्धनं योगस्य एकं रूपमस्ति। विश्वामित्रः संकल्पानुसारं अव्ययः तपः कृतवान्।[1] ब्रह्मर्षिपदं प्राप्तये स शरीराधारभोजनं किं श्वासमपि नैव ग्रहणामि इति प्रणं कृतवान्।[2] विश्वामित्रस्य परमतपस्या परिणामो अयमभवत् यत् स महत् लक्ष्यं ब्रह्मर्षिपदं प्राप्तवान्।[3] तपस्यां तपस्वी नियताहारो भवति वा निराहारः तपस्यायाः विविध नियमाः भवन्ति। आत्मप्रबन्धनेन तेषामर्जनं संचयनं च क्रियते।[4]

आदिर्ऋषयः एतेषु योगांगेषु प्राणायामधारणाध्यानसमाध्यादीनां बाहुल्येन प्रयोगः कृतवान्।

आसनं स्थिरकृते सति श्वासप्रश्वासगत्यावरोधं प्राणायामो भवति।[5] श्वासप्रश्वासयोश्चावरोधनं प्राणयामो भवति।[6]

ध्येयविषये वृत्त्याः एकवत् ध्यानस्थापनं कथ्यते। तत्त्वदर्शनार्थं एकस्याः तानतायाः अपेक्षा भवति। पातंजलयोगसूत्रानुसारं ध्यानोऽयं समाधिसंज्ञाया अभिधीयते, तदा तस्मिन् केवलं ध्येय अर्थमात्रेण प्रतिभाषते तथा तस्य स्वरुपः शून्यवत् भवति।[7]

महाराजभोजानुसारं यस्मिन् मनः विक्षेपान् मनः विक्षेपान् निर्वाप्य यर्थाथतया धार्यते अर्थात् एकाग्रं क्रियते सा एव समाधिः ।[8] प्रसंगेऽस्मिन् समाधिशब्दः

---

१. तपः अतिष्ठदव्ययम्। वा० रा० १/६५/४

२. तथैवासीत् पुनर्मौनमनुच्छ्वासं चकार ह। वा० रा० १/६५/३

३. ब्रह्मर्षे: स्वागतं तेऽस्तु तपसां स्म सुतोषितः। वा० रा० १२६५/१९–२०

४. नियमैर्विविधैराप्तं तपो हि महदस्ति मे। वा० रा० १/३२/२०

५. तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिर्विच्छेदः प्राणायामः। यो० सू० साधनपाद ४९

६. (क) योगप्रदीप पृष्ठे – ४३५।

(ख) प्राणायामसमायोगः प्राणायाम इतीरितः।

प्राणायाम इति प्रोक्तो रेचकपूरककुम्भकैः।। योगी याज्ञवल्क्य ६/२

७. तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि। यो० सू० वि० पा० ३/योग प्रदीपे– पृष्ठे ४३८

८. सम्यग् आधीयते एकाग्रीक्रियते विक्षेपान् परिहृत्य मनो यत्र स समाधिः। योगप्रदीप पृष्ठे ४७४

चित्तैकाग्रतासाः समस्तयोगप्रक्रियायाः तथा योगोपलब्धेः प्रतिनिधित्वं करोति। अनेन मनुष्यः आत्मेन्द्रिय वशीकृत्वा परमतत्त्वं प्राप्नोति।

आन्तरिकबाह्यशुचितात्वेनैव व्रतानां वैदिककालादेव महत्त्वमासीत्। मनुष्यस्य आचरणे शुद्धशरीरस्यय निर्दोषमनश्च अतिप्रभावो भवति।

मानवजीवने व्यवहाररेव एकः एकादृशः वस्तुरस्ति येन मनुष्यः कमप्यन्यजनं स्वीकरोति, अस्य व्यवहारस्य तात्पर्यः मनुष्यचरित्रस्य तै सद्गुणैस्सह अस्ति, येषां प्रयोगः स व्यवहाहिकरूपे समाज समक्षं प्रस्तौति।

वाल्मीकिरामायणस्य प्रमुखपाख श्रीरामः यस्य व्यवहारवर्णनं सम्पूर्ण रामायणे प्रस्तूयते, तमघ वैज्ञानिकयुगे प्रो0 असरफ रिजवी मतानुसारं प्रबन्धनविशेषज्ञः कथ्यते।[1] रामस्य व्यावहारिकजीवनत्वेनैव तं पुरुषोत्तम कथ्यते।

स्व आत्मप्रबन्धनमहत्त्वपूर्ण भूमिकाऽसीत। स्वप्रबन्धेन विना कोऽपि प्रबन्धनसफलतायाः न अपेक्षते। परिवार प्रबन्धने राजनीतिप्रबन्धने, सैन्यप्रबन्धने, उद्योगप्रबन्धने, व्यापारप्रबनस्य महती आवश्यकता अस्ति तस्य विना कोऽपि कुत्रपि प्रबन्धनस्य सफलतायाः कल्पना न क्रियते।

---

१. अमर उजाला, समाचारपत्र, भाग– आनन्द दिनांक १४/१०/२००७

RNI No MP BIL 01034 / 12 / 1 / 2005 - TC
REGISTRAR OF NEWS PAPERS IN INDIA, GOVT. OF INDIA

ISSN 0973-3914
9770973391009

JOURNAL OF
Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802,Year-1997
www.researchjournal.in

Editor : Prof. Braj Gopal, Printed and Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications, 41/42 Raghuwans Sadan, Bichhiya, Rewa, 486001 (MP) and Printed at Yuvraj Press, Ghoghar, Raniganj, Rewa 486001 (MP)